

**IMPACT  
FACTOR**  
7.012

Year 17 (01) Vol. XXXII  
February 2026

ISSN : 0976-8149  
UGC List No. 48216  
I.S.O. 9001-2015

DOI : 10.5281/19369752

# Manglam

Half Yearly Journal of Humanities & Social Sciences

# मङ्गलम्

मानविकी एवं समाज विज्ञान की अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका

A Peer Reviewed 'Refereed' Journal



**Editor**  
**Dr. Dinkar Tripathi**

---

**Manglam Sewa Samiti, Prayagraj (U.P.) India**  
**(Regd. Under Society Registration Act 21, 1860)**

**सम्पादक :**

**प्रो०(डॉ०) दिनकर त्रिपाठी**

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग  
फीरोज़ गाँधी कॉलेज, रायबरेली-229001 (उ.प्र.) भारत  
1304/A आचार्य द्विवेदी नगर, जेल रोड, रायबरेली-229001 (उ.प्र.) भारत  
मो० : 91-7398180008  
Email : prof.dinkartripathi@gmail.com

**सह सम्पादक :**

**डॉ० ऋतेश त्रिपाठी**

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग  
सी.एम.पी. कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत  
शिवम् अपार्टमेन्ट, नया ममफोर्डगंज, प्रयागराज-211002 (उ.प्र.) भारत  
मो० : 91-9532006658  
Email : tripathiritesh82@gmail.com

**प्रकाशक :**

**मङ्गलम् सेवा समिति**

मो० : 91-9044666672  
Website : www.manglamallahabad.com  
Email : manglamjournal01@gmail.com

**तकनीकी सहयोग :**

**डॉ० (श्रीमती) वंदना त्रिपाठी**

मो० : 91-7398180009  
Email : tripathivandana01@gmail.com

**आवृत्ति : अर्द्धवार्षिक**

प्रथम अंक : फरवरी

द्वितीय अंक : अगस्त

**मूल्य :**

विदेश में : \$13

देश में : **Rs. 1000**

मङ्गलम् (अर्द्धवार्षिक द्विभाषीय) शोध पत्रिका में प्रकाशित सामग्री में दृष्टि, विचार और अभिमत लेखकों के अपने हैं, सम्पादक के नहीं। इनमें सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। अतः पत्रिका के सम्पादक एवं प्रकाशक पर इसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है। विवाद माननीय न्यायालय प्रयागराज में ही विचारणीय होंगे।

## PATRONS

- **Prof. P.C. Trivedi**, Ex. Vice Chancellor, Jay Narayan Vyas University, Jodhpur (Rajasthan)
- **Prof. Manoj Dixit**, Vice Chancellor, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner (Rajasthan)
- **Prof. D.P. Tiwari**, Vice Chancellor, Jai Minesh Adivasi University, kota, (Rajasthan)
- **Prof. Sri Prakash Mani Tripathi**, Ex-Vice Chancellor, Indira Gandhi National Tribal University Amarkantak (M.P.)
- **Prof. Sanjeev Kumar Sharma**, Ex. Vice Chancellor, Mahatma Gandhi Central, University of Bihar, Motihari (Bihar)
- **Prof. Suresh Chandra Pandey**, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. Ram Hit Tripathi**, Ex. Principal, Pt. Mahadev Shukla Krishak Post Graduate College Gaur, Basti (U.P.)
- **Prof. R.N. Tripathi**, Member, Uttar Pradesh Public Service, Commission, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. Umesh Prasad Singh**, Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
- **Prof. Ramjee Tiwari**, University of Mumbai, Mumbai (Maharashtra)
- **Prof. A.K. Kaul**, Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
- **Prof. A.K. Srivastav**, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)

## EDITORIAL BOARD

- **Prof. Rama Shankar Mishra**, University of Lucknow (U.P.)
- **Prof. Rajendra Singh Chauhan**, Himachal Pradesh University Shimla (Himachal Pradesh)
- **Prof. Anand Kumar Srivastav**, Ex. Principal, CMP College, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Diwakar Tripathi**, Dr. Rammanohar Lohia Awadh University, Ayodhya (U.P.)
- **Dr. Ritesh Tripathi**, C.M.P. Degree College, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. Noor Mohammad**, University of Delhi, Delhi

- **Prof. R.K. Mishra**, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)
- **Prof. Geeta Tripathi**, Ganpat Sahai P.G. College, Sultanpur, Dr. Rammanohar Lohia Awadh University, Ayodhya (U.P.)
- **Prof. Lokesh Tripathi**, Baba Raghav Das PG College Deoria, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.)
- **Dr. Bhasker Shukla**, Hemwati Nandan Bahuguna Government P.G. College Naini, Prof. Rajendra Singh (Rajju Bhaiya) State University, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. Arun Kumar Singh**, DAV College, Maharaja Suhel Dev University, Azamgarh, U.P.
- **Dr. Vandana Tripathi**, Basic Education Board, Raebareli (U.P.)
- **Dr. Bharti Sehta**, Bahabasaheb Bhimrao Ambedkar Bihar University Bihar

#### **ADVISORY BOARD**

- **Prof. Anand Prakash Tripathi**, Dr. Hari Singh Gour University, Sagar (Madhya Pradesh)
- **Prof. K.K. Pandey**, Ex. Principal, DAV College Lucknow (U.P.)
- **Prof. R.S. Aadha**, Jai Narayan Vyas University, Jodhpur, (Rajasthan)
- **Prof. Nagendra Pratap Chauhan**, B.R.A. Bihar University, Muzaffarpur, (Bihar)
- **Prof. Anupam Sharma**, Dr. Hari Singh Gaur University, Sagar, (M.P.)
- **Prof. Ravindra Kumar Sharma**, Kurukshetra University, Haryana
- **Prof. Mamta Mani Tripathi**, Udit Narayan P.G. College, Kushinagar, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.)
- **Prof. Meera Pal**, Uttar Pradesh Rajshree Tandon Open University, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Shyam Prasad Saidal**, Bal Kumari Mahavidyalaya, Narayangarh, Chitwan, (Nepal)
- **Dr. Digvijay Nath Rai**, Agra College, Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra (U.P.)
- **Dr. Joydeb Garal**, University of Chittagong (Bangladesh)
- **Dr. Sanjay M. Wagh**, S. Gholap Arts Science & G. Pawar Commerce College, Shivle, University of Mumbai, Mumbai (Maharashtra)
- **Dr. Mohd. Younes Bhat**, Government Degree College Kulgam, University of Jammu (J & K)
- **Dr. Sheelam Bharti**, Mata Sundari College for Women University of Delhi, Delhi
- **Dr. Reena**, Vaish College, Choudhary Bansi Lal, Bhiwani, Haryana

## सम्पादकीय

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में अशान्ति, मन और असुरक्षा की स्थिति उत्पन्न होती जा रही है। बलशाली एवं सम्पन्न राष्ट्र अपनी साम्राज्यवादी नीति का दुर्नीति पूर्वक अनुप्रयोग करने की चेष्टा में संलग्न हैं। सम्पूर्ण विश्व, तनाव, असहिष्णुता तथा युद्ध की विभीषिका से सन्त्रस्त हो रहा है। चाहे रूस और यूक्रेन हो, पाकिस्तान-भारत, पाकिस्तान तालिवान अमेरिका वेनेजुला, अमेरिका ईरान, ईरान इजरायल के युद्ध हों, अथवा नेपाल और बंगाल देश के छात्र आन्दोलन हों, ये सभी अशान्ति के दंश से पीड़ित हैं। मानवता के प्रति असहिष्णुता बढ़ रही है। मानवाधिकारों का हनन हो रहा है। बल प्रयोग पूर्वक राष्ट्रध्यक्षों को अपदस्त कर उन्हें कैद कर लेना, सत्ता च्युत कर देना जैसे क्रियाकलाप अनेक देशों में देखा जा रहा है। युद्धों की दीर्घावधि से जनधन की हानि, प्रदूषण प्रसरण, अशान्ति और भय का असीमित वातारण बनता जा रहा है। अमेरिका और इजाराइल का ईरान पर किया गया आक्रमण इसी का ज्वसन्त उदाहरण है जिसमें निर्दोष बच्चियों, वृद्धों और युवा वर्ग की हत्याएँ, शासक और उच्च पदस्थ राजनयिकों सहित अकूत सम्पत्तियों का विनाश कर दिया जा रहा है। कोई किसी से कम नहीं का प्रयोग चल पड़ा है। प्रतिस्पर्धायें संघर्ष का रूप ले रही हैं। इन युद्धों का न केवल युद्धरत देशों पर विनाशकारी प्रभाव पड़ रहा है अपितु सम्पूर्ण पृथ्वी तत्व के सभी राष्ट्र और जनमानस कुप्रभावित हो रहे हैं। वर्तमान में ऊर्जा, गैस, तेल और मानव संसाधनों का अभाव प्रायः प्रत्येक देश झेल रहा है, शान्ति की ओर ठोस कदम नहीं उठाए जा सके हैं। परिणामतः लाकडाउन जैसी स्थिति अनेक देशों में उत्पन्न होने वाली है। पूरे विश्व का मानव, सहित सभी जीवजन्तु पूर्णतया प्रभावित हो रहे हैं। ईश्वर की अनुकम्पा मिले, जिससे सद्बुद्धि का विकास हो सहिष्णुता उत्पन्न हो। परस्पर सभी राष्ट्र और प्रगति की ओर उन्मुख हों।" ऐसी शुभ कामना करता हुआ "मंगलम" अपनी सदिच्छा व्यक्त करता है।

मंगलम रिसर्च जर्नल का यह वर्ष 17(01) अंक- XXXII, फरवरी 2026 का अंक सुधीजनों/अन्वेषकों के गवेषणात्मक भाव विचारों को सहर्ष प्रस्तुत करते हुए विज्ञानों और अध्येताओं से शुभ सुझावों की अपेक्षा करता है।



(प्रो० दिनकर त्रिपाठी)

सम्पादक



*Late Mrs. Shobha Tripathi*

*To my mother, whose love and guidance  
continue to inspire me, even beyond this  
world. (01-10-1956 - 09-12-2024)*

## विषयानुक्रम

क्र.सं.	शोधपत्र / शोधार्थी	पृष्ठ
1.	<b>India-Japan Relations in the Modi Era: Trends and Future Directions</b> <i>- Dr. Chitta Ranjan Malik</i>	01-16
2.	<b>Floods, Development and Governance in Bihar</b> <i>- Dr. Ruchi Shree</i>	17-23
3.	<b>Beyond Rights: Fundamental Duties and the Ethical Foundations of Pluralism in India</b> <i>- Dr. Bharti Sehta</i>	24-33
4.	<b>Consumer behaviour towards breakfast cereals in tier 1 and tier 2 cities with specific reference to cereals</b> <i>- Vidya Shaji L.</i>	34-45
5.	<b>Indo-US Trade War and Its Implications for the Indo-Pacific Economic Order</b> <i>- Dr. Nikita Raj</i>	46-54
6.	<b>Quality of Life of adolescences in relation to extroversion-introversion</b> <i>- Monika Ranjan</i>	55-61
7.	<b>Influence of Jewellery Advertisement in the Purchase Behavior</b> <i>- Dr. Prabhavathy C.</i>	62-68
8.	<b>Salient Features of Buddhism as a Religion</b> <i>- Dr. Pawan Kumar Yadav</i>	69-77
9.	<b>Triangular Dynamics : Nepal, India and China in South Asian Geopolitics</b> <i>- Shivangi</i>	78-84
10.	<b>मध्यकालीन भारत का मौन इतिहास : उपेक्षित वर्ग का अप्रकट सामाजिक यथार्थ</b> <i>- प्रो. (डॉ.) अरुण कुमार सिंह</i>	85-91
11.	<b>भारतीय राजनीति में भाषावाद और समकालीन चुनौतियाँ</b> <i>- डॉ. दिग्विजय नाथ राय</i>	92-97

12. अकाल और उसके बाद : जीवन का सूक्ष्म निरीक्षण 98-103  
- डॉ. नियति कल्प
13. आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा की भूमिका 104-110  
- डॉ. लाल बहादुर राम
14. लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में न्यायिक पुनर्विलोकन की भूमिका एवं महत्त्व 111-120  
- डॉ. राजदेव सिंह
15. आर्द्रभूमि का पारिस्थितिक महत्व, चुनौतियाँ एवं संरक्षण 121-128  
- डॉ. हनी मिश्रा
16. प्राथमिक शिक्षा स्तर पर निर्धनता का शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन 129-135  
- डॉ. रीना
17. भारत में गठबंधन की राजनीति : एक विश्लेषणात्मक अवलोकन 136-142  
- डॉ. नरेन्द्र भारती
18. रोजगार के क्षेत्रों में दृष्टिबाधित शिक्षकों की परेशानियाँ एवं चुनौतियाँ 143-148  
- डॉ. निभा कुमारी
19. गठबंधन सरकार में क्षेत्रीय दलों की भूमिका : भारतीय राजनीति का संरचनात्मक परिवर्तन 149-157  
- सुषमा कुमारी, डॉ. हरिशचंद्र प्रसाद यादव
20. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मातृभाषा में शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में 158-163  
- यादव शशिकला कैलाश

# India–Japan Relations in the Modi Era: Trends and Future Directions

Dr. Chitta Ranjan Malik \*

## *Abstract*

*India-Japan relations have grown into a multifaceted strategic partnership that includes people-to-people connections, infrastructure development, economic engagement, and security cooperation since Narendra Modi took office in 2014. In addition to ambitious infrastructure projects, expanded trade and investment frameworks, and collaboration on emerging technologies, Modi's leadership has reoriented bilateral ties towards shared strategic goals in the Indo-Pacific. This essay explores the major developments in India-Japan relations under Modi, evaluates the partnership's strengths and weaknesses, and suggests future directions for long-term cooperation in a shifting geopolitical landscape. According to the analysis, the relationship has developed from transactional engagement into a comprehensive strategic and global partnership with opportunities to impact regional architecture and tackle issues related to global governance.*

**Keywords:** *Economic Cooperation, Future Directions, Indo-Pacific, Modi Era, Strategic Partnership.*

## **Introduction**

India-Japan relations have become one of the most important bilateral alliances in the Indo-Pacific area, especially since Narendra Modi took office in 2014. Despite the fact that the two nations have had diplomatic relations since 1952, the Modi administration has brought about a qualitative change in their relationship, which is marked by institutionalised cooperation, strategic depth, and a common vision for regional and global governance. Bilateral relations have been elevated to a "Special Strategic and Global Partnership" due to shared concerns about regional security dynamics, economic complementarities, and convergent interests based on democratic values (Panda, 2019; Jain, 2021). India-Japan strategic convergence has been further strengthened by the shifting geopolitical landscape, which is characterised by the rise of China, uncertainties in the

---

\* Assistant Professor, Political Science, Maa Manikeshwari University (Erstwhile-Kalahandi University), Bhawanipatna, Kalahandi, Odisha

global order, supply chain disruptions, and the growing importance of the Indo-Pacific. Both nations support an Indo-Pacific that is Free, Open, Inclusive, and Rules-Based, with a focus on respect for international law, freedom of navigation, and peaceful conflict resolution (MOFA Japan, 2023; Ministry of External Affairs [MEA], 2024). Deeper collaboration in fields like defence exchanges, maritime security, and multilateral frameworks like the Quadrilateral Security Dialogue (Quad) has resulted from this normative alignment.

Japan has emerged as one of India's most important economic development partners. Large-scale infrastructure projects, like the Mumbai–Ahmedabad High-Speed Rail Project, represent Japan's sustained dedication to India's development path (Jain, 2020). Japanese investment in manufacturing, digital technologies, clean energy, and robust supply chains has been made possible by India's domestic initiatives, including Make in India, Digital India, and Atmanirbhar Bharat (Panda & Basu, 2022). These developments point to a change in engagement from aid-centric to co-development and co-creation-based partnerships. At the political level, bilateral cooperation has accelerated due in large part to Prime Minister Narendra Modi's personal rapport with successive Japanese leaders, especially Shinzo Abe. Through yearly summits, joint statements, and sector-specific discussions, their common focus on strategic trust, connectivity, and regional stability aided in institutionalising cooperation (Jain, 2018). The strategic momentum has continued even after Abe's departure, highlighting the partnership's structural depth that goes beyond individual leadership.

### **Evolution of Bilateral Ties under Modi**

Under Prime Minister Narendra Modi, India-Japan relations have undergone a significant transition from cautious engagement to strategic consolidation and international partnership. Although the groundwork for cooperation was established in previous decades, since 2014, there has been unheard-of political momentum, institutional strengthening, and thematic expansion in the areas of diplomacy, security, and the economy.

#### **1. Political Leadership and Strategic Vision**

Strong political leadership and personal diplomacy have been hallmarks of bilateral relations during the Modi era. Cooperation was accelerated thanks in large part to Prime Minister Modi's close relationship with former Japanese Prime Minister Shinzo Abe. A strategic worldview that

prioritised democratic principles, the rule of law, and the necessity of maintaining power balance in Asia was shared by both leaders (Jain, 2018; Panda, 2019). The "Special Strategic and Global Partnership" was reaffirmed as a result of this convergence, indicating that India-Japan relations had expanded beyond bilateral interests to include regional and global issues. Annual summit meetings were formalised as a crucial coordination tool, and high-level engagements increased in frequency and substance. These summits enabled prompt decision-making, long-term planning, and the introduction of flagship projects in the fields of technology, infrastructure, and defence (MOFA Japan, 2023). Crucially, the fact that this involvement persisted after Abe left shows that the partnership is no longer personality-driven but rather has taken on a structural and institutional character.

## **2. Strategic and Security Deepening**

A key component of evolving bilateral relations has been strategic convergence. India and Japan greatly increased their cooperation in defence exchanges, regional security discussions, and maritime security under Modi. Concerns about the shifting Asian power dynamics are shared by both nations, especially in light of China's assertive actions in the East and South China Seas and along India's continental and maritime borders (Panda & Basu, 2022). Regular joint military drills, naval exchanges, and defence discussions have advanced defence cooperation. Despite not having a formal military alliance, India and Japan's cooperation shows an increasing degree of interoperability and trust. With a focus on maritime security, humanitarian aid, disaster relief, and regional stability, their involvement in the Quadrilateral Security Dialogue (Quad) alongside the US and Australia has further institutionalised security cooperation (Jain, 2021).

## **3. Economic Engagement and Development Partnership**

In terms of the economy, the Modi era signalled a shift from a relationship that was primarily aid-based to one that was centred on investment, co-development, and industrial cooperation. Although Japan continues to be one of India's main suppliers of Official Development Assistance (ODA), this aid is increasingly in line with strategic economic goals like connectivity, infrastructure modernisation, and sustainable development (Jain, 2020). This evolution is exemplified by flagship projects like the Mumbai–Ahmedabad High-Speed Rail Corridor. The project represents long-term strategic trust, skill development, and technology transfer in addition to its economic significance. In line with Indian

initiatives like Make in India and Atmanirbhar Bharat, Japanese investments have also increased in manufacturing, automobiles, electronics, renewable energy, and digital infrastructure (Panda, 2019).

#### **4. Institutionalization and Multilateral Synergy**

The development of institutional mechanisms has been another significant aspect of bilateral evolution. Sustained engagement across policy domains has been made possible by sector-specific forums, ministerial dialogues, and joint working groups. These systems guarantee continuity, minimise implementation gaps, and enable flexible solutions to new problems. In international forums like the UN, G20, East Asia Summit, and ASEAN-led mechanisms, India and Japan have taken more coordinated stances. A common dedication to multilateralism and inclusive regional architecture is demonstrated by their cooperation in establishing Indo-Pacific norms and assisting regional connectivity projects (MEA, 2024).

#### **Economic and Infrastructure Cooperation**

One of the strongest and most obvious pillars of India-Japan relations in the Modi era is economic and infrastructure cooperation. The bilateral economic partnership has changed under Prime Minister Narendra Modi from a conventional donor-recipient framework to a strategic development partnership with an emphasis on sustainable infrastructure development, long-term investment, and industrial cooperation. India's growth aspirations and developmental priorities are closely aligned with Japan's technological know-how, financial might, and experience in building high-quality infrastructure.

##### **1. Trade and Investment Relations**

Japan is one of India's most important economic partners, especially when it comes to development finance and foreign direct investment (FDI). Increasing trade volumes, diversifying investment portfolios, and encouraging Japanese companies to engage in India's manufacturing and services sectors have all received more attention since 2014. Japanese investment in India has steadily increased, particularly in automobiles, electronics, pharmaceuticals, and industrial machinery, despite the fact that bilateral trade levels are still low in comparison to potential (Jain, 2020; Panda, 2019). In the midst of global supply chain realignments, India's flagship initiatives like Make in India, Digital India, and Atmanirbhar Bharat have created a favourable policy environment for Japanese companies

looking for alternative production bases. Japanese-backed special economic zones and industrial corridors, like the Delhi-Mumbai Industrial Corridor (DMIC), have become important hubs for technology transfer and manufacturing integration (Panda & Basu, 2022).

## **2. Official Development Assistance and Quality Infrastructure**

Japan has continuously been India's biggest bilateral donor of Official Development Assistance (ODA), which is essential for funding infrastructure. In contrast to traditional aid, Japanese ODA during the Modi administration has been strategically focused on initiatives that improve productivity, connectivity, and long-term economic resilience. This strategy emphasises sustainability, efficiency, safety, and life-cycle cost effectiveness, reflecting Japan's support for "quality infrastructure" (Jain, 2018). Major projects in urban transport, energy production, water supply, sanitation, and environmental management have all benefited from Japanese ODA. Metro rail initiatives in places like Chennai, Bengaluru, and Delhi are prime examples of how Japanese support has integrated cutting-edge technology and management techniques into Indian systems while promoting sustainable urban mobility (MOFA Japan, 2023).

## **3. Flagship Infrastructure Projects**

The Mumbai-Ahmedabad High-Speed Rail (MAHSR) project, which uses Japanese Shinkansen technology, is the most notable example of infrastructure cooperation between India and Japan. Beyond its economic importance, the project symbolises the two nations' strong strategic trust, sustained dedication, and technological cooperation (Jain, 2021). It also acts as a template for future cooperation in advanced engineering, skill development, and high-speed transportation. Japan has been actively involved in the construction of ports, logistics networks, smart cities, and industrial corridors in addition to high-speed rail. These programs seek to lower transaction costs, improve regional connectivity, and link Indian manufacturing to international value chains. The strategic aspect of infrastructure cooperation is further highlighted by Japan's involvement in India's Northeast development projects, which connect regional connectivity in South and Southeast Asia with domestic development (Panda, 2019).

## **4. Emerging Areas: Digital, Green, and Resilient Infrastructure**

Economic cooperation has spread into developing and forward-thinking industries in the latter part of the Modi administration.

Collaboration in digital infrastructure, artificial intelligence, semiconductors, clean energy, and green technologies has become a top priority. The commitments of both nations to sustainable development and climate action are in line with cooperative projects in hydrogen technology, renewable energy, and climate-resilient infrastructure (Panda & Basu, 2022).

### **Strategic and Security Cooperation**

Economic cooperation has spread into developing and forward-thinking industries in the latter part of the Modi administration. Collaboration in digital infrastructure, artificial intelligence, semiconductors, clean energy, and green technologies has become a top priority. The commitments of both nations to sustainable development and climate action are in line with cooperative projects in hydrogen technology, renewable energy, and climate-resilient infrastructure (Panda & Basu, 2022).

#### **1. Indo-Pacific Convergence and Maritime Security**

Under Prime Minister Narendra Modi, India and Japan's strategic cooperation is characterised by their shared Indo-Pacific vision. With a focus on freedom of navigation, respect for international law, especially the United Nations Convention on the Law of the Sea (UNCLOS), and peaceful dispute resolution, both nations support a Free, Open, Inclusive, and Rules-Based Indo-Pacific (FOIP) (MOFA Japan, 2023; MEA, 2024). With an emphasis on maritime domain awareness, anti-piracy operations, and sea lane protection, maritime security cooperation has grown dramatically. Given India's advantageous location in the Indian Ocean and Japan's reliance on sea lines of communication (SLOCs), maritime cooperation promotes both economic and security goals. The two maritime forces now have more operational familiarity and trust thanks to frequent naval drills, port calls, and coordinated patrols. (Jain, 2021).

#### **2. Defense Dialogues and Military Cooperation**

Defence and security discussions have been institutionalised at several levels under the Modi administration, including ministerial, bureaucratic, and service-specific exchanges. Long-term defence planning, threat assessment, and policy coordination are made easier by these mechanisms. Growing interoperability and strategic confidence are demonstrated by the increasing complexity and frequency of joint military exercises, especially naval drills like JIMEX (Japan–India Maritime Exercise) (Panda, 2019). Additionally, defence cooperation has grown to

include logistical coordination, defence technology, and capacity building. Discussions on cooperative development and technology transfer show an aspiration to go beyond symbolic engagement towards substantive cooperation, despite the slow progress in defence equipment collaboration (Jain, 2020).

### **3. The Quadrilateral Security Dialogue (Quad)**

The Quadrilateral Security Dialogue (Quad), which includes Australia and the United States, has greatly strengthened India-Japan strategic cooperation. The Quad is a vital forum for tackling regional security issues, such as maritime security, disaster relief, cyber security, and infrastructure resilience. It was revived and elevated to leader-level summits during the Modi era (Panda & Basu, 2022). By integrating bilateral cooperation into a larger multilateral framework, the Quad enhances it for Japan and India. Participation in the Quad indicates India's willingness to engage in issue-based strategic partnerships in line with its Indo-Pacific vision, even as it retains its strategic autonomy and stays away from formal alliances. In response, Japan sees India as a vital ally in maintaining a stable maritime order and balancing regional power dynamics (Jain, 2021).

### **4. Economic Security and Supply Chain Resilience**

In recent years, supply chain resilience and economic security have been added to the traditional military concerns of strategic cooperation. The vulnerabilities of overly concentrated supply chains were brought to light by disruptions brought on by international crises and geopolitical tensions. In response, Japan and India started efforts to diversify their production networks, especially in vital industries like advanced manufacturing, semiconductors, and pharmaceuticals (Panda & Basu, 2022). These initiatives are a reflection of a more comprehensive view of security that incorporates technological independence, strategic resilience, and economic stability. Cooperation in this area highlights how India-Japan security cooperation has changed under the Modi administration.

### **5. Strategic Limits and Balancing Considerations**

Strategic and security cooperation is constrained despite substantial convergence. The extent and depth of defence cooperation are shaped by Japan's constitutional and internal political limitations as well as India's tradition of strategic autonomy. Furthermore, in an increasingly complex regional environment, both nations must balance their interactions with other

major powers, especially China and the US (Jain, 2018). However, these limitations have not prevented consistent advancement. Rather, they have promoted a practical and gradual approach to strategic collaboration, focussing on adaptability, developing trust, and issue-based alignment.

### **People-to-People and Cultural Bridges**

The social basis of India-Japan relations is people-to-people and cultural exchanges, which have received more attention in the Modi era. The development of societal, cultural, educational, and human resource connections is what gives bilateral ties their durability and depth, even though strategic and economic cooperation gives the partnership structural strength. Acknowledging this, both governments have made grassroots involvement and soft-power diplomacy a higher priority as essential elements of their all-encompassing partnership.

#### **1. Historical and Cultural Affinities**

Long-standing cultural ties between India and Japan stem from Buddhism, philosophical discussions, and interactions between civilisations. Japanese society has a favourable opinion of India as a result of these historical ties, and vice versa. Through cultural diplomacy, such shared heritage has been actively utilised in the Modi era through exhibitions, scholarly conferences, and commemorative events that highlight civilisational ties (Jain, 2018). Even in times of geopolitical unpredictability, this cultural foundation serves to maintain bilateral goodwill.

#### **2. Educational and Academic Exchanges**

One of the most important pillars of interpersonal engagement is educational cooperation. Particularly in the fields of science, technology, engineering, humanities, and social sciences, universities and research institutions in both nations have increased student exchange programs, cooperative research projects, and academic partnerships. A mutually beneficial environment for knowledge exchange has been established by Japan's need for international academic partnerships and India's increasing emphasis on higher education reforms (Panda, 2019). Initiatives to advance Japanese language instruction in India have also received support from the Modi administration, which acknowledges language competency as a vital facilitator of deeper engagement. On the other hand, there has been a resurgence of interest in South Asian research programs and Indian studies

in Japan, which has led to increased scholarly comprehension and intellectual interchange.

### **3. Human Resource Mobility and Skill Partnerships**

The two nations' complementary demographics have made human resource cooperation strategically significant in recent years. Opportunities for structured mobility partnerships arise from the contrast between India's young workforce and Japan's ageing population and labour shortages. Bilateral agreements have made it easier for Indian professionals and skilled workers to relocate to Japan during the Modi administration in industries like manufacturing, services, healthcare, and information technology (Panda & Basu, 2022). The goal of skill development initiatives, such as collaborative training programs and certification frameworks, is to improve employability while guaranteeing the seamless integration of Indian employees into Japanese workplaces. These programs also support cross-cultural education and technology transfer, fostering enduring interpersonal relationships.

### **4. Cultural Diplomacy and Tourism**

Increasing mutual visibility and awareness has been greatly aided by cultural diplomacy. While programs like Japan-India tourism campaigns have promoted travel and social interaction, festivals, movie screenings, yoga events, and art exhibitions have increased cultural outreach. These efforts have been successful, as evidenced by the popularity of Indian culture in Japan—from food to spiritual practices—and the rising interest in Japanese culture in India (Jain, 2020). Improved connectivity and favourable visa regulations have also benefited tourism cooperation, fostering informal cross-cultural communication and understanding in addition to economic exchange.

### **5. Civil Society and Sub-National Linkages**

In addition to state-led programs, business associations, sub-national governments, and civil society organisations have become more crucial in promoting interpersonal relationships. Business-to-business networks, prefecture-state partnerships, and sister-city agreements all promote practical cooperation and localised engagement. By varying the actors and levels of interaction involved, these decentralised connections strengthen bilateral ties (Panda, 2019).

## **Challenges and Limits**

The bilateral partnership is not without structural, strategic, and operational challenges, even though India-Japan relations have significantly deepened under the Modi administration. Although they influence the relationship's pace, scope, and future course, these constraints do not diminish its strength. Understanding the limitations of India-Japan cooperation requires a realistic evaluation of these difficulties.

### **1. Trade Imbalances and Limited Economic Depth**

The limited scope of bilateral trade in comparison to the size and potential of both economies is one of the ongoing issues in India-Japan relations. India still has a trade deficit with Japan, despite a steady increase in Japanese investment (Jain, 2020). Trade volumes are still below expectations. Deeper economic engagement has been hampered by structural factors like regulatory framework differences, non-tariff barriers, and the limited integration of Indian companies into Japanese supply chains. Furthermore, because of worries about infrastructure bottlenecks, policy uncertainty, and the ease of conducting business at the subnational level in India, Japanese businesses frequently take a cautious approach to investment. Investor confidence is still impacted by the Modi government's uneven implementation of reforms, even though some of these issues have been addressed (Panda & Basu, 2022).

### **2. Implementation Gaps in Infrastructure Projects**

Large-scale projects have experienced delays and cost increases despite the extensive infrastructure cooperation between Japan and India. For instance, the Mumbai–Ahmedabad High-Speed Rail project has faced difficulties with obtaining land, obtaining environmental clearances, and coordinating with various stakeholders (Jain, 2021). Delays like these run the risk of damaging public opinion and slowing the pace of upcoming joint projects. These implementation difficulties show how the two nations' project management approaches and administrative cultures differ. India's complicated federal structure and procedural delays can make execution more difficult, whereas Japan places a strong emphasis on accuracy, predictability, and long-term planning.

### **3. Strategic Constraints and Balancing Imperatives**

Each nation's unique strategic traditions and limitations influence strategic cooperation between Japan and India. Even with close allies like

Japan, India's long-standing commitment to strategic autonomy restricts its ability to participate in alliance-like security agreements. As a result, rather than being overtly military, India's involvement in organisations like the Quad is still cautious and issue-based (Jain, 2018). Despite slow changes in its security posture, Japan, for its part, still operates under domestic political and constitutional restrictions on the use of military force. The extent of defence cooperation is constrained by these factors, especially in delicate areas like joint military deployments or defence exports.

#### **4. Managing China and Regional Sensitivities**

India-Japan strategic convergence is largely driven by China's rise and assertive regional behaviour, but they also pose a difficult balancing challenge. Due to their strong economic ties to China, both Japan and India must carefully balance their strategic engagement. India continues to pursue a multi-aligned foreign policy that stays away from strict bloc politics, while Japan has taken a more overt balancing approach (Panda, 2019). Divergences in policy emphasis can occasionally result from differences in threat perception and regional priorities, especially when it comes to East Asian versus South Asian security concerns.

#### **5. Societal and Cultural Barriers**

People-to-people connections are growing at the societal level, but they are still not as extensive as India's interactions with Western nations. Broader social interaction is hampered by linguistic and cultural barriers as well as a lack of mutual awareness at the local level. Furthermore, cultural adaptation, workplace norms, and social inclusion present obstacles to Indian workers' assimilation into Japanese society (Panda & Basu, 2022).

### **Future Directions**

In response to a rapidly shifting regional and global environment, strategic adaptation, economic innovation, and societal deepening will shape the future trajectory of India-Japan relations as they enter a more mature phase. Both nations are in a strong position to advance their relationship from a bilateral strategic partnership to a crucial pillar of Indo-Pacific and global governance, building on the successes of the Modi era.

#### **1. Deepening Strategic and Security Cooperation**

The integration of security and strategic cooperation is one of the most important future paths. With a focus on maritime security, freedom of navigation, and respect for international law, India and Japan are probably

going to further align their Indo-Pacific strategies. Without jeopardising India's strategic autonomy, improved naval drills, information-sharing systems, and collaboration in maritime domain awareness can improve deterrence and regional stability (Jain, 2021). A flexible framework for collaboration in fields like cyber security, disaster relief, humanitarian aid, and regional capacity building will continue to be offered by multilateral platforms like the Quadrilateral Security Dialogue (Quad). The Quad is anticipated to stay an issue-based coalition rather than develop into a formal alliance, in line with Japan's constitutional limitations and India's non-aligned strategic culture (Panda & Basu, 2022).

## **2. Economic and Technological Partnership for the Future**

Future-focused and technology-intensive industries are likely to see a shift in economic cooperation. In order to improve economic competitiveness and strategic autonomy, collaborative efforts in artificial intelligence, semiconductors, digital public infrastructure, space technology, and cybersecurity will be crucial. Strong complementarities for co-development and innovation are provided by the technological know-how of Japan and the size and human capital of India's market (Panda, 2019). Furthermore, collaboration in supply chain resilience will continue to be a top priority, especially in critical minerals, pharmaceuticals, and advanced manufacturing. These programs are in line with larger international initiatives to guarantee economic security in an unpredictable geopolitical environment and lessen production network vulnerabilities.

## **3. Infrastructure and Connectivity beyond Bilateralism**

It is anticipated that future infrastructure cooperation will go beyond India's internal development to include regional and third-country connectivity projects, especially in Africa, South Asia, and Southeast Asia. Japan and India have already shown interest in working together to develop infrastructure that upholds the values of sustainability, transparency, and local capacity building (Jain, 2020). Such collaboration can strengthen common standards in regional development and offer a viable substitute for debt-driven infrastructure models. The strategic visibility of the India-Japan partnership at the regional level is also improved by joint infrastructure projects.

## **4. Climate Action and Sustainable Development**

Environmental sustainability and climate change are probably going to become fundamental pillars of future collaboration. Cooperation in green

hydrogen, electric vehicles, renewable energy, and climate-resilient infrastructure is in line with both countries' domestic policy priorities and international climate commitments. Opportunities for significant collaboration are created by India's deployment scale and Japan's technological leadership in clean energy (Panda & Basu, 2022). This aspect of the partnership can be further strengthened by collaborative research and development in sustainable urban systems and climate technologies.

### **5. Expanding People-to-People and Knowledge Networks**

Strengthening people-to-people ties will be essential to the long-term viability of India-Japan relations. It will be crucial to increase professional mobility, research collaboration, and educational exchanges. Joint degree programs, skill certification, and organised student exchange programs can improve understanding and create a common body of knowledge (Jain, 2018). Increased language instruction and cultural outreach can lower barriers to communication and promote grassroots connectivity at the societal level. By taking these steps, the partnership will be socially embedded and resistant to changes in the political or economic landscape.

### **Conclusion**

India–Japan relations in the Modi era represent a significant evolution in bilateral diplomacy, marking the transition from a largely economic and aid-driven relationship to a comprehensive strategic and global partnership. Since 2014, political leadership, strategic convergence, and institutional depth have collectively transformed the nature of engagement between the two democracies. The elevation of ties reflects not only mutual trust but also a shared recognition of the changing geopolitical and economic landscape of the Indo-Pacific. This paper's analysis shows that India and Japan have increased their cooperation in a number of areas under Prime Minister Narendra Modi, including infrastructure and economic development, strategic and security cooperation, people-to-people exchanges, and emerging technologies. The tangible results of this partnership are symbolised by flagship projects like high-speed rail, industrial corridors, and defence dialogues, and its regional and global significance is highlighted by multilateral engagement through platforms like the Quad. Crucially, the relationship has developed into one that is backed by strong institutional mechanisms rather than personality-driven diplomacy.

Strategic and structural limitations, such as trade imbalances, implementation difficulties, and the need for careful balancing in a complex regional environment, also shape the partnership. However, these difficulties

have been handled practically, demonstrating the flexibility and adaptability of Japan-India cooperation. Such limitations have promoted incrementalism and policy innovation rather than weakening bilateral ties. In the future, India-Japan relations will be crucial in determining both global governance and regional stability. Pathways for long-term engagement are provided by strengthening collaboration in cutting-edge technologies, climate action, supply chain resilience, and human capital development. Their partnership, which is based on democratic principles, respect for one another, and a long-term vision, has the potential to become a stabilising force in the Indo-Pacific and beyond as both nations navigate a period of geopolitical uncertainty and economic transformation.

### **References**

- Jain, P. (2018). *India–Japan relations: Global and strategic dimensions*, New York: Routledge.
- Jain, P. (2020). *Japan’s development cooperation with India: From aid to strategic partnership*. *Asian Survey*, 60(4), 742–765.
- Jain, P. (2021). *The India–Japan strategic partnership and the Indo-Pacific*. *International Relations of the Asia-Pacific*, 21(2), 255–280.
- Malik, C. R. et. al. (Eds.) (2024). *Futuristic Trends in Social Sciences, IIP Series, Volume 3, Book 11, Part 2*, Karnataka: Iterative International Publishers.
- Malik, C. R. (2025). *The Role of the QUAD in Indo-Pacific Maritime Security: India and Japan’s Perspectives*, in Dr. Nazmul Hussain Laskar (eds.) *Foreign Policy of India: From Panchsheel to Panchamrit*, Delhi: Authors Press.
- Malik, C. R. (2025). *Women’s Rights in India: Challenges and Opportunities for Empowerment*, in Dr. Bijaya Ku. Behera and Dr. Ram Babu (eds.), *Public Policy and Social Justice in a Changing World: Empowering Societies by Transforming Policy into Practice*, Karnataka: Iterative International Publishers (IIP).
- Malik, C. R. (2025). *Accelerating Progress towards the SDGs in India: Research Insights and Pathways*, in Dr. K. K. A. Alaguappan, Dr. D. Sreepriya And Dr. M. Meenakshi (Eds), *International Conference (Hybrid Mode) on Research Pathways to 2030: Insights for Sustainable Development*, PCAS International Journal for Multidisciplinary Research Publication.
- Malik, C. R. (2020). “*India-Korea-Japan: Strategic Partners in Indo-Pacific Region*”, in Sushila Narsimhan and Kim Do-Young (eds.), *Understanding South Korea, Perspectives from India*, Delhi: Manak Publications Pvt. Ltd.

- Malik, C. R. (2020). "India-Japan on Sustainable Development Goals-2030: An Overview", in Inderjeet Singh Sodhi (eds.), *Works on SDGs-2030: Ideas & Innovations*, Delhi: Grassroot Empowerment and Development by Youth.
- Malik, C. R. (2019). "Indian Diasporic Literature: A Bridge between India-Japan Cultural Relations", in Jahidul Diwan (eds.) *Diaspora Literature and Indian Culture*, Delhi: Academic Publishing Network.
- Malik, C. R. (2025). "Explore the Potential of AI and Automation to Drive Economic Growth in India and Japan", *ournal of Inventive and Scientific Research Studies*; 03(4), 73-88.
- Malik, C. R. (2025). "Rationalizing Research Systems for Global Development: Lessons From India and Japan", *International Centre for Scientific Research and Development*; 10(3), 12-26.
- Malik, C. R. (2024). "Role of Transgender in Indian and Japanese Cinema Industry", *The Third Voice Reality and Vision*; 6(1), 52-55.
- Malik, C. R. (2023). "China is a Detrimental to Indo-South Korean Relations", *Omniscient*; 1(4), 1-5.
- Malik, C. R. (2023). *Socio-Economic Development of Transgender Community in India and Japan*, *The Third Voice Reality and Vision*; 5(1), 1-4.
- Malik, C. R. (2022). "Cultural Linkages between India-Japan Relations", *NAM Today*; 134/135(7/8), 41-43.
- Malik, C. R. (2022). "Impact of Epic Ramayana on Japanese Life and Culture", *NAM Today*; 129(2), 54-56.
- Malik, C. R. (2021). "India, China and Japan: A Strategic Triangle of Asia", *NAM Today*; 127(12), 14-17.
- Malik, C. R. (July-December 2019). "Japan's Relations with Korea: A Paradigm Shift in East Asian Region", *International Journal of Academic Research & Development (IJAR&D)*; 5(2), 28-32.
- Malik, C. R. (2018). "Japan's Assistance to India for Odisha's Forestry Sector Development", *Research Chronicler*; 6(12): 25-30.
- Malik, C. R. (2018). "Changing Dynamics of Japan-Australia Relations in the Asia-Pacific Region", *NAM Today*; 91(12): 17-18.
- Malik, C. R. (2018). "Japan's Official Development Assistance (ODA) to India for Elimination of HIV/AIDS", *NAM Today*; 84(5): 17-19.
- Malik, C. R. (2018), "Ethnic Conflict in Sri Lanka: A Role of Japan's Economic Assistance for Development", *NAM Today*; 81(2): 18-22.
- Malik, C. R. (2018), "India-Vietnam-Japan: A Triangular Dimensional Relations in the Asia-Pacific Region", *NAM Today*; 80(1): 67-71.

- Malik, C. R. (2017). "India-Pakistan Conflict over Pak Occupied Kashmir: The role of Japan", *NAM Today*; 76(9): 19-23.
- Malik, C. R. (2017). "Japan's Humanitarian Aid to India for Eradication of Polio", *NAM Today*; 73(6): 40-42.
- Malik, C. R. (2017). "India-China-Japan: A Growing Economic Partner of Asia" *NAM Today*; 70(3): 37-41.
- Malik, C. R. (2016), "Japan's Official Development Assistance (ODA) to China" *NAM Today*, 63 (8): 19-21.
- Malik, C. R. (2016). "Socio-economic Development of Indian Plantation Workers in Sri Lanka", *NAM Today*; 61(6): 5-8.
- Malik, C. R. (2016). "Japan and ASEAN + 3: An Overview", *NAM Today*; 58(3): 2-4.
- Ministry of External Affairs. (2024). *India–Japan relations*. Government of India. <https://mea.gov.in>
- Ministry of Foreign Affairs of Japan. (2023). *Japan–India relations: Toward a free and open Indo-Pacific*. Government of Japan. <https://www.mofa.go.jp>
- Panda, J. P. (2019). *India–Japan relations: Strengthening strategic partnership*. New York: Palgrave Macmillan.
- Panda, J. P., & Basu, T. (2022). *India–Japan cooperation in the Indo-Pacific: Strategic convergence and economic security*. *Journal of Indo-Pacific Affairs*, 5(3), 45–67.
- Sahni, V. (2020). *India's Indo-Pacific strategy and Japan: Convergences and constraints*. *Strategic Analysis*, 44(6), 567–583.
- Singh, R. (2021). *Infrastructure diplomacy and India–Japan relations in the Modi era*. *Contemporary South Asia*, 29(4), 512–528.
- Wilkins, T. (2018). *The Japan–India strategic partnership: The rise of a security relationship*. *Asian Security*, 14(2), 144–163.

**Paper Received : 04 Jan. 2026**

**Paper Accepted : 15 Feb. 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

# Floods, Development and Governance in Bihar

Dr. Ruchi Shree \*

## *Abstract*

*Floods remain one of the most persistent development challenges in Bihar. They influence the agricultural productivity, infrastructure growth, and socio-economic vulnerability. Despite decades of flood control interventions and development planning, the state continues to experience recurrent and large-scale flood events almost every year. It raises questions about the effectiveness of existing approaches. This paper examines the relationship between floods and development in contemporary Bihar by situating flood risks within their historical, ecological, and policy contexts. It argues that floods in Bihar are not solely the result of natural hydrological processes but they are significantly shaped by river management strategies, land-use transformations, and development practices. The paper critically assesses the limitations of structural flood control measures and relief-oriented responses, highlighting their unintended environmental and social consequences. This article advocates for an integrated flood management framework that aligns development planning with ecological processes, emphasizes basin-level governance, and incorporates nature-based and community-centered solutions. Such an approach, the paper contends, is crucial for reducing vulnerability and enabling sustainable and resilient development in Bihar.*

**Keywords:** *Floods, Development, Bihar, Politics of Water, Governance, Flood Management*

## **Introduction**

The results of the recently held Bihar Legislative Assembly elections revealed several new and significant trends. For instance, the elections held on 6 November, 2025 recorded the highest voter turnout ever in Bihar. At the same time, the percentage of women voters was higher than that of men. Notably, both these developments are being seen as indicators of increased political awareness. Similarly, many political analysts are linking the increased participation of women to the initiatives undertaken by the Nitish

---

\* Assistant Professor, University Department of Political Science, Tilka Manjhi Bhagalpur University, Bihar

government in the interest of women. The BJP has emerged as the largest political party with ninety seats, and it is expected that this will act as a facilitating factor in accelerating development activities in Bihar in the coming days. However, what should constitute development and how it can be made not only economy-centric but also environmentally sustainable remains an important political and social issue.

In the recent election, floods were once again a major issue, and the dream of making Bihar flood-free was reiterated yet again. However, such promises have been made in the past as well, but hardly any effective steps have been taken in this direction; in other words, the steps that have been taken have not proved to be very effective. According to government data, from the 1950s to the present, embankments stretching about 3,700 kilometers have been constructed in Bihar (Prasad, 2025 a). Yet, unfortunately, instead of a reduction, the flood-affected area appears to be increasing year after year. Between 2005 and 2025, each monsoon has returned like a haunting refrain, rivers swelling beyond control, embankments giving way, and lives swept into uncertainty. In total, around 133.88 million people have endured the fury of floods during this period (Prasad, 2025 b). In this backdrop, this article attempts to explain the dual challenge of “abundance of water” (that is, frequent floods in the different parts of the state) and “water scarcity” (drying small rivers and a falling groundwater table) in Bihar. Along with this, the article also discusses the measures to overcome this situation.

### **Socio-Historical Background:**

One of the main reasons Bihar is known worldwide is the floods that occur here almost every year. Not only this, floods are also considered one of the primary reasons for the state’s economic backwardness. This is a long-standing problem that represents a combined form of natural and human-induced disaster. Floods occur in Bihar in two main ways: first, due to a rise in the water level of the Ganga River, and second, due to a rise in the water level of the Kosi River. When the Ganga swells, areas such as Patna, Munger, and Bhagalpur are affected, whereas when the Kosi rises, floods occur in districts like Saharsa, Supaul, Madhepura, and West Champaran. Along with heavy rainfall, another major reason often cited for the rise in the Kosi’s water level is the release of water by Nepal. In contrast, the excess water in the Ganga is attributed to water flowing down from hilly regions (such as Uttarakhand, Himachal Pradesh, etc.) into the Terai plains.

Academic literature on floods in Indian context can be divided into three categories as following: first, historical literature which tend to examine the importance of colonial interventions to solve the flood problems (D'Souza 2006, 2016; Singh 1997); second, State perspective on floods with respect to structural measures such as high dams and embankments, etc. (Rangachari 1999), third, literature related to existing local knowledge systems of floods, which sees flood as a part of natural process and community life and livelihood are adjusted to that (Mishra, 1997, 2001; Mishra, 1995). Apart from these scholarly writings, one may read numerous newspaper articles and govt. reports to understand the nuances of floods. Anupam Mishra (a renowned Gandhian environmentalist), in his article "*Tairne Wala Samaj Doob Raha Hai*" ("A Floating Society Is Drowning"), written after the devastating floods in Bihar in 2008, objected to viewing floods merely as a disaster. He writes that floods have been a long-standing natural phenomenon in Bihar, and that society there had learned the art of living with them. However, with the advent of modernity, people's sense of harmony with nature has diminished, and floods have come to be seen as disasters. On the other hand, Dinesh Mishra, the convener of the *Badh Mukti Abhiyaan*, says that during floods caused by the Kosi in Bihar, citing only the release of water by Nepal as a major reason is like evading the search for long-term solutions to the problem (Mishra, 2006). It is clear that if Bihar is to move forward on the path of development, we must necessarily prepare ourselves to deal with floods.

### **Impact of Floods in Bihar**

When floods occur, different sections of society are affected in different ways. Based on my personal experience of living in Bhagalpur for the past six years, I can say that within the same city, some areas are severely affected by floods, while other areas remain completely unaffected. Similarly, among people living in urban and rural areas, those residing in villages along the Ganga River and its tributaries lose their agricultural livelihoods for nearly two months. During river research conducted in recent years, in conversations held in different parts of the district, rural residents repeatedly told me that earlier floods used to occur once every two to three years, but now they happen almost every year, and sometimes two to three floods occur within a single year. For example, even this year, the area experienced three floods of varying intensity. In such circumstances, people are forced to live in displacement for two to three months. Another consequence is that whereas farmers earlier could grow two to three crops in

a year, now, in years of severe flooding, they are usually able to grow only one crop. In the same way, fishermen from Kahalgaon and Nathnagar (two blocks of Bhagalpur) have linked the continuously declining fish population in the rivers and the increasing frequency of floods to the construction of the Farakka Barrage.

Moving away from Bhagalpur as a flood affected district of Bihar, let us discuss some more general issues. The wider impact of flood ranges from agricultural loss to disturbances in transportation (water on railway track to vanished roads and bridges) and health hazards to environmental impacts to name a few (Shree, 2021). Floods often lead to massive destruction, damaging infrastructure, displacement, loss of life, home, livestock and many more. As a result, rehabilitation of flood affected people becomes very important.

### **Varied Perceptions of Floods**

At present there are various ways of looking at floods such as floods as disaster to floods as natural calamities. Along with these two ways which look at floods as negative phenomena, there are two more alternative ways i.e. flood as a livelihood and flood as celebration (Jha, 2021, 2023). These two ways also depict the contradiction or contestation between modern hydrological knowledge and state knowledge (*rajyavidya*) and the traditional indigenous knowledge (*lokvidya*). Many scholars argue that traditional knowledge is known as local knowledge, indigenous knowledge, folk knowledge, farmers' knowledge, fishers' knowledge (Banerjee, 2009; Chandra, 2010). While *rajyavidya* or modern hydrological knowledge emphasizes on flood control through hydrological structural measures such as high dams, embankments, ring dams, etc., *lokvidya* views floods as a part of the lifecycle and not a disaster. In the latter, the focus is on local knowledge of flood control and a close bond between floods, rivers and people is underlined (Ahmad, 1998; Jha, 2021). There is a need to integrate these ways to have a dialogue between the modern hydrological knowledge and indigenous knowledge of the people living in flood affected areas of Bihar.

### **Policy Initiatives and Contemporary Challenges**

It is pertinent to note that policy documents such as two National Water Policies in 1987 and 2002 have a small section on flood and a special focus is given to 'flood control and management' (Ministry of Water Resources, 1987; 2002). We get to see a shift in policy discourse as National

Disaster Management (NDM) Act, 2005 and National Policy of Disaster Management (NPDM), 2009 and floods were dubbed as disaster and the focus was on flood management. With more than seventy percent geographical area of North Bihar considered as flood prone area has led to a classification of floods by Bihar State Disaster Management Authority (BSDMA). The four categories given by the Bihar Govt.'s Flood Management Information System Cell are – first, flash floods (which occur due to rainfall in Nepal); second, river floods; third, drainage congestion in river confluence, and fourth, permanent water-logged areas.

So far, the approach taken by the Bihar govt. to tackle flood is in the line of disaster management. It is based on relief and rehabilitation model rather than flood preparedness measures which should start way before the flood occurs. Although, to improve environmental health in Bihar, a programme called “Jal Jeevan Hariyali” was launched in 2019, and its outcomes have been quite positive. Under this initiative, good work has been carried out by linking water conservation efforts with the MGNREGA scheme, along with expanding forest cover and promoting organic farming. However, on the other hand, in several districts, under the *Har Ghar Nal Jal* (Each house to have tap water) scheme, taps have been installed in many villages and even in some urban areas, but water supply through them has yet to begin. In some places, people reported that water comes through the taps only once every two to three days. In many areas, due to a sharp decline in groundwater levels, hand pumps no longer yield water. In such situations, people face severe difficulties in accessing drinking water. During the floods also, access to drinking water is a major challenge before the flood affected people.

An organization called Megh Pyne Abhiyan (MPA) has been working for nearly three decades in Bihar and Jharkhand to promote traditional methods of water conservation and to understand the changing nature of floods through research and awareness-building. A recent article by Eklavya Prasad, executive director of MPA underlines that between 2020 and 2025, 31 out of Bihar's 38 districts have faced floods one or more times. Several districts, from Kishanganj to West Champaran, have been affected by floods almost every year. The writing also mentions that with the support of the World Bank, a Physical Monitoring Center is to be established at a place called Birpur in Supaul district under the Bihar Kosi Basin Development Project. This institution will function as a Centre of Excellence under the Water Resources Department. Its role will include understanding

river systems, their structure, and the behaviour of floods, so that timely warnings about impending floods can be given to people. The institution will also work on measures for flood prevention and mitigation (Prasad, 2025 a). It is hoped that the newly formed coalition government in Bihar will take prompt steps in this direction.

To my mind, there are three major problems related to water in Bihar, namely – frequent floods; dying small rivers and falling level of groundwater and there is a need to integrate these problems to solve the problems in a holistic manner. For instance, the schemes like Har Ghar Nal Jal will not be sustainable due to continuous fall in the level of groundwater. Similarly, numerous dying small rivers are another major concern as they have led to numerous consequences viz. migration, change in agricultural pattern and change in the livelihood pattern to name a few (Shree, 2026). There is a need to undertake multi-pronged strategy to deal with flood and it should be done at the grassroots level and decentralization of schemes could be helpful in that. Rather than one size fits all for all the flood affected districts, differential measures and strategies should be adopted.

### **Conclusion**

In today's context, while increasing the pace of development in Bihar requires capital investment and the establishment of large industries, efforts toward environmental conservation must also be intensified. I believe the time has now come for the newly formed government in Bihar to stop viewing floods as a short-term problem and instead begin working toward a long-term solution. In this direction, several measures will have to be undertaken simultaneously—such as protecting ponds, giving due importance to traditional knowledge, conserving small rivers, ensuring access to clean drinking water for people, and reducing the rising levels of air pollution. This will be possible only when society and the state work together, and when these efforts begin from the very grassroots level—that is, when every individual and even the smallest institutions (such as schools, colleges, hospitals, etc.) step forward and participate. There is a need to look beyond the framework of flood as disaster to find better coping up mechanisms. Water governance in Bihar should have an effective strategy for floods.

### ***References***

- *Anupam Mishra (2008), Tairne Wala Samaj Doob Raha Hai, Gandhi Peace Foundation, New Delhi.*

- Eklavya Prasad (2025 a), *Can Bihar's flood-affected voters make their voice heard amid endless floods?*, *Down to Earth*, 21 October.
- Eklavya Prasad (2025 b), *Flooded promises: Bihar's manifestos stay silent on the state's deepest crisis*, *Down to Earth*, 4 November.
- Dinesh Mishra (2006), *Dui Patan ke beech me: Kosi Nadi ki Kahani*, People's Science Institute, Dehradun.
- Pankaj Kumar Jha (2024), *The Local in Bihar Flood Management Policy and Politics*, in S. Satyajit and A. Menon (Eds.), *Environmental Politics at the Local: Natural Resource Governance in India*, Orient Blackswan, New Delhi
- Satyajit Singh (1997), *Taming the Waters: The Political Economy of Large Dams in India*, Oxford University Press, New Delhi
- Rohan D'Souza (2016), *Drowned and Dammed: Colonial Capitalism and Flood Control in Eastern India (1809-1946)*, Oxford University Press, New Delhi
- R. Rangachari (1999), *Some Disturbing Questions*, *Seminar*, Issue 478
- Govt. of India (2005), *Disaster Management Act, 2005*, New Delhi: National Disaster Management on Authority, Ministry of Home Affairs.
- Ruchi Shree (2026), 'River Rejuvenation of Small Rivers: Multi-Level Lessons from Champa (Bhagalpur, Bihar)', in Philippe Cullet and Ruchi Shree (eds.), *River Rejuvenation and River Rights: Evolving Debates in India*, Routledge, London.
- Madhulika Banerjee (2009), *Power, Knowledge, medicine: Ayurvedic Pharmaceuticals at home and in the world*, Orient Blackswan, New Delhi.
- Rajshree Chandra (2010), *Knowledge as Property: Issues in the moral grounding of Intellectual Property Rights*, Oxford University Press.
- Ministry of Water Resources (1987), *National Water Policy. Government of India*, New Delhi.
- Ministry of Water Resources (2002), *National Water Policy. Government of India*, New Delhi.

**Paper Received : 02 Jan. 2026**

**Paper Accepted : 12 Feb. 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

# Beyond Rights: Fundamental Duties and the Ethical Foundations of Pluralism in India

*Dr. Bharti Sehta \**

## *Abstract*

*The Indian Constitution represents a carefully crafted balance between individual liberty and collective responsibility. While its catalogue of Fundamental Rights has received sustained judicial interpretation and popular attention, Fundamental Duties have remained comparatively under-theorised in public discourse. In a plural society such as India—marked by religious, linguistic, cultural, and social diversity - the excessive emphasis on rights, divorced from a parallel commitment to duties, has generated tensions that threaten social harmony and democratic cohesion. This paper adopts a normative and constitutional approach to examine the conceptual foundations of rights and duties, their evolution in modern political thought, and their specific articulation within the Indian constitutional framework. It argues that the contemporary rights-centric consciousness, particularly in the context of group claims and identity politics, risks fragmenting civic unity unless anchored in a shared sense of responsibility. The paper proposes a re-interpretation of Fundamental Duties as citizens' dharma—not as legally enforceable commands, but as ethical obligations essential for sustaining pluralism, social harmony, and democratic institutional life in India.*

**Keywords:** *Rights, Duties, Pluralism, Social Harmony, Constitution, Citizenship*

## **Introduction**

Pluralism is one of the defining features of Indian society. It refers not merely to the coexistence of multiple religions, languages, cultures, and social identities, but to a normative commitment to mutual recognition and peaceful coexistence within a shared political framework. In recent decades, however, pluralism has increasingly become associated with the assertion of rights—individual rights, group rights, minority rights, and identity-based claims. This growing rights consciousness has undoubtedly empowered historically marginalised communities and strengthened democratic

---

\* *Assistant Professor, University Department of Political Science, Babasaheb Bhimrao Ambedkar Bihar University, Muzaffarpur, Bihar*

participation. At the same time, it has also intensified social contestation, competitive victimhood, and political polarisation.

The Indian Constitution recognises both Fundamental Rights and Fundamental Duties as essential components of citizenship. Yet, while rights have become central to legal battles, political mobilisation, and public debates, duties remain largely confined to textbooks and ceremonial references. The common assumption that rights and duties are two sides of the same coin often remains rhetorical rather than substantive. In practice, the emphasis has overwhelmingly tilted towards rights, with little reflection on the ethical responsibilities that sustain a plural democratic order.

This paper examines this imbalance. It explores the philosophical conception of rights, their constitutional embodiment in India, and the relative neglect of duties in civic life. It argues that an exclusive focus on rights—without a corresponding internalisation of duties—undermines social harmony in a plural society. The paper further suggests that Fundamental Duties should be understood as *citizens' dharma*: a moral framework that encourages individuals to transcend narrow self-interest and cultivate responsibility towards others, institutions, and the collective life of the nation.

### **The Conception of Rights**

A right may be understood as a justified and socially recognised claim that an individual can legitimately make upon others or upon the state. Not every desire or expectation qualifies as a right; for a claim to attain the status of a right, it must be institutionally acknowledged and supported by legal or moral norms. In modern constitutional systems, rights are those claims that are formally recognised by law and whose violation can be addressed through judicial or quasi-judicial remedies. This element of justiciability distinguishes rights from broader moral aspirations or ethical ideals that, though valuable, do not carry enforceable guarantees (Dworkin, 1977; Dicey, 1915). Political theorists have consistently linked the idea of rights with human dignity and self-realisation. Rights are seen as necessary conditions for leading a life marked by freedom, respect, and the opportunity for self-development. In this sense, rights are not merely defensive claims against state interference but positive enablers of human flourishing. Harold J. Laski famously defined rights as those conditions of social life without which individuals cannot, in general, seek to be themselves at their best (Laski, 1930). This formulation highlights two crucial aspects of rights: first,

that they are socially embedded rather than purely individualistic, and second, that they are instrumental to human well-being rather than abstract or metaphysical entitlements detached from social context.

The modern language of rights also reflects a significant shift in political consciousness. Classical liberal thought was rooted in the doctrine of natural rights, which emphasised life, liberty, and property as inherent entitlements derived from natural law, reason, or divine authority (Locke, as discussed in Donnelly, 2013). Over time, however, this framework gave way to the contemporary discourse of human rights, which does not depend on metaphysical assumptions about nature or God. Instead, human rights are grounded in the inherent moral worth and equality of all human beings. This shift underscores the idea that no individual is born to serve another and that every person possesses equal dignity simply by virtue of being human (Donnelly, 2013; Sen, 2009).

This moral conception of rights finds its most influential philosophical articulation in Kantian ethics. Immanuel Kant argued that human beings must always be treated as ends in themselves and never merely as means to others' ends. From this perspective, respect for persons becomes the ethical foundation of rights, independent of considerations of utility, social status, or economic contribution (Kant, 1797/1996). Rights, therefore, acquire a universal and inviolable character, applying equally to all individuals regardless of their particular social or cultural identities.

However, this expansion has also generated new theoretical and practical challenges. As rights claims multiply and diversify, they may come into conflict with one another in the absence of a shared ethical or civic framework. Competing rights—between individuals, groups, and communities can create tensions that legal mechanisms alone may not be able to resolve. In response to these challenges, scholars have increasingly argued for approaches that move “beyond human rights” by complementing rights with notions of responsibility, care, and relational ethics. Such perspectives emphasise that rights can be sustainably realised only when they are balanced by a corresponding sense of obligation toward others and toward the broader social order (MacIntyre, 1984; Sen, 2009).

### **Rights in the Indian Constitution**

The Indian Constitution provides one of the most elaborate and progressive frameworks of fundamental rights in the world. Enshrined in Part III (Articles 12–35), these rights are legally enforceable through

constitutional remedies and are widely regarded as the normative foundation of Indian democracy. The framers envisioned fundamental rights as essential instruments for protecting individual liberty, ensuring equality, and promoting social justice within a society marked by deep social, cultural, religious, and linguistic diversity (Austin, 1999; Basu, 2002). By constitutionally limiting state power and empowering citizens, these rights seek to transform India from a hierarchical social order into a democratic and egalitarian polity.

The Right to Equality constitutes the core of the constitutional commitment to justice. It establishes the principle that all persons are equal before the law and are entitled to equal protection of the laws. At the same time, it prohibits discrimination on grounds such as religion, race, caste, sex, and place of birth. Importantly, the Constitution also permits affirmative action for historically disadvantaged groups, including Scheduled Castes, Scheduled Tribes, and other socially and educationally backward classes. This dual structure reflects India's commitment to substantive equality, recognising that formal equality alone is insufficient in a society shaped by entrenched social hierarchies (Basu, 2002; Austin, 2010).

The Right to Freedom guarantees a cluster of civil and political liberties, including freedom of speech and expression, peaceful assembly, association, movement, residence, and profession. These freedoms are indispensable for democratic participation, political dissent, and the articulation of plural identities. At the same time, the Constitution allows the state to impose reasonable restrictions on these rights in the interests of public order, morality, security of the state, and friendly relations with foreign countries. This balance reflects an attempt to reconcile individual liberty with collective interests in a plural and diverse society (Bakshi, 2004; Dicey, 1915).

The Right Against Exploitation addresses some of the most severe forms of social injustice by prohibiting trafficking in human beings, forced labour, and the employment of children in hazardous occupations. These provisions underline the Constitution's deep concern for human dignity and social morality. By outlawing practices that reduce human beings to instruments of economic gain, the Constitution affirms the intrinsic worth of every individual and aligns itself with broader human rights principles (Basu, 2002; United Nations, 1948).

Cultural and Educational Rights further strengthen the pluralist character of the Constitution by safeguarding the interests of linguistic and religious minorities. These rights enable minorities to preserve their language, script, and culture, and to establish and administer educational institutions of their choice. By constitutionally recognising diversity rather than enforcing cultural uniformity, these provisions reassure minority communities that their identities will not be erased or subordinated by majoritarian pressures (Kymlicka, 1995; Bajpai, 2011).

Finally, the Right to Constitutional Remedies empowers citizens to directly approach the courts for the enforcement of fundamental rights. This provision has been famously described as the “heart and soul” of the Constitution because it transforms rights from abstract declarations into enforceable legal guarantees. By granting the higher judiciary the power to issue writs and directions, the Constitution ensures that rights are not merely symbolic but practically meaningful (Ambedkar, 1948; Austin, 1999).

Over time, constitutional amendments and expansive judicial interpretations have significantly broadened the scope of fundamental rights. The right to life, in particular, has been interpreted to include the right to livelihood, education, privacy, a clean environment, and dignified living. These developments demonstrate the dynamic and evolving nature of the Indian Constitution. However, they have also reinforced a predominantly rights-centric civic consciousness, often without a parallel emphasis on the ethical responsibilities necessary for sustaining democratic life in a plural society (Sen, 2009; Austin, 2010).

### **The Emergence and Meaning of Fundamental Duties**

Despite the centrality accorded to fundamental rights in the Indian constitutional framework, the framers were acutely aware that democracy cannot be sustained on rights alone. A functioning democratic order also requires civic discipline, moral responsibility, and a shared commitment to constitutional values. These concerns became particularly pronounced during the period of internal emergency in the mid-1970s, when questions were raised about institutional fragility, erosion of democratic norms, and the growing assertion of individual claims without corresponding civic responsibility. It was in this political and moral context that Fundamental Duties were introduced into the Constitution through the Forty-Second Constitutional Amendment Act of 1976, following the recommendations of the Swaran Singh Committee (Austin, 2010; Basu, 2002).

Fundamental Duties, enumerated in Part IV-A under Article 51A, articulate a set of moral and civic obligations expected of every citizen of India. These duties require citizens to respect the Constitution and its ideals, the national flag and anthem; to cherish the values of the freedom struggle; to uphold the sovereignty, unity, and integrity of the nation; and to promote harmony and the spirit of common brotherhood transcending religious, linguistic, regional, and sectional diversities. They also emphasise the renunciation of practices derogatory to the dignity of women, the preservation of India's composite cultural heritage, protection of the natural environment, development of scientific temper and humanism, safeguarding of public property, and striving for excellence in both individual and collective life (Bakshi, 2004; Constitution of India, 1950).

Unlike Fundamental Rights, Fundamental Duties are explicitly non-justiciable. Their violation does not ordinarily invite direct legal sanctions, nor can citizens be compelled by courts to perform them in the same manner as rights are enforced. This non-justiciable character has often led to the perception that duties occupy a secondary or merely symbolic position within the constitutional scheme. However, their deeper significance lies precisely in their ethical orientation. Duties are intended to operate through moral persuasion and internalisation rather than legal coercion, appealing to the conscience of citizens rather than their fear of punishment (Austin, 1999; Chandhoke, 1995).

Fundamental Duties seek to cultivate a sense of ethical citizenship by emphasising responsibility alongside entitlement. They are concerned not only with regulating the relationship between the individual and the state, but also with shaping the moral quality of relationships among citizens themselves. In a plural society such as India, where diversity is both a social reality and a constitutional value, these duties play a crucial role in nurturing mutual respect, tolerance, and civic solidarity. By encouraging citizens to look beyond narrow group interests, duties aim to sustain the moral preconditions necessary for democratic coexistence (Bhargava, 2010; Parekh, 2000).

### **Rights, Duties, and the Crisis of Social Harmony**

The growing imbalance between rights and duties has significant implications for social harmony in contemporary India. As individuals and social groups have become increasingly conscious of their constitutional and legal rights, political and social demands are often articulated in adversarial

and competitive terms. Competing rights claims—whether based on religion, caste, language, gender, or region—can harden social identities and intensify fragmentation, particularly when they are framed without reference to shared civic obligations or common constitutional values (Bajpai, 2011; Kymlicka, 1995).

When rights are asserted in isolation from responsibility, they risk degenerating into entitlement claims detached from ethical restraint. For instance, freedom of speech exercised without regard for the dignity of others can legitimise hate speech and social hostility; religious freedom without a parallel commitment to harmony can deepen communal polarisation; and cultural rights pursued without civic responsibility may encourage social withdrawal or isolationism. Such tendencies weaken the normative foundations of plural democracy by privileging sectional interests over collective well-being (Parekh, 2000; Sen, 2009).

In this context, Fundamental Duties offer a crucial normative counterbalance to an increasingly rights-centric public consciousness. The duty to promote harmony and the spirit of common brotherhood directly addresses the challenges posed by diversity and identity-based mobilisation. Similarly, the duty to develop scientific temper and humanism encourages critical inquiry, rational thought, and resistance to dogmatism and fundamentalism. The duty to protect and improve the natural environment broadens the ethical horizon of citizenship by extending moral concern beyond immediate human interests to future generations and non-human life (Nandy, 1983; Sen, 2009).

Despite their constitutional significance, Fundamental Duties remain under-emphasised in civic education, political discourse, and every day public life. Popular and institutional attention continues to be overwhelmingly focused on rights-based claims, with relatively little engagement with the shared obligations that sustain democratic order. This one-dimensional emphasis weakens the moral infrastructure of democracy, particularly in a plural society where social harmony depends not only on legal entitlements but also on ethical self-restraint, mutual recognition, and a shared sense of responsibility (Austin, 2010; MacIntyre, 1984).

### **Fundamental Duties as Citizens' *Dharma***

The concept of *dharma* offers a rich and culturally grounded normative framework for reinterpreting Fundamental Duties within the Indian constitutional context. In its ethical and philosophical sense, *dharma*

signifies righteous conduct, moral responsibility, and the maintenance of social order. Rather than emphasising claims or entitlements against others, *dharma* foregrounds obligations that arise from one's roles, relationships, and position within a broader moral and social universe. It thus provides an alternative vocabulary for understanding citizenship—not merely as a bundle of rights, but as a practice of responsibility oriented towards the common good (Parekh, 2000; Kaviraj, 2010).

Interpreting Fundamental Duties as citizens' *dharma* does not imply religious moralism, sectarian ethics, or legal compulsion. Instead, it frames citizenship as an ethical undertaking rooted in self-restraint, mutual respect, and concern for collective well-being. Such an interpretation aligns closely with the constitutional vision of moral citizenship, which seeks to cultivate internalised values rather than externally imposed obedience. Fundamental Duties, viewed through this lens, function as guiding ethical principles that shape civic behaviour and social interaction, rather than as coercive commands enforced by the state (Austin, 2010; Chandhoke, 1995).

This perspective resonates strongly with Gandhian political thought, which consistently placed duties prior to rights. Gandhi argued that rights are not primary claims to be demanded but moral outcomes that naturally flow from the conscientious performance of duties. In his view, an excessive preoccupation with rights fosters egoism and social conflict, whereas a duty-oriented ethic nurtures harmony, cooperation, and moral self-discipline. Gandhi maintained that when individuals faithfully perform their duties towards others and society, rights are secured organically, without the need for constant assertion or confrontation (Gandhi, 1958; Parekh, 1995).

A dharmic approach to citizenship thus encourages individuals to move beyond a narrow focus on the self and to recognise their deep interdependence with others and with social institutions. It promotes a civic ethos in which rights are exercised with sensitivity to their social consequences and with respect for constitutional values and institutional integrity. In a plural society such as India, where competing identities and interests coexist within a shared political space, such an ethical orientation is essential for sustaining social harmony and democratic stability. By reimagining Fundamental Duties as citizens' *dharma*, the Constitution can be read not only as a legal document, but also as a moral charter guiding responsible and inclusive democratic life (Sen, 2009; Bhargava, 2010).

## Conclusion

India's constitutional vision rests on a delicate balance between liberty and responsibility, diversity and unity, rights and duties. While the expansion of rights has strengthened democratic participation and social justice, the relative neglect of duties has created ethical and civic deficits that threaten social harmony in a plural society. This paper has argued that Fundamental Duties should not be viewed as ornamental appendages to the Constitution, but as essential moral anchors of democratic life. Re-imagining these duties as citizens' dharma provides a normative pathway for reconciling pluralism with social cohesion. Such a shift requires not legal enforcement but sustained civic education, ethical reflection, and cultural internalisation. In an era marked by intense identity assertions and competing rights claims, the future of Indian democracy depends not only on protecting rights but also on nurturing responsibility. A mature pluralism can flourish only when citizens recognise that their freedoms are inseparable from their duties toward others, institutions, and the shared constitutional order.

## References

- Ambedkar, B. R. (1948). *The Constituent Assembly debates* (Vols. 1–12). Government of India.
- Austin, G. (1999). *The Indian Constitution: Cornerstone of a nation*. Oxford University Press.
- Austin, G. (2010). *Working a democratic constitution: The Indian experience*. Oxford University Press.
- Bajpai, R. (2011). *Debating difference: Group rights and liberal democracy in India*. Oxford University Press.
- Bakshi, P. M. (2004). *The Constitution of India* (Universal ed.). Universal Law Publishing.
- Basu, D. D. (2002). *Introduction to the Constitution of India* (18th ed.). Prentice Hall of India.
- Bhargava, R. (1998). *Secularism and its critics*. Oxford University Press.
- Bhargava, R. (2010). *The promise of India's secular democracy*. Oxford University Press.
- Bobbio, N. (1996). *The age of rights*. Polity Press.
- Chandhoke, N. (1995). *State and civil society: Explorations in political theory*. Sage Publications.

- Chandhoke, N. (2008). *Beyond secularism: The rights of religious minorities*. Oxford University Press.
- Dicey, A. V. (1915). *Introduction to the study of the law of the constitution* (8th ed.). Macmillan.
- Donnelly, J. (2013). *Universal human rights in theory and practice* (3rd ed.). Cornell University Press.
- Dworkin, R. (1977). *Taking rights seriously*. Harvard University Press.
- Dworkin, R. (2011). *Justice for hedgehogs*. Harvard University Press.
- Galston, W. A. (2002). *Liberal pluralism: The implications of value pluralism for political theory and practice*. Cambridge University Press.
- Gandhi, M. K. (1958). *Hind Swaraj and other writings*. Navajivan Publishing House.
- Kant, I. (1996). *The metaphysics of morals* (M. Gregor, Trans.). Cambridge University Press. (Original work published 1797)
- Kaviraj, S. (2010). *The imaginary institution of India*. Columbia University Press.
- Kymlicka, W. (1995). *Multicultural citizenship: A liberal theory of minority rights*. Oxford University Press.
- Laski, H. J. (1930). *A grammar of politics* (4th ed.). George Allen & Unwin. (Original work published 1925)
- MacIntyre, A. (1984). *After virtue* (2nd ed.). University of Notre Dame Press.
- Nandy, A. (1983). *The intimate enemy: Loss and recovery of self under colonialism*. Oxford University Press.
- Parekh, B. (1995). *Gandhi's political philosophy: A critical examination*. University of Notre Dame Press.
- Parekh, B. (2000). *Rethinking multiculturalism: Cultural diversity and political theory*. Harvard University Press.
- Sen, A. (2009). *The idea of justice*. Harvard University Press.

**Paper Received : 02 Jan 2026**

**Paper Accepted : 18 Feb. 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## Consumer behaviour towards breakfast cereals in tier 1 and tier 2 cities with specific reference to cereals.

Vidya Shaji L \*

### *Abstract*

*The cooking styles and eating behaviors in India vary significantly between the southern and northern regions of the country. Over the past 15 years, Indian culinary practices and lifestyles have undergone substantial transformations. These changes have been influenced by several key factors, including economic liberalization policies, the rise of dual-income households, increased individual earning capacity, the prevalence of nuclear families, independent living arrangements among couples, advancements in kitchen appliances, and the widespread influence of mass media. In response to these evolving lifestyles and dietary habits, the present study was undertaken to examine ready-to-cook breakfast foods, with particular emphasis on cereal-based products.*

**Keywords :** Consumer Behaviour, Cereals

### INTRODUCTION

Breakfast is the first meal of the day and plays an important role in maintaining health and energy levels. Breakfast foods vary across households, but breakfast cereals have gained popularity worldwide as a convenient and nutritious option, especially among children. They provide whole grains, vitamins and dietary fibre, though their composition has become increasingly diverse in the modern market.

In India, cooking styles differ across regions, but changing lifestyles, time constraints and the difficulty of preparing traditional foods have increased the demand for ready-to-cook and convenience foods. Products such as instant cereals, noodles, mixes, dairy items and ready-to-eat meals have become common in both households and the food service sector. These foods are preferred because they are easy to prepare, save time and suit fast-paced lifestyles.

---

\* Assistant Professor, PG Department of Economics, Sree Narayana College for Women, Kollam, University of Kerala, Kerala

Consumer behaviour plays a key role in determining food choices. With rising education levels and better access to information, consumers are becoming more aware of nutrition and health benefits. Breakfast cereals, particularly in urban areas, are increasingly chosen for their convenience, fortified nutrients and compatibility with modern lifestyles. This study examines the factors influencing the consumption of ready-to-eat and ready-to-cook cereal products in Southern India.

### **THEORITICAL FRAMEWORK**

In today's fast-paced lifestyle, many people no longer have time for traditional meal preparation and therefore rely on convenient ready-to-eat foods, especially for breakfast. This trend is particularly strong among young consumers who value speed and efficiency. Advertising plays a major role in shaping their food choices, and the breakfast cereal industry heavily promotes cereals as healthy and energy-giving products.

In India, although most food is still consumed at home, eating outside and purchasing convenience foods are steadily increasing due to economic growth, rising incomes, changing family structures, more working women and evolving lifestyles. Education also strongly influences food choices, as consumers increasingly pay attention to nutritional information, especially fibre content, which is linked to better health. As a result, awareness and informed decision-making about cereals are rising.

### **REVIEW OF LITERATURE**

Kamalaveni and Nirmala (2000) reported that both housewives and working women shared similar reasons for purchasing instant foods, with factors such as income, education, occupation and family size influencing spending patterns. Nagaraja (2004) observed that buying behaviour is shaped by personal experience, family influence, product quality and availability.

Singh and Singh (1981) showed that brand and store loyalty vary depending on whether a product is a necessity or a luxury, while Hans (1996) noted that consumers switch brands due to price, curiosity and variety seeking.

Vincent (2006) found that children develop brand awareness early, influencing family purchases, and also observed a decline in cereal consumption in urban India due to changing consumer preferences.

**OBJECTIVES**

- To identify whether income factor is important for buying cereals or not.
- To identify if education factor motivates consumption of cereals.
- To identify if gender is an important reason for consumption of cereals.
- To determine if there is significant relationship between the education level of consumers and their breakfast pattern.
- To determine if “healthy and nutritious” is most important factor for using ready to eat foods.

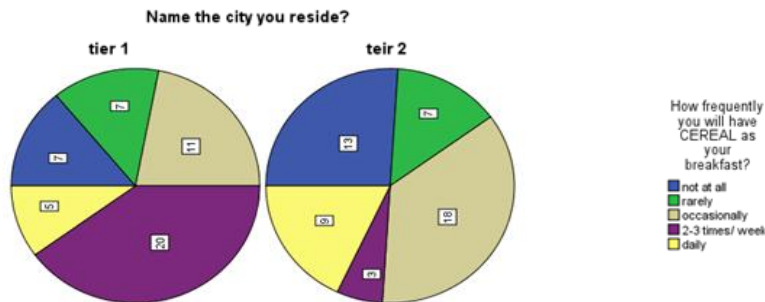
**RESEARCH DESIGN**

This report is totally a survey based standard. To study the buying behavior of consumers towards instant food products, multistage random participants were chosen. The consumers of the age group between 18 to 50 are given questionnaire to get the feedback and some of them were interviewed personally. Based on their input the analyses were done and results attained. The respondents that helped for attaining the objective of research were from cities that are tier 1 and tier 2. The participants of tier 1 city that were the part of the research were respondents from the cities like, Chennai and Bangalore where most commonly people consume ready to eat food. The participants of tier 2 cities are from Trivandrum, Kochi, Madurai and Coimbatore.

The respondents were post classified into four income groups based on their income. Even on the basis of their education level and also further classified the participants on the basis of employment status.

**DATA ANALYSIS AND FINDINGS**

1. **How** respondents consume the ready to eat food ‘cereal’ of tier 1 and tier 2 city?



### Interpretation

Cereal consumption was higher in Tier 1 cities at a **2–3 times per week** level, reflecting its use as a convenient breakfast option. In contrast, **daily consumption was higher in Tier 2 cities**, indicating a growing shift toward modern ready-to-eat foods in smaller cities.

### 2. Relation between choices of brands with consumption of cereals.

#### Count

CEREAL as your breakfast	What brand would you normally purchase?			
	Kellogs	Nestle	Others	Saffola
not at all	8	3	7	2
rarely	5	2	7	0
occasionally	10	9	6	3
2-3 times/ week	9	5	9	1
daily	7	2	2	3
Total	39	21	31	9

### Interpretation

The analysis shows that **brand is an important factor** in cereal choice. Among daily cereal consumers, **Kellogg's was the most preferred brand**, followed by Tata Soufull, Monsoon Harvest and Yogabar, indicating a strong preference for established brands.

### 3. Factors influencing consumer to buy or consume cereals as their breakfast

#### Crosstabulation

#### Count

CEREAL as your breakfast	What influences your purchase?					
	easy availability	convenience	healthy and nutritious	tasty	attractive packaging	none of the above
not at all	2	8	5	4	1	0
rarely	1	3	7	1	2	0
occasionally	3	7	8	6	4	0
2-3 times/ week	2	7	6	7	2	0
daily	1	1	6	2	3	1
Total	9	26	32	20	12	1

### Interpretation

For daily cereal consumers, **health and nutrition** are the primary motivating factors, followed by **convenience** and **availability of ingredients**, indicating that ease of access and perceived health benefits drive cereal choice.

#### 4. To determine if “healthy and nutritious” is most important factor for using ready to eat foods.

### Hypothesis

H0: Healthy & Nutrition is most important factor for using ready to eat foods.

H1: Healthy & Nutrition is not important factor for using ready to eat foods.

Chi-Square Tests	Value	df
Pearson Chi-Square	18.827 <sup>a</sup>	20
Likelihood Ratio	17.292	20
Linear-by-Linear Association	3.732	1
N of Valid Cases	100	

**Interpretation:** From the result we conclude that, we reject the null hypothesis as there is relation between the having cereals due to fact considering it as healthy & nutrition.

#### 5. How gender difference consider cereal to be healthy

Count			
I perceive cereal as a healthy breakfast	Name is your gender?		
	Male	female	
	strongly disagree	5	1
	disagree	5	2
	neutral	7	14
	agree	11	26
	strongly agree	10	19
Total	38	62	

### Interpretation

Male respondents were less likely to perceive cereals as healthy, whereas **female respondents showed a significantly stronger belief** in cereals as a healthy breakfast option.

### 6. How education status differentiate consumer while buying cereals

Count	What is your Education Status?		
I see all necessary ingredients before buying cereals	What is your Education Status?		
	10 <sup>th</sup> /12 <sup>th</sup>	graduation	post-graduation
strongly disagree	3	2	2
disagree	0	15	10
neutral	2	12	8
agree	2	7	24
strongly agree	1	6	6
Total	8	42	50

#### Interpretation

Education significantly influenced purchasing behaviour, as **post-graduate respondents showed greater awareness by carefully checking ingredient labels**, indicating a positive relationship between education level and consumer awareness.

### 7. How gender wise affects in believing cereals as easiest way to prepare breakfast

I believe that Cereal is the easiest way to prepare breakfast	Name your gender?	
	male	female
strongly disagree	1	2
disagree	1	4
neutral	7	13
agree	15	19
strongly agree	14	24
Total	38	62

#### Interpretation

Gender differences were observed in perceptions of convenience, with **female respondents more likely than males to consider cereals as the easiest way to prepare breakfast**.

### 8. Relation between incomes levels with considering cereals cheapest among other breakfast

I think cereal breakfast is the cheapest one among all other types of breakfast		Monthly income?				
		< rs. 25000	25001-50000	50001-75000	75001-100000	>100000
	strongly disagree	3	2	1	4	3
	disagree	1	2	4	5	9
	neutral	0	7	8	9	9
	agree	0	6	1	4	6
	strongly agree	1	5	1	1	8
Total		5	22	15	23	35

#### Interpretation

Income influenced price perception, as **high-income respondents did not consider cereals the cheapest breakfast option**, viewing branded cereals as more expensive than traditional alternatives.

### 9. How education status impact on consumption of cereals

CEREAL as your breakfast		What is your Education Status?		
		10 <sup>th</sup> /12 <sup>th</sup>	graduation	post-graduation
	not at all	1	11	8
	rarely	0	6	8
	occasionally	2	14	13
	2-3 times/ week	2	5	16
	daily	3	6	5
Total		8	42	50

#### Interpretation

Breakfast choice varied by education level, with **highly educated respondents showing greater preference for cereals**, indicating that education plays a significant role in adopting modern breakfast options.

### 10. To Determine if there is significant relationship between educational level of consumers and breakfast pattern

#### Hypothesis

H<sub>0</sub>: There is no significant relationship between education level of consumers and their breakfast pattern.

H1: There is a significant relationship between the education level of consumers and their breakfast pattern.

Chi-Square Tests	Value	df
Pearson Chi-Square	10.919 <sup>a</sup>	8
Likelihood Ratio	11.373	8
Linear-by-Linear Association	.107	1
N of Valid Cases	100	
a. 5 cells (33.3%) have expected count less than 5. The minimum expected count is 1.12.		

### Interpretation

Statistical analysis indicated **no significant relationship between education level and cereal consumption**, suggesting that higher education does not necessarily increase cereal intake.

### 11. Relation between the gender and how they perceive cereal as a healthy breakfast

Correlations		I perceive cereal as a healthy breakfast
I perceive cereal as a healthy breakfast	Pearson Correlation	1
	Sig. (2-tailed)	
	N	100
Name is your gender?	Pearson Correlation	.236*
	Sig. (2-tailed)	.018
	N	100

\* Correlation is significant at the 0.05 level (2-tailed).

### Interpretation

The correlation value ( $r = 0.236$ ) indicates a **weak but statistically significant positive relationship** between the variables, showing a meaningful association.

### 12. Impact of education on behavior of consumer before buying cereals

Correlations		I see all necessary ingredients before buying cereals
I see all necessary ingredients before buying cereals	Pearson Correlation	1
	Sig. (2-tailed)	
	N	100
What is your Education Status?	Pearson Correlation	.212*
	Sig. (2-tailed)	.034
	N	100

\* Correlation is significant at the 0.05 level (2-tailed).

### Interpretation

The correlation coefficient ( $r = 0.212$ ) shows a **significant positive relationship** between education level and checking ingredient labels, indicating that **more educated consumers are more likely to examine product information before purchasing cereals.**

### 13. To determine if gender has relation with consumer believe whether cereal is easiest to make or not

Correlations		I believe that Cereal is the easiest way to prepare breakfast
I believe that Cereal is the easiest way to prepare breakfast	Pearson Correlation	1
	Sig. (2-tailed)	
	N	100
What is your gender?	Pearson Correlation	-.048
	Sig. (2-tailed)	.636
	N	100

### Interpretation

The correlation coefficient ( $r = -0.048$ ,  $p = 0.636$ ) indicates **no significant relationship between gender and the perception of cereals as the easiest breakfast option.**

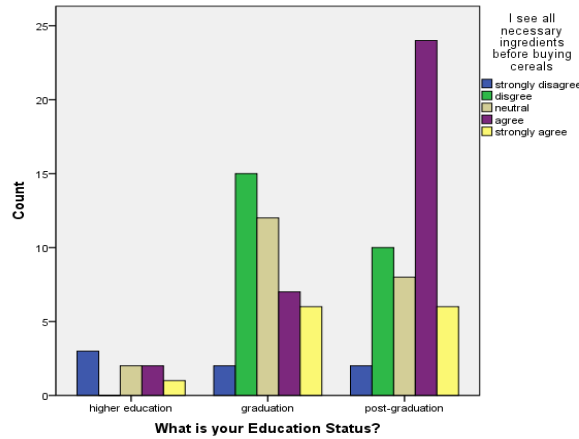
### 14. Is there impact of family income on thinking of consumer towards cereals as one of the cheapest breakfast

		I think cereal breakfast is the cheapest one among all other types of breakfast
I think cereal breakfast is the cheapest one among all other types of breakfast	Pearson Correlation	1
	Sig. (2-tailed)	
	N	100
Monthly income?	Pearson Correlation	.036
	Sig. (2-tailed)	.722
	N	100

### Interpretation

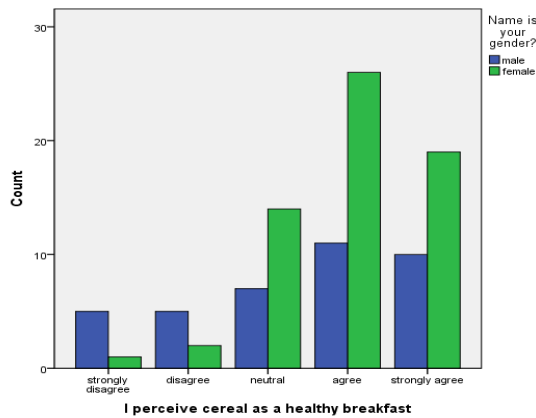
The correlation was statistically significant ( $p < 0.05$ ), indicating that **income influences cereal consumption, with higher-income consumers more likely to include cereals in their breakfast.**

**15. Relation between education status and seeing all ingredients before buying cereals**



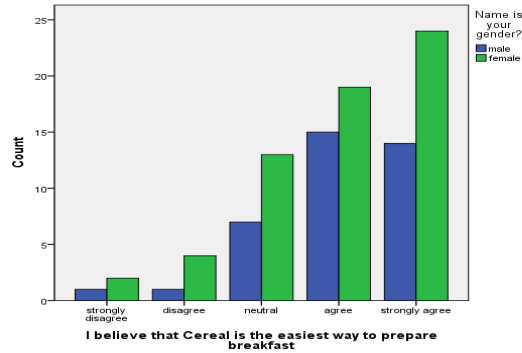
The bar chart shows that **education level positively influences label-reading behaviour**. Post-graduate respondents were the most likely to check ingredient details before purchasing cereals, while graduates were mostly neutral. Overall, higher education was associated with **greater awareness and careful evaluation of product information**.

**16. Study of bar diagram to show which gender perceive more cereal as healthy breakfast**



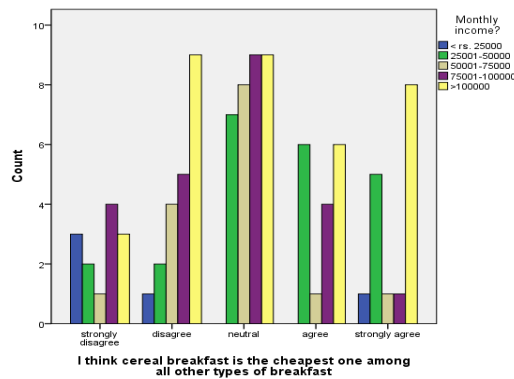
The bar chart indicates a **gender-based difference in health perception**, with **female respondents more likely than males to consider cereals a healthy breakfast**, while males showed higher levels of disagreement.

**17. Study of comparative analysis of gender on basis of which considered cereals as easiest way to prepare breakfast**



Although some female respondents expressed disagreement, **overall females were more likely than males to consider cereals the easiest breakfast option**, as reflected by higher levels of strong agreement.

**18. Study of income of family with comparison to their consideration of cereals as one of the cheapest breakfast among others**



The graph indicates that **income does not strongly influence the perception of cereals as the cheapest breakfast option**. Higher-income groups viewed branded cereals as expensive, while middle-income groups were largely neutral.

**CONCLUSIONS**

Cereal consumption was higher in Tier 1 cities on a weekly basis, while daily use was greater in Tier 2 cities, reflecting changing food habits. **Health, nutrition and price** were the main factors influencing consumption. Women viewed cereals as healthier and more convenient than men, and

educated consumers were more likely to read labels. Higher-income groups were less price-sensitive, while lower-income groups found branded cereals costly. Children also influenced purchases through advertising and packaging. Overall, rising demand for ready-to-eat foods reflects modern lifestyles and time constraints.

### ***References***

- *Aaker, D. (1997). Building brands without mass media. Harvard Business Review, 39–50.*
- *Ali, M. (1992). An analysis of fruits and vegetable processing. MSc Thesis, University of Agricultural Sciences, Bangalore.*
- *Banumathy, S. (2006). Brand preference of soft drinks. Indian Marketing, 12–16.*
- *Bristow, D. N., & Sabeson, S. K. (2002). Brand dependence scale. Product & Brand Management, 343–356.*
- *Chen, A. (2001). Brand associations and brand equity. Product and Brand Management, 439–451.*
- *Herrmann, R. M. (2001). Pricing and consumer behaviour in food retailing. University of Giessen.*
- *Kamalaveni, D. & Nirmala (2000). Consumer behaviour in instant foods. Marketing, 12–18.*
- *Kumar, K. A. (1987). Made in India and consumer perception. Indian Journal of Marketing, 26–34.*
- *Nagaraja, B. (2004). Consumer behaviour in rural areas. Indian Journal of Marketing, 30–36.*
- *Padmanaban, N. (1999). Dealer loyalty in pesticides. Agricultural Marketing, 69–74.*
- *Price, G. (2003). Coupon values for breakfast cereals. Agribusiness, 223–243.*
- *Selvaraj, K. N. (1999). Fruits and vegetables in Tamil Nadu. Agricultural Marketing, 22–25.*
- *Shanmugsundaram, S. (1990). Soft drink consumption patterns. Vellore.*
- *Singh, J. & Singh, S. (1981). Brand loyalty in India. Indian Journal of Marketing, 33–37.*
- *Vincent, N. (2006). Brand consciousness among children. Indian Journal of Marketing, 12–18.*

***Paper Received : 25 Dec. 2025***

***Paper Accepted : 05 Feb. 2026***

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

# Indo-US Trade War and Its Implications for the Indo-Pacific Economic Order

Dr. Nikita Raj \*

## *Abstract*

*The Indo-US relationship has often been described as one of the most consequential strategic partnerships of the twenty-first century, underpinned by shared democratic values, converging security interests and growing economic engagement. However, despite this broader strategic convergence, economic relations between India and the United States have periodically been marked by friction, particularly in the form of tariff disputes, market-access disagreements and divergent approaches to trade liberalisation. These tensions, frequently described as an 'Indo-US trade war', have implications that extend far beyond bilateral trade balances. This article critically examines the nature and evolution of Indo-US trade tensions and analyses their wider implications for the Indo-Pacific economic order. It argues that the trade war reflects deeper structural shifts in the global political economy, including the resurgence of economic nationalism, the weakening of multilateral trade institutions and the strategic reconfiguration of supply chains in the Indo-Pacific. While these tensions pose significant challenges to regional economic stability and rule-based trade, they also create opportunities for India to recalibrate its economic diplomacy, strengthen regional partnerships and play a more assertive role in shaping the emerging Indo-Pacific economic architecture.*

**Keywords:** *Indo-US trade war, Indo-Pacific, economic order, tariffs, economic nationalism, strategic partnerships.*

## **Introduction**

The Indo-Pacific has emerged as the central theatre of global economic and strategic activity in the contemporary international system. Home to some of the world's fastest-growing economies, vital sea lanes of communication and complex geopolitical rivalries, the region is increasingly shaping the contours of global governance and economic order. Within this

---

\* Assistant Professor (Guest), Magadh University, Bodh Gaya, Bihar

evolving context, the relationship between India and the US occupies a pivotal position. Over the past two decades, bilateral ties have expanded significantly, encompassing defence cooperation, technology transfer, energy trade and people-to-people exchanges. Yet, paradoxically, economic relations have remained vulnerable to recurring disputes over tariffs, subsidies, intellectual property rights and market access.

The term 'Indo-US trade war' does not imply a single, continuous conflict but rather a series of episodic trade confrontations, particularly evident since the late 2010s. These disputes gained prominence with the imposition of US tariffs on steel and aluminium imports, India's retaliatory measures, the withdrawal of India from the US Generalized System of Preferences (GSP) and disagreements over digital trade and agricultural market access. Such tensions raise critical questions about the sustainability of the Indo-US economic partnership and its broader implications for the Indo-Pacific economic order.

This article seeks to address three interrelated questions. First, what are the underlying causes and characteristics of the Indo-US trade war? Second, how do these trade tensions affect the emerging Indo-Pacific economic order? Third, what challenges and opportunities do these developments present for India and the region at large? By adopting a political economy perspective, the article situates Indo-US trade disputes within wider global trends and assesses their strategic and economic ramifications.

### **Conceptualizing the Indo-Pacific Economic Order**

The concept of an 'Indo-Pacific economic order' refers to the set of rules, institutions, norms and power relations that govern economic interactions in the Indo-Pacific region. Traditionally, this order has been shaped by multilateral institutions such as the World Trade Organization (WTO), regional trade agreements, and informal economic arrangements. In recent years, however, the Indo-Pacific economic order has been undergoing significant transformation, driven by the rise of China, shifts in US trade policy and the growing economic weight of middle powers such as India, Japan and Australia.

A defining feature of the contemporary Indo-Pacific economic order is the tension between multilateralism and economic nationalism. While regional initiatives such as the Comprehensive and Progressive Agreement for Trans-Pacific Partnership (CPTPP) and the Regional Comprehensive

Economic Partnership (RCEP) aim to promote trade liberalisation, major powers have increasingly resorted to unilateral trade measures. The Indo-US trade war must therefore be understood as part of this broader pattern, reflecting competing visions of economic governance in the region.

### **Evolution of the Indo–US Trade War**

The evolution of the Indo–US trade war must be understood against the backdrop of expanding economic engagement coupled with persistent structural asymmetries. Following India's economic liberalisation in the early 1990s, bilateral trade between India and the United States witnessed remarkable growth, transforming the US into one of India's most significant trading partners in goods and services. Despite this expansion, trade relations were marked by recurring frictions. The United States consistently raised concerns regarding India's relatively high tariff regime, complex non-tariff barriers and regulatory unpredictability, while India objected to US protectionist tendencies, restrictive visa policies affecting skilled Indian professionals and barriers to market access.

Trade tensions escalated sharply during the first Trump administration, which pursued an overtly protectionist “America First” trade agenda. The imposition of tariffs on steel and aluminium imports under Section 232 of the US Trade Expansion Act adversely impacted Indian exports and signalled a shift towards unilateral trade actions. India's retaliatory tariffs on selected US products, combined with the termination of India's Generalized System of Preferences (GSP) benefits in 2019, marked a decisive turning point, revealing the vulnerability of the bilateral economic partnership to political and strategic recalibrations.

Although the Biden administration adopted a more conciliatory and multilateral rhetoric, underlying trade disputes remained largely unresolved. Contentious issues such as digital services taxation, data localization norms, agricultural subsidies, intellectual property rights and pharmaceutical pricing continued to constrain deeper economic cooperation. These persistent disagreements reinforced the view that Indo–US trade tensions were structural rather than personality-driven.

The return of Donald Trump to the White House and the re-emergence of tariff disputes since January 2026 have further intensified these long-standing frictions. The renewed emphasis on reciprocal tariffs, allegations of India's “unfair trade practices” and threats of higher duties on key Indian export sectors- including pharmaceuticals, textiles and

information technology services have revived fears of a prolonged trade confrontation. India, while reaffirming its commitment to strategic partnership, has resisted unilateral tariff pressures and signalled readiness to protect its domestic industries through calibrated counter-measures. The current phase of the Trump–India tariff war thus reflects both continuity and escalation, underscoring how economic nationalism, strategic competition and unresolved structural asymmetries continue to shape the Indo-US trade relationship well into 2026.<sup>1</sup>

### **Implications for the Indo-Pacific Economic Order**

The Indo-Pacific region's economic order has long been shaped by shifting global power balances, deepening integration and the pursuit of stable, rule-based trade systems. In recent years, however, the resurgence of protectionist policies, most notably under U.S. President Donald Trump has strained this equilibrium. Since Trump's return to the White House and the imposition of steep tariffs on Indian exports, relations between New Delhi and Washington have entered a period of heightened economic tension. This tariff conflict, persisting into January 2026, has implications far beyond bilateral trade figures, influencing regional supply chains, strategic partnerships and confidence in multilateral trade norms. One of the most salient consequences of the U.S.–India tariff dispute has been the;

- **Erosion of Multilateral Trade Norms** – The resurgence of trade tensions between India and the United States since January 2026, following President Donald Trump's renewed tariff-centric trade policy, has significantly affected the Indo-Pacific economic order. The imposition of steep unilateral tariffs by the United States on selected Indian exports and India's calibrated responses, reflect a growing preference for bilateral pressure over multilateral dispute-resolution mechanisms. This approach has weakened confidence in the World Trade Organization, whose relevance is increasingly questioned when major economies bypass its rules and procedures. The India–US tariff war has thus contributed to the dilution of rule-based trade governance, creating uncertainty for regional economies that depend on predictable market access. Smaller Indo-Pacific states, in particular, face heightened vulnerability as protectionist tendencies among major powers disrupt established trade norms. As unilateralism gains prominence, the region risks moving toward a fragmented economic order marked by power-driven negotiations rather than consensus-based multilateral cooperation, undermining long-term stability and trust in the global trading system.

- **Impact on Regional Supply Chains** - Trade tensions between India and the United States have indirect effects on regional supply chains. As firms seek to diversify production and reduce exposure to tariff risks, the Indo-Pacific region has witnessed a reconfiguration of supply networks. While this creates opportunities for alternative manufacturing hubs, it also increases adjustment costs and uncertainty.

Trade tensions between India and the United States have significantly disrupted regional supply chains, especially since the Trump administration's steep tariff hikes in 2025 and into 2026. As the U.S. imposed tariffs of up to 50 % on many Indian exports, including textiles, gems and jewellery, and other labour-intensive products, producers and exporters across the Indo-Pacific began to recalibrate their supply network strategies.<sup>2</sup>

Firms increasingly seek to diversify production and reduce exposure to tariff risks, shifting portions of manufacturing and sourcing to alternative hubs such as Southeast Asia and the Middle East to protect profit margins and maintain market access. This reconfiguration has revealed opportunities for countries like Vietnam or Indonesia to integrate into global value chains, yet it has also caused higher freight costs, rerouted shipments and elevated logistical uncertainty for businesses reliant on stable supply routes.<sup>3</sup>

While this diversification may ultimately strengthen resilience in the Indo-Pacific's economic architecture, in the short term it imposes adjustment costs and operational challenges for firms and workers adjusting to new trade realities.<sup>4</sup>

- **Strategic Ramifications** - Since January 2026, the ongoing tariff dispute between India and the US under President Trump has added strategic complexity to the relationship, especially in the broader context of balancing China's influence in the Indo-Pacific. Washington's imposition of high reciprocal tariffs on Indian imports has strained economic trust, prompting concerns among policymakers that short-term trade confrontations could undermine long-term strategic cooperation on regional security issues, including counter-balancing Beijing. Experts warn that persistent tensions risk eroding confidence in the US as a reliable partner, potentially complicating collaborative frameworks designed to uphold a free and open Indo-Pacific. New Delhi, while maintaining defence dialogue and technological

cooperation with Washington, is also diversifying partnerships with Europe and other Indo-Pacific actors to safeguard its strategic autonomy amid this tariff-driven uncertainty.<sup>5</sup>

### **Challenges Arising from the Indo–US Trade War**

- **Economic Uncertainty and Investment Risks** - The ongoing tariff conflict between India and the United States has significantly heightened economic uncertainty, deterring long-term investment and complicating growth prospects across industries. Since mid-2025, the Trump administration has imposed steep tariffs at times reaching up to 50 % on a wide range of Indian exports, ostensibly as part of its “reciprocal tariff” strategy targeting countries with higher duties on U.S. goods. This aggressive protectionist stance, which has persisted into January 2026, has made the bilateral trade climate volatile. Key Indian export sectors such as textiles, gems and jewellery, and agrifood products now face unpredictable market conditions, encouraging firms to defer or relocate investment plans amid fears of fluctuating duties and shrinking margins. Even as India’s exports have shown resilience in some months, the unpredictability of tariff levels continues to cast a shadow over investor confidence and long-term planning.<sup>6</sup>
- **Strain on Strategic Partnerships** - Economic friction resulting from the tariff war has increasingly strained the broader strategic partnership between India and the United States. Historically, both countries have collaborated on regional security, defence and economic integration in the Indo-Pacific. However, punitive tariffs have undermined political goodwill, prompting questions about the sustainability of such cooperation when economic interests are in sharp conflict. Internal dissent within US political circles highlighted by leaked statements from prominent lawmakers criticizing the Trump administration’s tariff approach, further reflects unease and could affect diplomatic harmony.<sup>7</sup>
- **Fragmentation of the Indo-Pacific Economic Architecture** - The persistence of bilateral disputes like the India–US tariff war contributes to the fragmentation of the regional economic order. Instead of forging cohesive, rules-based trade frameworks, competing tariffs and policy divergences risk creating a patchwork of economic blocs with differing standards. In response, India has pursued alternative trade agreements with partners such as the European Union and Canada to diversify market access and reduce dependence on the US. This shift, while

beneficial in broadening trade linkages, also reflects a more fragmented Indo-Pacific economic architecture where cooperative frameworks are challenged by unilateral measures.<sup>8</sup>

### **Opportunities Emerging from Trade Tensions**

- **Recalibrating India's Economic Diplomacy** - The ongoing tariff conflict, sparked by the Trump administration's imposition of steep duties on Indian goods (including a punitive 50 % tariff tied to broader geopolitical concerns), has pushed India to rethink its trade policy and diplomatic strategy. Rather than focusing solely on the US market, New Delhi has diversified its economic diplomacy to strengthen ties with other major partners and negotiate new agreements. For instance, India concluded a major trade deal with the European Union in January 2026—described as the “mother of all deals”—which aims to open a market of more than two billion people and offset tariff pressures from the US dispute.<sup>9</sup> This recalibration enables India to present itself as a resilient global economic actor, better prepared to negotiate favourable terms in future agreements and reduce bilateral vulnerabilities.
- **Strengthening Regional Partnerships** - With US tariff tensions persisting into 2026 and formal trade talks yet to yield a comprehensive deal, India has accelerated efforts to deepen economic linkages within the Indo-Pacific. Engagements with ASEAN countries, Australia and Japan have taken on greater importance as India seeks alternative export destinations and strategic collaboration in trade and technology. Additionally, regional supply chains have begun to adjust, with Indian exports to markets like China demonstrating significant growth as businesses diversify away from reliance on a tariff-strained US market.<sup>10</sup>
- **Supply Chain Diversification and Domestic Capacity Building** - The tariff war has encouraged India to focus on strengthening its domestic manufacturing base under initiatives such as “Make in India”. By attracting investment into sectors hit by tariffs—textiles, auto components and other labour-intensive industries—India is positioning itself as a competitive alternative source for global supply chains. At the same time, diversification reduces dependence on any one market and enhances resilience against external shocks, enabling greater economic stability in a volatile global environment.

## Conclusion

The Indo–US trade war has become a critical stress test for the evolving Indo-Pacific economic order, especially following the re-imposition of protectionist tariff measures. While initially framed as a disagreement over tariffs, market access and trade imbalances, the conflict now reflects deeper structural changes in the global political economy. Rising economic nationalism, strategic competition and diminishing trust in multilateral trade institutions have collectively transformed bilateral trade frictions into a broader regional concern. As a result, the Indo-Pacific has witnessed heightened uncertainty, disruptions in established trade norms and a gradual reconfiguration of supply chains, compelling regional economies to reassess their trade dependencies and strategic priorities.

For India, the trade war presents a complex dual challenge. On one hand, New Delhi must respond to tariff pressures and protect its domestic industries without allowing economic frictions to undermine the broader Indo–US strategic partnership, which remains central to regional security, technological cooperation and the balance of power in the Indo-Pacific. On the other hand, the dispute has acted as a catalyst for India to accelerate economic diversification, deepen engagement with alternative partners and strengthen initiatives such as domestic manufacturing, supply-chain resilience and regional economic integration. These adjustments highlight India's attempt to convert short-term trade disruptions into long-term structural advantages.

Ultimately, the future stability of the Indo-Pacific economic order will depend on the ability of major powers to move beyond unilateralism and revive confidence in rules-based trade governance. Constructive dialogue, pragmatic compromise and renewed commitment to multilateral principles are essential to prevent trade conflicts from escalating into strategic fragmentation. Only through cooperative economic frameworks can the Indo-Pacific sustain an inclusive, predictable and resilient economic architecture in an increasingly uncertain global environment.

## References

1. *Reuters*. (2026, January 5). *Trump warns of higher tariffs on India over its Russian oil purchases, signalling deepening trade tensions*. *Reuters*. <https://www.reuters.com>
2. *Outlook India*. (2026). *The Big Bang*. *Outlook India*. <https://www.outlookindia.com/international/the-big-bang-trump-resolution>
3. *Economic Times*. (2026). *Trump's tariffs may spike freight costs by 30%; India set to ride the supply chain shake-up*. *The Economic Times*.

- <https://economictimes.indiatimes.com/small-biz/trade/exports/insights/trumps-tariffs-may-spike-freight-costs-by-30-india-set-to-ride-the-supply-chain-shake-up/articleshow/120605513.cms>
4. Reuters. (2026, January 29). India's textile exporters pin hopes on EU deal after US tariff blow. Reuters. <https://www.reuters.com/world/india/indias-textile-exporters-pin-hopes-eu-deal-after-us-tariff-blow-2026-01-29/>
  5. NDTV. (2026). US at risk of losing India as strategic partner: Ex-US official Christopher Padilla amid Trump tariff row. NDTV. <https://www.ndtv.com/india-news/us-at-risk-of-losing-india-as-strategic-partner-ex-us-official-christopher-padilla-amid-trump-tariff-row-9050309>
  6. Outlook Business. (2026). Trump tariffs risk upending India's key exports: Here are the most vulnerable sectors. Outlook Business. <https://www.outlookbusiness.com/corporate/trump-tariffs-risk-upending-indias-key-exports-here-are-most-vulnerable-sectors>
  7. Navbharat Times. (2026). भारत के खिलाफ टैरिफ वॉर से क्या ट्रंप की पार्टी में बढ़ गई है दरारें? सीनेटर के ऑडियो लीक से अमेरिका में मचा बवाल. Navbharat Times. <https://navbharattimes.indiatimes.com/india/india-us-trade-deal-us-senator-audio-recordings-leaked-how-rifts-within-trump-party-tariff-war-uproar-impact-delhi-relation/articleshow/127525543.cms>
  8. Navbharat Times. (2026). ट्रंप को रेंगा: EU-कनाडा के साथ ट्रेड डील कर भारत ने अमेरिका को दिया बड़ा झटका. Navbharat Times. <https://navbharattimes.indiatimes.com/india/trump-shocked-india-isolates-america-by-striking-trade-deals-with-eu-and-canada/articleshow/127768844.cms>
  9. Foreign Policy. (2026, January 27). India, EU clinch long-delayed trade deal amid Trump's tariff war. Foreign Policy. <https://foreignpolicy.com/2026/01/27/india-european-union-eu-free-trade-deal-trump-tariffs/>
  10. Times Now Hindi. (2026). India exports to China jump 22% in H1 FY26 during Trump tariffs war. Times Now Hindi. <https://www.timesnowhindi.com/photos/business/india-exports-to-china-jump-22-percent-in-h1-fy26-during-trump-tariffs-war-photo-gallery-153064153>

**Paper Received : 05 Feb. 2026**

**Paper Accepted : 25 Feb. 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## Quality of Life of adolescences in relation to extroversion-introversion

*Monika Ranjan \**

### *Abstract*

*For every human, quality of life (QOL) is most important variable for any human because it goes beyond simple survival to include general well-being, happiness, and fulfilment, impacting individual health, societal advancement, and economic development by emphasizing holistic elements like relationships, physical and mental health, purpose, security, and environment, making life more meaningful and productive for people and communities, whereas introversion-extroversion is a personality trait, which was firstly introduced by Carl Jung (1920s). Adolescence period is a very crucial period for any human. Therefore, this study examined the significant differences between male adolescences- extrovert & introvert and female adolescences- extrovert & introvert in related to quality of life (QOL). The aim of the study was to find out the differences between extrovert-introvert adolescences on quality of life. Population of this study is Lucknow city. A total 60 adolescences (30 male and 30 female) participated. Dr. P.F. Aziz & Dr. Rekha Agnihotry's Introversion-Extroversion Inventory and Dr. Vendana Kaushik & Ms. Purva Jaggi's Quality of life (QOL) scale were administered in present study; we have found that introversion-extroversion has a significant difference on quality of life (QOL). There is no significant difference between male adolescences and female adolescences related to quality of life (QOL). Extrovert male adolescences and introvert male adolescences have significant difference on QOL. Similarly, extrovert female adolescences and introvert female adolescences have significant difference on QOL and interaction effect between extroversion-introversion and adolescences on quality of life was found to be insignificant.*

**Keywords:** *Quality of life, extroversion-introversion, adolescences, gender.*

### **Introduction**

**A. Extroversion-Introversion:** The prominent Swiss psychologist Carl Jung (also known as Carl Gustav Jung) coined the terms extrovert and introvert in the 1920s, characterizing them as personality types based on how people direct their energy: outward (extrovert) or within (introvert). Jung's

---

\* Assistant Professor (Guest), Department of Psychology, Maharaja Suhel Dev State University, Azamgarh (U.P.)

theory, which was part of his larger analytical psychology, classified people based on their propensity for social contact and exterior vs. interior worlds, albeit current psychology sees it as a continuum rather than stark opposites.

**Extroversion:** Extraversion is the state of primarily seeking enjoyment from outside of oneself. Extraverts like human connection and are typically cheerful, chatty, aggressive, and social. Extraverts are energetic and thrive in social situations. They like activities that include huge crowds, such as parties, community events, public protests, and corporate or political organizations. They also function effectively in groups. An extraverted individual is more likely to appreciate time spent with others and find less satisfaction in time spent alone. They are more stimulated when they are around other people, and they are more likely to become bored when they are alone.

**Introversion:** Introversion is the state of primarily seeking enjoyment from one's own mental experiences. Introverts are often viewed as more quiet or introspective. Some well-known psychologists have described introverts as having energy that expands during thought and dwindles during conversation. This is comparable to Jung's perspective, albeit he emphasized mental energy rather than physical energy. Few current concepts make this difference. Introverts frequently like solitary pursuits like reading, writing, and meditation. An introvert prefers to spend time alone and finds less satisfaction in spending time with big groups of people. Too much stimulus from social events and interaction may quickly overwhelm introverts; some have even described introversion as a preference for calm, less exciting external environment. They like to watch circumstances before taking part and prefer to focus on one activity at a time. This is particularly noticeable in growing kids and teenagers. Before speaking, they are more analytical.

**B. Adolescence:** The transitional stage of human physical and psychological development known as adolescence (derived from the Latin *adolescere*, which means "to mature") usually takes place between puberty and adulthood, which usually corresponds to the age of majority. Although adolescence is typically connected with adolescence, its physical, psychological, or cultural manifestations might start earlier or finish later. Preadolescence is when puberty usually starts, especially in females. Cognitive and physical development can continue throughout adolescence, especially in males. Adolescence can only be roughly identified by age, and experts cannot agree on a specific description. Certain definitions begin at

age 10 and conclude at age 30. Adolescence is defined by the World Health Organization as the period of life between the ages of 10 and 19. Hormones cause the physical changes that occur throughout puberty. Cognitive changes include improvements in complex and abstract thought, as well as development that occurs at different rates in different parts of the brain, which increases adolescents' proclivity for risky behaviour because increases in sensation-seeking and reward motivation come before increases in cognitive control. Adolescents' relationships with their parents undergo a time of redefinition during which adolescents gain autonomy and features of parenting, such as distal monitoring and psychological control, become more important. Peer interactions are crucial sources of support and companionship during adolescence, but they can also foster harmful behaviours. Same-sex peer groups morph into mixed-sex peer groups, and teenagers' romantic connections develop within these groups. Adolescents establish their identities as they explore and commit to various roles and ideologies. Nationality, gender, ethnicity, social class, religious background, sexual orientation, and genetic variables all influence how teenagers behave and how others react to them, and all contribute to adolescent variety.

**C. Quality of Life:** Quality of life (QOL) is a holistic term that assesses an individual's well-being. The debate and usage of QOL as a quantifiable outcome in health has grown in recent decades, as healthcare has changed from a disease-focused biological paradigm to a more holistic, well-being-focused bio-psycho-social one. QOL has also grown in importance as medical treatments and illness management have improved, resulting in longer lives for individuals in general, and especially those living with chronic conditions. The notion of quality of life has been contested in research, and no specific definition has yet been established. This is because various people, communities, and civilizations define quality of life differently. This is the issue of defining and assessing quality of life. The individual's perspective is intrinsic in QOL, but it is difficult to define and assess effectively in clinical practice. In addition, the word QOL is not always used consistently or individually. In research and practice, the words "health," "perceived health," "health status," "HRQOL," and "QOL" are frequently used interchangeably, contributing to the ambiguity around the idea of quality of life. Physical health, mental health, social health, and functional health are the four dimensions of health-related quality of life. The World Health Organization (WHO) provides one common definition. The WHO defines quality of life as "...an individual's perception of their position in life in the context of the culture and value systems in which they

live, as well as their goals, expectations, standards, and concerns." It is a wide notion that is influenced in complicated ways by a person's physical health, psychological condition, personal views, social interactions, and relationship to conspicuous characteristics of their surroundings."

### **Objectives of the study**

1. To find out significant difference between male adolescences and female adolescences on quality of life.
2. To find out significant difference between male extrovert and male introvert on quality of life.
3. To find out significant difference between female introvert and female extrovert on quality of life.
4. To find out effect between extroversion-introversion and adolescences on quality of life.

### **Hypothesis**

- Ho1.** There will be no significant difference between male adolescences and female adolescences on quality of life.
- Ho2.** There will be no significant difference between male extrovert and male introvert on quality of life.
- Ho3.** There will be no significant difference between female introvert and female extrovert on quality of life.
- Ho4.** There will be no interaction effect between extroversion-introversion and adolescences on quality of life.

### **Rationale of the study**

Adolescent Quality of Life (QoL) is critical because adolescence is a critical, rapidly changing period (biological, social, and psychological) when foundational health, self-identity, and lifestyle choices are made, influencing long-term well-being, necessitating tailored approaches beyond child/adult models to inform effective health policies, interventions, and promote positive development in this large global population. It assists in identifying specific aspects such as peer relationships, self-image, family support, and school life that drive teenage pleasure, shifting the focus away from problem-solving and toward holistic living. Another variable extroversion-introversion, Although extraverts frequently attribute higher overall happiness due to expectations from society and more frequent

pleasant feelings from social engagement, introverts can achieve a high quality of life through close relationships, introspection, and finding satisfaction in quieter pursuits; both thrive when leveraging their natural tendencies, as the "best" life is determined by individual needs for stimulation, strong connections, and purpose rather than being purely extroverted or introverted.

Quality of life and the combination of extroversion and introversion in adolescence have not been extensively studied. I thus made the decision to investigate these factors to narrow the knowledge gap in these variables and fields.

## Method

### Variables

- Independent Variable: Male-female adolescences, Extroversion-Introversion.
- Dependent Variable: Quality of life.

### Sample

In this present study, I selected 60 adolescences (30 male and 30 female) of Lucknow city.

### Instrument

***Introversion-Extroversion Inventory ( Dr. P.F. Aziz & Dr. Rekha Agnihotry):*** This scale consists 60 items in 2 areas - I. Introversion, II. Extroversion. This scale is 2 point scale, "Yes" and "No". The language of this scale is Hindi. The reliability of this scale was found test-retest reliability is 0.91 and criterion related validity of this scale was found to be 0.95 by author.

***.Quality of life (QOL) scale (Dr. Vendana Kaushik & Ms. Purva Jaggi):*** This scale consists 28 items in 4 quality of life area- I. Physical dimension, II. Cognitive dimension, III. Emotional Dimension, IV. Social dimension. Item number 1,6,7,8,10,11,16,17,18,21,22,24,25 and 27 are negatively word items and remaining items are positive words. Negatively word item scored from 4 to 0 and positively word item scored from 0 to 4. This scale is five point scale from strongly agree to strongly disagree. The language of this scale is Hindi. The reliability of this scale was found by test-retest reliability is 0.75 and criterion related validity of this scale was found to be 0.87 by author.

### Procedure

For the current study, I initially went to Lucknow and administered the introversion-extroversion scale to adolescents. After scoring, I chose 30 male adolescents: 15 extroverts and 15 introverts. Similarly, 30 female adolescents were chosen. This manner, the total number of subjects is 60. The quality-of-life scale was then administered to the 30 male and 30 female adolescent participants. This is how I obtained the data for my research.

### Statistics

In order to determine the significant differences between male-female adolescences, extroversion and introversion, and quality of life, 2\*2 ANOVA was employed in this study.

### Results

The result of this study showed in the table:

**Table No. 1**

**Summary of ANOVA**

SOURCE	SS	df	MS	F	P Value
A-Male-Female Adolescences	240	1	240	<b>0.49495</b>	<b>&lt;.05 NS</b>
B-Extroversion-Introversion	2693.4	1	2693.4	<b>5.554574</b>	<b>&gt;.01 S</b>
A*B	552.0667	1	552.0667	<b>1.138522</b>	<b>&lt;.05 NS</b>
WITHIN	27154.27	56	484.8977		
TOTAL	34125.2	59			

**Table No. 2**

HYPOTHESIS		ACCEPT/REJECT
Ho1	There will be no significant difference between male adolescences and female adolescences on quality of life.	Accepted
Ho2	There will be no significant difference between male extrovert and male introvert on quality of life.	Rejected
Ho3	There will be no significant difference between female introvert and female extrovert on quality of life.	Rejected
Ho4	There will be no interaction effect between extroversion-introversion and adolescences on quality of life.	Accepted

### Interpretation and Conclusion

Looking at the results, it is clear that introversion-extroversion has a significant difference on quality of life (QOL) but there is no significant difference between male adolescences and female adolescences related to quality of life (QOL). The F distribution shows that at 1 df on the larger mean square and 56 df on the smaller mean square, F should be greater than 4.03 and 7.17 respectively to be significant at the .05 and .01 level. The obtained F is 0.49 is clearly no significant at the .05 level. Similarly, extrovert male adolescences and introvert male adolescences have significant difference on QOL. Here F should be 4.03 and 7.17 respectively at 1 df and 56 df to be significant at .05 and .01 levels, whereas the obtained F is 5.55. Obviously this is more significant at the level .05 level. Similarly, extrovert female adolescences and introvert female adolescences have significant difference on QOL. Here F should be 4.03 and 7.17 respectively at 1 df and 56 df to be significant at .05 and .01 levels, whereas the obtained F is 5.55. Obviously this is more significant at the level .05 level. Hence interaction effect between extroversion-introversion and adolescences on quality of life was found to be insignificant because here F is 1.13 is not significant.

### References

- McDonald T, Shaw D. Benchmarking life quality support interventions in long-term care using the Long-Term Care Quality of Life scale. *Nurs Health Sci.* 2019 Jun;21(2):239-244.
- Singh S, Kumar S, Sarkar S, Balhara YPS. Quality of Life and its Relationship with Perceived Stigma among Opioid Use Disorder Patients: An Exploratory Study. *Indian J Psychol Med.* 2018 Nov-Dec;40(6):556-561.
- Eysenck, H. J., & Eysenck, M. W. (1985). *Personality and individual differences: A natural science approach.* Plenum Press.
- Jung, C. G. (1923). *Psychological types: Or the psychology of individuation.* Harcourt, Brace.
- Walker, D. L. (2021). *Extraversion – Introversion.* In B.J. Carducci & C.S. Nave (Eds.), *The Wiley encyclopedia of personality and individual differences, models and theories* (pp. 159–163). John Wiley & Sons, Incorporated.

**Paper Received : 20 Dec. 2025**

**Paper Accepted : 02 Feb. 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## Influence of Jewellery Advertisement in the Purchase Behavior

Dr. Prabhavathy C. \*

### *Abstract*

*Advertisement is a powerful tool to influence the purchase behavior of consumers. Many businesses consider advertisement as an effective media because it can attract consumers attention. Well defined advertisement inspire consumers to purchase a product. Advertising helps in reminding consumers about brand of various varieties and encouraging repeated purchases. It help to share social norms, lifestyle and cultural values. The relevance of advertising is that it is the most effective way for reaching mass audiences, creating awareness and building brand preferences. In fact, the goal of all advertising is to influence peoples attitudes and buying behavior and to bring the needed customers in their track . In the modern digital word everything available in the global platform can be analysed by checking their advertisement. There are many medium for that. In a competitive environment Jewellery owners depends television as a medium to advertise their brand by investing huge amounts to celebrities'. This study aimed to analyze the effectiveness of branded jewellery advertisements. The Researcher has chosen a descriptive type of study to describe the characteristics of people by studying the recall of jewellery advertisements in television, attitude towards the brand and purchase intention.*

**Keywords:** *Advertisement, customers, purchase behavior, Jewellery, brand*

Many business owners consider advertisement as an effective media because it can attract consumers attention. It is used for communicating business information to the present and prospective customers. It usually provides information about the advertising firm, its products qualities, place of availability of its products, trade mark brand etc. Advertisement is indispensable for both the sellers and the buyers. In the modern age of large scale production and consumerism, producers cannot think of pushing sale of their products without advertising them. The relevance of advertising is that it is the most effective way for reaching mass audiences, creating

---

\* Associate Professor, Department of Economics, SN College for Women, Kollam University of Kerla, Kerla

awareness and building brand preferences. From the behavioral point of view, it is an important tool that influences the buying behavior of consumers. It is an accepted fact that all behavior starts with motivation. Advertising motivates people by stimulating their basic needs that activates behavior. Viewing from the angle of psychology, consumers behavior can be molded by the medium of advertisement. The ultimate aim of every advertising strategy is to instigate the actual behavior of targeted group. Jewellery is an expensive purchase. In the recent past the growth of advertisement volume showed that television advertisement for jewellery has dropped considerably. Too much expense is spent on television advertisement especially with celebrity endorsements. If an advertising strategy fails to achieve the same, the huge amount spent on advertisement may not worth it. It is to be investigated. Whereas no attempt has been made by the researchers to evaluate the effectiveness of jewellery advertisements in this era. This study aimed to analyze the effectiveness of branded jewellery advertisements on purchase behavior of television viewers.

### **Objective of the study**

To understand the influence of jewellery advertisements of television in the purchase behavior of consumers

### **Methodology**

The present study is based on information gathered from both primary and secondary data. The secondary data was collected from different sources of literature including journals, books, internet etc. To collect the primary data from Kerala three districts Thrissur, Kottayam and Ernakulam were selected. The sample size considered for the study was 376. These areas were selected based on the total branded Jewellery purchase and show rooms available there. Samples size is proportionately distributed among these three cities. Accordingly 131 samples were drawn from Kottayam 112 from Kochi (Ernakulam) and 133 samples from Thrissur. The Researcher has chosen a descriptive type of study to describe the characteristics of people by studying the recall of jewellery advertisements in television, attitude towards the brand and purchase intention. The study was conducted on retail advertisement of branded jewellery in television channels. This study was carried out by using a questionnaire and the collected data were analysed by using simple statistical tools.

Advertising is a means of communication with the users of a product or service. Advertisements are messages paid for by those who send them

and are intended to inform or influence people who receive them as defined by the Advertising Association of the UK. Advertisement is always present though people may not be aware of it. This is the age of digitalization. In the present world, advertising uses every possible media to get its message through different medium. It does this via television, print media, internet, and even people themselves(endorsements).

Television is the most popular choice among all media vehicles for advertisers. It has an extensive reach and advertising this way is ideal if you enter to a large market in as large area. Television advertisements have the advantage of sight, sound, movement and colour to persuade a customer to buy from you. Asianet, surya flowers mazhavil Manorama and Kiran were the leading advertisement channels of Kerala. Advertisements of different retail brands of jewellery are selected based on the frequency of advertisements shown in these channels. The frequency of jewellery advertisements were observed for a period of four months from July 2025 to September 2025. Specifically this period was selected because this period has peck jewellery consumption related to marriage and festivals. Simple statistical tools were used for analysis. The researcher here analyzed the Television viewing habits of the respondents and an attempt has been made to know about it.

#### *Viewership of Malayalam TV Channel*

<b>Television Channels</b>	<b>No of Responses</b>	<b>In Percentage</b>
Asianet	188	50 %
Surya	31	8%
Kairali	10	3 %
Amritha	7	2%
Mazhavil Manorama	109	29%
Kiran	7	2%
Others	24	6%
Total	376	100%

*Source : Field study*

The above table shows that out of seven channels Aianet is having more views (188) which are about 50 percent of the total viewers. Mazhavil Manorama is the second channel having 109 viewers which is around 29 %. Where as Amrita and kiran are having least number of viewers which are only 2 percent (7) viewers. The television market is highly concentrated on

Asianet and mazhavil manorama. They together have 79 percent of viewers. Realizing the television viewing habits of the respondents, the organized retailers of branded jewellery may choose Asianet or Mazhavil Manorama TV channels and try to place their product advertisements during prime time (between 7 pm and 9 pm) programmes such as News Bulletins and reality shows.

***Distribution of Sample Respondents by Number of times view Advertisements***

<b>View of Advertisement</b>	<b>No of Respondent</b>	<b>Percentage</b>
Very Often	42	11 %
Often	180	48 %
Sometimes	49	13%
Rarely	45	12 %
Never	60	16%
Total	376	100

*Source : Field study*

The above table shows the respondents attitude towards television advertisement views. 42 (11) percent of the respondent very often watch advertisement whereas 180 (48%) of the respondents often views advertisements. 45 respondents (12) percent stated that they rarely watch advertisements. Whereas 60 (16%) responded that they never watches advertisement. The table summarizes that majority of the viewers even if rarely they watch advertisement are having favourable attitude towards advertisement. Because people want to know about the current market trend. It help to generate awareness about the product. 60 viewers (16%) responded that they never see advertisement because it is a time-consuming process so they skip that. They are the intentional viewers. Within the busy schedule of their life they finding time to watch the targeted programmes only where advertisement is a time consuming hindrance only.

***Purchase intention enforced by Jewellery Advertisement in TV***

<b>Purchase intention of respondents</b>	<b>No. of Responses</b>	<b>In Percentage</b>
Have an interest in the product and will find out more	124	33 %
Have an interest in the product and will buy it	57	15 %

Bout Already and will keep on buying it	50	13%
Have bought already and will not buy it again	16	4 %
No Intention to buy the branded jewellery	129	35 %
Total	376	100 %

Source : Field study

The above table reveals the influence of TV advertisement of consumers buying behavior. It is observed that among 33 percent of television viewers, purchase intensity has created. In 15 % of the television viewers advertisement has created both interest and purchase intension. 13 percent of the television viewers have already purchased jewellery after seeing the advertisement and will keep on buying it. Whereas 35 percent of the respondents do not have an intention to buy the branded jewellery even after exposed to television advertisements. The conclusion derived from the table is that even after watching advertisement of branded jewellery products majority of the customers have no intention to purchase the branded jewellery product. Purchase behavior of majority of the customers depends on many other factors. If customers are having requirement they will purchase. This table reveals the majority customers purchase behavior is not seriously influencing advertisement.

***Influence of Advertisement in Purchase intention and Behavior  
(Descriptive statistics)***

	N	Minimum	Maximum	Mean	Std. Deviation
Celebrity based advertisement endorsed branded shopping	376	1	5	3.59	1.024
Celebrity based television advertising	376	1	5	3.45	.978
Buying decision boosted by celebrity	376	1	5	2.93	1.065
Celebrity based television advertising increases acceptance of endorsed brands	376	1	5	3.14	1.000

Here respondents were asked to rate the influence of celebrity based television advertising on their choice behavior. For this five point scale was used with score ranging from 1 to five (measuring one who strongly disagree

to strongly agree. The above table shows that celebrity-based television advertising helps the customers to remember the endorsed brand during shopping with a mean of 3.59. It is also found that celebrity based television advertising increases awareness of endorsed brands with a mean value of 3.45. Comparatively celebrity advertisement helps in acceptance of endorsed brands with a mean value of 3.14.

### **Conclusion**

Advertisement is a form of marketing communication through which a business organization informs the targeted group about its products. The researcher tried to measure behavioral effect of advertisements on buying behavior. The study also brings out the television viewing habits of the respondents in the study area. It is observed that among the television channels watched by sample respondents, 50% of the respondents watch rated channels such as Asianet and Mazhavil manorama. 45 percent of the respondents watch television between 7 pm and 9 pm and 40 % of the respondents watch after 9 pm. While watching television majority of the respondents (52 percent) skip advertisement. Whereas only minority (6 percent) watch the advertisement with full attention. It is observed that jewellery advertisements have created awareness to 33 % of the consumers and thus motivated them to buy the product. They found advertising as a useful tool for educating themselves on how to use the product and for getting awareness about the branded products.

Whereas 35 percent of the respondents do not have an intention to buy the branded jewellery even after exposed to television advertisements. The likelihood of buying the jewellery based on the favorite advertisement shows that 61 percent have not decided to buy jewelers, based on the favorite advertisements as their opinion is neutral. 21 percent of the respondents are positively influenced by advertisements in their purchase decision of branded jewellery. One of the major findings of the study is that the television advertisements are not taken seriously by the respondents and it also loses its impact on the purchase intension of the respondents.

### **References**

1. *Barrie Gunter; Adran Fyrnham; Christopher Beeson; (1997), Recall of Television Advertisements as a function of program evaluation, The Journal of psychology, 131(5), pp.541-553.*
2. *Bran D Till., Daniel W. Baack (2005), Recall and persuasion, Journal of Advertising, Vol. 34, No.3, pp 47-57.*

3. *Claire E. Norris and Andre M Colman (1993) Context effects on memory for television Advertisements, Social Behavior and Personality*7, 21(4), pp 279-296.
4. *Cornelia Pechmann and David W. Stewart, The effects of Comparative Advertising on Attention, Memory and Purchase Intentions, Journal of Consumer Research, Vol. 17, pp 180-191*
5. *David W. Stewart(1986). The Moderating role of Recall, Comprehension and Brand differentiation on the persuasiveness of television advertising, Journal of Advertising Research , Vol.25, pp 43-47.*
6. *Gerald Stone, Donna Besser., Loran E. Lewis (2000) Recall Liking and Creativity in TV Commercials: A New Approach , Journal of Advertising Research Vol. 40. 2000, No.3, pp7-18*
7. *James H . Leigh ()1984), Recall and Recognition performance for Umbrella Print Advertisements, Journal of Advertising , Vol.13, No.4, pp 5-30.*

***Paper Received : 02 Jan. 2026***

***Paper Accepted : 12 Feb. 2026***

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## **Salient Features of Buddhism as a Religion**

*Dr. Pawan Kumar Yadav \**

### ***Abstract***

*Like Islam and Christianity, Buddhism has a definite origin in a definite founder, Gautama, the Buddha left his house for ever and went out in search of real knowledge – Buddhi or Prajñā - with the help of which people could be saved. It is said; he got such intuitive light or Bodhi while he was in a Samadhi beneath a tree (Now called Bodhi-Tree) in Bodh-Gaya. Thenceforward, he was begun to be called the Buddha, the enlightened one. After attaining this Enlightenment, Buddha did not sit idle; rather he worked day and night to instruct people regarding the path through which they could save themselves from the pangs of worldly suffering.*

**Keywords:** *Bodhi–Enlightenment, Bodhisattvas-Wisdom Beings, Tripitaka-Three Baskets*

One *Buddhist* scholar has insightfully noted that “*Buddhist* teaching is transformation manifesting as information.”<sup>1</sup> This is a particularly important point to bear in mind when it comes to texts, language, and their relationship to *Buddhist* teachings (the Dharma).

### **The Tripitaka**

The authoritative collection of Buddhist texts is known as the Tripitaka (Three Baskets). This term comes from the tradition that the texts were written on palm leaves stitched together by threads (from which the term sutra, the term designating a sermon by the Buddha, comes) and then kept in three baskets.

Vinaya (Discipline)<sup>2</sup>- This “basket” includes texts on personal and social morality, precepts of monastic orders, regulations governing the entire Buddhist community (Sangha), and rules concerning the consequences of breaking monastic precepts. The most important part of the Vinaya is the Code of Discipline, a body of rules covering all aspects of monastic life designed to promote the peaceful, orderly way of conduct necessary for attaining nirvana.

---

\* *Assistant Professor, Department of Philosophy, C.M.P. Degree College, University of Allahabad, Prayagraj, (U.P.)*

Sutras (Discourses)<sup>3</sup>- These texts appear to be the closest to the Buddha's "original teachings." The sutras set forth the Buddha's teachings through stories, illustrations, anecdotes, and so forth. Often delivered in response to specific questions and addressed to specific audiences, the sutras do not present a systematic philosophy but are the best sources for the Buddha's biography.

Abhidharma (Further Teachings, elaborations on sutras)<sup>4</sup>- Perhaps the most controversial of the "baskets" Abhidharma texts attempt to formally systematize the teachings found in the sutras. As the most philosophical of the "baskets", the Abhidharma likely developed from the necessity of explaining and defending Buddhist teaching and were gradually expanded over time.

The later followers of Buddha, in India and outside, developed the philosophical theories contained in Buddha's teachings, and many schools thus came into existence. Of these the four schools that became well known in Indian philosophy may be mentioned here.

### **Various Schools of Buddhist Philosophy**

**i. The Mādhyamika or Sūnyavāda School.-** According to this, the world is unreal (sunya); mental and non-mental phenomena are all illusory. This view is known as nihilism (sūnyavāda).<sup>5</sup>

**ii. The Yogācāra or Vijñānavada School.-** This holds that external objects are unreal. What appears as external is really an idea in the mind. But mind must be admitted to be real. It is self-contradictory to say that the mind is unreal; for, then, the very thought that mind is unreal stands self-condemned, thought being an activity of the mind. This view is called subjective idealism (vijñānavāda).<sup>6</sup>

**iii. The Sautrāntika School-** This holds that both the mental and non-mental are real. If everything that we perceive as external were unreal, then our perception of an object would not depend on anything outside the mind but absolutely on the mind. But we find that the mind cannot perceive any object, like a tiger, at any place it likes. This proves that the idea of the tiger, when we perceive it, depends on a non-mental reality, the tiger. From the perceptual idea or representation of a tiger in the mind we can infer the existence of its cause, the tiger, outside the mind. Thus external objects can be inferred to exist outside the mind. This view may be called

representationism, or theory of the inferability of external objects (bāhyānumeyavāda).<sup>7</sup>

**iv. The Vaibhāsika School-** This school agrees with the last on the point that both internal and external objects are real. But it differs from it regarding the way external objects are known. External objects, according to the Vaibhasikas, are directly perceived and not inferred from their ideas or representation in the mind. For, if no external object were ever perceived corresponding to any idea it would not be possible to infer the existence of an external object from any idea. This view may be called direct realism, because it holds that external objects are perceived directly (bāhya-pratyaksa-vāda).<sup>8</sup>

Buddhism is divided, on religious matters, into the two well-known schools, Hinayana, flourishing now in the south, in Ceylon, Burma and Siam, and Mahayana, found now in the north, in Tibet, China and Japan. The first two of the four philosophical schools mentioned above come under the Mahayana and the last two under the Hinayana.

### **Branches**

Buddhism is most easily understood as encompassing three different traditions or branches: Theravada, Mahayana, and Vajrayana. All three derive from the original movement founded by the historical Buddha, and all three share the core teachings. However, each of these branches reflects distinct historical and cultural developments, and there are some important differences between them.<sup>9</sup> In a sense they comprise three separate paths, each claiming to lead to nirvana, the state beyond suffering.

### **Theravada**

Theravada is the oldest of the three branches of Buddhism. It is one of the 18 schools formed as a result of the second great council of the Buddhist order held some hundred years after the Buddha's passing. According to traditional accounts, that council engendered a major schism in which one sect calling themselves the "Members of the Great Order" (Mahasangikas) split off from the rest of the Buddhist community (Sangha) because of differences in monastic discipline and doctrine. The remaining monks, claiming to maintain the true tradition transmitted from the days of Siddhartha Gautama, referred to themselves as those who followed the "Teaching of the Elders", a title that was eventually rendered into Pali as Theravada.<sup>10</sup>

As its name suggests, Theravada is considered the most conservative of Buddhist sects. Theravada Buddhists consider the Pali canon to be the only authoritative collection. Theravada accepts all the common core teachings of Buddhism (the Three Marks of Existence, Four Noble Truths, Eightfold Path, etc.) Theravadin Abhidharma focuses less on speculative metaphysical issues and more on carefully observing human psychology.<sup>11</sup>

In the Theravada perspective, the Buddha was a great man, a model for all Buddhists, and a clear witness to the potential for all people to become enlightened<sup>12</sup>. However, once the historical Buddha passed on his direct influence on the world ceased. The Buddha knows nothing of the world now and cannot come to our aid.

### **Mahayana**

Sometime near the beginning of the Common Era, a major cultural movement began to sweep through Buddhism that resulted in remarkable changes for both monastics and laity. Called Mahayana (Great Vehicle), this new form of Buddhism spread northwest into central Asia and then eastward into China. From China, the Mahayana form of Buddhism eventually spread to Korea, Japan and Vietnam-areas where it still dominates today<sup>13</sup>. Certainly by the third and fourth centuries, there were new Buddhist ordination lineages that distinguished themselves from older forms of Buddhism, which they referred to pejoratively as “Hinayana” (small vehicle). Nonetheless, Mahayana tradition continued to be practiced side by side with these older forms of Buddhism for centuries<sup>14</sup>.

Related to such developments, and a major feature of Mahayana that sets it apart from Theravada and the other “Hinayana” schools, is a far more transcendent view of Buddha. As early Buddhism came into contact with non-Indian theistic traditions, it absorbed some of their views, although it remained uniquely Buddhist. Such teachings were formalized through a doctrine of the Three Bodies of the Buddha<sup>15</sup> (Trikayavada). These are:

1. **The Appearance or Transformation Body:** An earthly manifestation such as Shakyamuni Buddha (Siddhartha Gautama).
2. **The Body of Bliss:** A heavenly Buddha presiding over a particular Buddha realm. The body of Bliss can communicate directly with other celestial Buddhas and is the focus of popular devotion amount Mahayana Buddhists.

### 3. **The Dharma Body:** The one Absolute, Cosmic Reality.

However, the most distinctive feature of Mahayana that sets it apart from Theravada is the role played by “wisdom beings,” or Bodhisattvas. A Bodhisattva is a particularly devout follower of Buddhism who conscientiously vows to aid all other beings in becoming enlightened. Some Mahayana texts even claim that out their great compassion for all suffering beings, Bodhisattvas voluntarily postpone their own entry into nirvana until all beings have attained enlightenment. The Bodhisattva ideal is present in early Buddhism (particularly in the case of stories of Siddhartha’s previous lives, the Jataka tales). But Mahayana greatly expanded upon it. Bodhisattvas share their merit with all beings. Those who are highly advanced along the path are reborn in the heavens, from which they can come to the aid of any and all who call upon them, in some respects resembling saints in popular Christianity.<sup>16</sup>

### **Vajrayana**

The most recent and, in many ways, most exotic of the major branches of Buddhism is Vajrayana. Followers of Vajrayana often describe it as the “third turning of the Wheel of Dharma,” with Theravada and Mahayana being the first and second turnings. Historically, there is some truth to this view, since Vajrayana emerged much later than either Theravada or Mahayana. Sometime around the third century C.E., Vajrayana teachings and techniques rose to prominence in India and spread to other regions of the Buddhist world. It eventually disappeared in Theravada lands and developed only a minor following in Mahayana areas, but it came to dominate in the Himalayan region. Vajrayana Buddhism still is the majority religion in Nepal, Bhutan, Tibet and Mongolia.<sup>17</sup>

Vajrayana is the secret-ritual vehicle of Buddhism. The name Vajrayana can be translated as “diamond vehicle,” emphasizing the diamond qualities of hardness, clarity, and indestructibility. Vajrayana draws on Indian elements, both Hindu and Buddhist. As a strongly ritual tradition, it makes great use of magical chants and syllables (mantras) thought to evoke great spiritual power when properly uttered.<sup>18</sup>

### **Salient Features of Buddhism as a Religion**

- (1) Buddhism is primarily a religion without God. Buddha taught a purely humanistic religion, whose sole concern was the liberation of the suffering man. Man’s only religious obligation is to free himself

from the bonds of worldly suffering by following the eightfold discipline. Of course in later Buddhism, Buddha himself is treated much like a God, but even in that form Buddhism cannot be regarded as a theistic religion, because Buddha is hardly treated as the creator, destroyer etc. of the world. Moreover even in this phase the following of the eightfold discipline for the attainment of Nirvana is taken to be the essence of Buddhist religion.

- (2) Belief in the four noble truths (Chatvari Arya Satyani) and the pursuit of the eightfold discipline (Astangika Marga) seem to be the essence of Buddhism. The four noble truths (I) Duhkha-Arya-Satya (the Noble truth concerning the nature of suffering), (II) Duhkha-Samudaya-Arya-Satya (The Noble Truth concerning the origin of sufferings), (III) Duhkha-Nirodha Arya-Satya (The Noble Truth concerning the removal of suffering and the realization of the state of Nirvana) and (IV) Duhkha-Nirodha Gdmini Pratipad Arya-Satya (The Noble Truth concerning the path leading to the removal of suffering and the attainment of the state of Nirvana). In simple language the four noble truths are<sup>19</sup> - First, there is sufferings everywhere in the world (Sarvam-Duhkham), Second, the suffering can be referred back to a twelvefold chain of causation (Dvadasa Nidan), Third, there can be a cessation of the suffering and the chain of causation can be removed (Nirvana) and Fourth, there are definite ways to remove the chain of suffering (Astangika Marga). The pursuit of the eightfold discipline consists in following the consecutive paths of Right understanding, Right thought, Right speech, Right action, Right livelihood, Right efforts, Right mindfulness and Right concentration.
- (3) Two of the very characteristic beliefs of Buddhism are its belief in the theory of momentariness (Kshanikvada) and in the doctrine of no-soul (Anatmavada), Sarvam Kshanikam, (Everything in momentary) is a very important part of Buddhist faith. Buddhism believes that nothing is permanent, nothing endures for more than a moment, its theory of momentariness is based on a more comprehensive theory of Dependent origination (Pratityas samutpada) according to which everything owes its origin to an antecedent condition which ceases after giving birth to its consequent. Indeed, some scholars say that the history of Buddhism is a history of reinterpretations of Dependent Origination. So important is this teaching that in an early text the Buddha says.

“Whoever sees Dependent Origination see Dharma, whoever sees Dharma sees Dependent Origination?”<sup>20</sup> On ignorance depends mental formation; on mental formations depends consciousness; on consciousness depends mind-and-body; on mind-and-body depends senses; on senses depends contact; on contact depends sensation; on sensation depends craving; on craving depends attachment; on attachment depends becoming; on becoming depends birth; on birth depends old age and death, sorrow, lamentation, misery, grief and despair. Thus does the entire mass of dukkha arise.<sup>21</sup> Attachment with the momentary objects of the world in the cause of suffering. Only the spiritual state of Nirvana is eternal and therefore we should always aim at only that. Clinging to the momentary objects of the world will only bring hopelessness, despair and suffering<sup>22</sup>.

- (4) Buddhism does not believe in Heaven and Hell, and according to it the final destiny of man is the attainment of Nirvana- a state of spiritual freedom and perfection. This state of Nirvana may be attained in this life also and therefore cessation of the present life is not necessary for the attainment of Nirvana. If one becomes able in blowing off all sorts of worldly passions completely by the observance of the eightfold discipline, he has attained Nirvana even in spite of his physical body<sup>23</sup>.
- (5) Buddhism, like existentialism, teaches self-help and self-reliance as the most effective means of attaining perfection (Atma dipa bhava), although unlike existentialism it also believes in the humanistic virtues of interdependence, mutual help universal service and brotherhood<sup>24</sup>.
- (6) Quite in conformity with its humanistic ethics, Buddhism believes in the doctrine of Universal Salvation. It teaches that it is not sufficient for anyone to attain his own salvation. After achieving his own Nirvana, one must work for the Nirvana of others. The ideal of Bodhisatva in Buddhism really teaches this. Buddha’s own life of active service for the liberation of others is a testimony to this<sup>25</sup>.
- (7) Some of the ethical virtues that Buddhism repeatedly emphasizes are those of Non-violence (Ahimsa), Truth (Satya), kindness to all beings, self-restraint, nobleness, chastity etc. Of these, ahimsa is most emphasized<sup>26</sup>.
- (8) The three refuges in the three jewels seem to represent the basic creed of Buddhism-Buddham saranam gachhami, Dhammam

saranam gachhami, Sangham saranam gachhami<sup>27</sup>.

Buddha taught the Eight Fold Path and his luminous leadership gained many followers including Great Emperor Ashoka. The edicts of Ashoka, inscribed in rock pillars, bear testimony to the noble rule's recognition of humanism compassion for all creation and reverence for all life.

At last Buddhism, like Jainism, is an off shoot of Hinduism. Nevertheless, Buddhism is indisputably a separate religion and Philosophy, which has exerted immense influence over the religious and philosophical thinking of the world. It has a greater following in the world and is deemed by most of the western thinkers as a universal religion, rather than a national one. The Buddha's message to mankind was for his spiritual and social ascendance. He called on man for cheerful service to others, love for all life and restraint for all irrational desires. His path is both intellectual and spiritual. And its goal can be attained by self-discipline, plan living and noble thinking.

### **References**

1. Roger J. Corless, *"The Vision of the Buddha: the Space under the Tree"*, New York: Paragon House, 1989, p. 217.
2. Thomson, Jhon, M. *"Introduction to the world's Major Religions; BUDDHISM"*, Vol.3, Greenwood Press. U.S.A. 2006, p.33.
3. *Ibid* p.34
4. *Ibid* p.34
5. Dutta, D.M. & Chatterjee S.C., *"An Introduction to Indian Philosophy"* 8th edition, University of Calcutta 2004, p.31
6. *Ibid* p.31
7. *Ibid* p.32
8. *Ibid* p.32
9. Huston Smith, *"The World's Religions"* New York: Harper Collins, 1991, p.127.
10. Thomson, Jhon, M., *Introduction to the Word's Major Religious Buddhism, Vol. 3, Green word Press, USA, 2006, p.68.*
11. *Ibid*, p.68
12. *Ibid*, p.68
13. *Ibid*, p.71
14. *Ibid*, p.72

15. *Ibid*, p.74
16. *Ibid*, p.74
17. *Ibid*, p.85
18. *Ibid*, p.85
19. Tiwari, K.N., “Comparative Religion” Motilal Banarsi Dass, Varanasi, 1st Edition, 1983, p.48
20. Quoted in Peter Harvey, “An Introduction to Buddhism Teachings, History and Practices” Cambridge: Cambridge University Press, 1990 p.54.
21. From the Samyutta-nikaya, II, 90. Quoted in Donald W. Mitchell, “Buddhism: Introducing the Buddhist Experience”, New York and Oxford: Oxford University Press, 2002, p.40
22. Tiwari, K.N., “Comparative Religion” Motilal Banarsi Dass, Varanasi, 1st Edition, 1983, p.48
23. *Ibid*, p.49
24. *Ibid*, p.49
25. *Ibid*, p.49
26. *Ibid*, p.49
27. *Ibid*, p.50

**Paper Received : 06 Jan 2026**

**Paper Accepted : 15 Feb. 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

# Triangular Dynamics : Nepal, India and China in South Asian Geopolitics

Shivangi \*

## *Abstract*

*The geopolitical configuration of South Asia is increasingly shaped by triangular interactions between small states and competing regional powers. Nepal's strategic location between India and China places it at the center of this evolving regional order. This article examines the triangular dynamics among Nepal, India and China by integrating historical analysis, geopolitical competition and foreign policy behaviour. Drawing on the concepts of strategic hedging and asymmetry, the study analyzes how China's expanding economic and diplomatic engagement with Nepal has transformed traditional Nepal-India relations. It argues that Nepal's foreign policy reflects a calibrated hedging strategy shaped by structural constraints and opportunities, while India and China pursue competitive but non-confrontational approaches. The article concludes by assessing policy implications for regional stability and South Asian geopolitics.*

**Keywords:** *South Asian geopolitics, Foreign Policy, Geopolitical competition, Strategic hedging*

## **Introduction**

South Asia is witnessing a gradual transformation from a relatively hierarchical regional order to a more contested and multipolar geopolitical environment. Central to this transformation is the intensifying rivalry between India and China and its spill-over effects on smaller neighbouring states. Nepal, situated in the Himalayan belt between these two powers, has emerged as a critical geopolitical node (Pokharel, 2024). Historically embedded within India's strategic and economic orbit, Nepal has increasingly diversified its external relations since the early 2000s, particularly through enhanced engagement with China. This shift has introduced a triangular dynamic in Nepal-India relations, redefining regional geopolitics and challenging traditional assumptions of influence and dependency.

---

\* *Research Scholar, Department of Political Science, B.R.A. Bihar University, Muzaffarpur, Bihar*

Early scholars on Nepal-India relations emphasizes historical proximity, open borders, cultural linkages and economic interdependence institutionalized through the 1950 Treaty of Peace and Friendship (Suthar, 2022). This study often frame the relationship, as asymmetrical, with India enjoying structural advantages due to geography and market access. Critical analysis highlight how this asymmetry has periodically generated political resentment in Nepal, particularly during episodes of diplomatic pressure and economic disruption, most notably after 2015 (Baradia & Jain, 2023). The studies on China-Nepal relations has expanded significantly in the last decade. Scholars argue that China's engagement is driven by three primary objectives : Stability on Tibet, countering rival influence, and expanding regional connectivity (Pokharal, 2024). Recent studies emphasize the Belt and Road Initiative (BRI) and trans Himalayan infrastructure projects as instruments of geopolitical influence rather than purely economic ventures (Kumar & Kumar, 2024). China's approach contrasts with India's traditional reliance on historical and Socio-cultural ties. Theoretical contributions increasingly apply small-state behavior, hedging theory and neoclassical realism to explain Nepal's foreign policy choices. Rather than bandwagoning with one power, Nepal seeks to diversify partnerships to maximize autonomy and bargaining leverage (Foreign Policy strategies ..., 2024).

This study situated Nepal within a broader South Asian pattern where smaller states exploit great-power competition to reduce dependence and enhance strategic space. This study adopts a qualitative, analytical methodology grounded in interpretive geopolitics with time frame post 2000 with emphasis on post 2015 developments.

In this article, both, primary and secondary sources are used. In Primary sources, Policy briefs and think-tank reports, official government statement and treaties and in secondary sources, Peer reviewed academic journals, secondary data from reputed databases and academic portal are used. The analysis integrates the Hedging Theory to explain Nepal's foreign Policy behavior, Asymmetry Theory to assess power relations in Nepal-India ties and Geopolitical competition framework to evaluate India-China rivalry in Nepal. This triangulated framework allows systematic assessment of strategic motivations and policy outcomes.

### **Analysis : Triangular Dynamics**

#### **Nepal's Strategic Hedging**

Nepal's foreign policy reflects a deliberate effort to balance

engagement with China while maintaining indispensable ties with India. Nepal, a landlocked nation positioned between two Asian giants India and China – employs strategic hedging as a core foreign policy approach to manage triangular dynamics in South Asian geopolitics. This strategy enables Nepal to avoid exclusive alignment with either powers, instead pursuing a mix of engagement and soft balancing to preserve autonomy, secure economic benefits and mitigate risks from asymmetric power relations. (Johny, 2024) Historically, India has exerted significant influence over Nepal through cultural ties, open borders, the 1950 Treaty of peace and friendship, and economic dominance (Nepal directs approximately 60-80% of its trade toward India). However, perceived Indian interventions, such as the 2015 economic blockade during Nepal’s constitutional crisis, eroded trust and propelled Kathmandu toward Beijing for diversification (Ghosh, 2024). In response, Nepal signed a Transit and Trade Agreement with China in 2016 and joined the Belt and Road Initiative (BRI), gaining access to infrastructure projects, aid, and alternative trade routes (Ghosh, 2024). Chinese infrastructure investment and diplomatic engagement provide Kathmandu with alternatives, while India remains vital for trade, transit, and people-to-people (Foreign Policy strategies....., 2024).

#### **Nepal’s hedging manifests in several key areas**

- **Economic diversification** – China has periodically surpassed India as the largest source of foreign direct investment, particularly post-2014 with investments in hydropower, railway like, proposed Trans Himalayan connectivity and reconstruction aid following the 2015 earthquake. (Foreign Policy Strategies .....,2024) This counters Nepal’s structural dependence on India while avoiding over reliance on Chinese loans, often criticized as potential debt trap diplomacy.
- **Diplomatic flexibility** – Nepal adheres to non-alignment, rejecting military alliances with either neighbour. It engages in joint military exercises with India and limited cooperation with China, while using regional forums to soft-balance India’s influence (Johny, 2024).
- **Regional rivalry context** – As part of south Asia’s “non-nuclear five” (alongside Bangladesh, Bhutan, Maldives and Sri Lanka), Nepal hedges against India’s regional hegemony by selectively aligning with China on economic issues, without provoking full confrontation (Shahid & Sakib, 2023).

These have yielded benefits, including increased bargaining power and development assistance, but faces challenges. Domestic political instability often amplifies shifts and India views Nepal's China engagement as a potential precursor to bandwagoning toward Beijing due to the latter's superior economic capabilities. Earlier analyses highlight the risks of being caught in great power rivalry, advocating trilateral co-operation in areas like hydropower and tourism for mutual gains.

### **India's Strategic Concerns**

India's strategic concerns primarily stem from Nepal's critical geopolitical position as a buffer state between India and China. Historically Nepal has served as a protective shield for India's northern plain, particularly safeguarding the vulnerable Siliguri corridor that connects mainland India to its north-eastern states. The growing Chinese influence in Nepal driven by infrastructure investments and diplomatic engagements, is perceived by India as a direct threat to this buffer role, potentially allowing China greater access to South Asia and altering the regional balance of power (Geopolitical Monitor, 2025). A major concern for India revolves around the dual-use potential of Chinese funded infrastructure projects under the Belt and Road Initiative. Project such as the Pokhara International Airport, Roads tunnels, Hydropower plants and the proposed Jilong-Kathmandu railway are viewed with suspicion due to their proximity to the Indian border and possible military applications. These developments could facilitate rapid Chinese troop movements or logistics support closer to India's frontiers, echoing India's anxieties over similar projects like the China-Pakistan Economic Corridor (Pandey, 2025). Nepal's increasing reliance on high-interest Chinese loans raises fears of debt-trap diplomacy, which could politically align Nepal more closely with Beijing and erode India's longstanding economic dominance as India remains Nepal's largest trading partner for essential goods and remittances (Geopolitical Monitor, 2025). Politically, India is wary of China's deepening involvement in Nepal's internal affairs, including support for pro-china factions and the promotion of Nepal as a transit hub linking Tibet to South Asia. This is compounded by perceptions of Indian "Heavy-handedness", such as past economic blockades, which have occasionally pushed Nepal toward China for diversification. Recent Political instability in Nepal, including the 2025 GenZ-led uprising that led to Prime Minister K. P. Sharma Oli's resignation and disruptions in trade has heightened India's concerns about potential vacuums that China could exploit to advance stalled BRI projects or influence post election governments (Observe Research Foundation, 2025).

### **China's Himalayan Strategy**

China's engagement in the Himalayan region, particularly with Nepal, represents a calculated geopolitical strategy aimed at securing its South-western frontier, expanding economic influence and counterbalancing India's traditional dominance in South-Asia. The Himalayas serve as both a natural barrier and a strategic gateway for China, providing opportunities to enhance control over Tibet while opening corridors into the Indian subcontinent (Geopolitical Monitor, 2025). Through the BRI project signed with Nepal in 2017, Nepal's trade and connectivity is shifting northward, reducing reliance on Indian routes and providing China alternative access to South Asian markets, while also supporting energy transmission and commercial logistics across the challenging terrain. This strategy involves the energy sector where China has invested in hydropower projects to integrate Nepal's resources into cross-border networks, potentially allowing electricity exports to China's western provinces (Sritharn, 2023). However, implementation has been slow; as of 2024 none of the initially proposed BRI projects were completed, due to Nepal's preference for grants over loans, political shifts in Kathmandu, geological challenges and concerns over debt sustainability (ORF). Despite these, China continues to pursue security related objectives, such as curbing Tibetan exile activities and reinforcing border stability, while using soft power tools like scholarships, cultural exchanges and political support to deepen ties.

### **Implications of the Triangular Dynamics in South Asian Geopolitics**

#### **Nepal's Dynamics**

Nepal's strategy of hedging between India and China enhances its bargaining leverage by allowing it to diversify economic and infrastructure partnerships, thereby securing gains and reducing dependence on a single power (Johny, 2024). It enables Nepal to pursue opportunities such as China's BRI while maintaining strong trade ties with India. However, it also introduces increased diplomatic complexity, as Nepal must navigate rivalries between its nuclear-armed neighbours without forming military alliances (Johny, 2024). There is a risk of strategic over-extension if this balancing fails, potentially exposing Nepal to regional instability or debt traps from poorly managed investments (Johny, 2024). Despite these efforts, Nepal remains vulnerable due to its landlocked geography, economic constraints and weakened ability to assert territorial or connectivity interests when India and China engage bilaterally (Anil & Koshy, 2025).

### **India's Dynamics**

India must transition from a historically dominant approach to one based on partnership diplomacy, emphasizing mutual respect and sensitivity to Nepali concerns in order to preserve its influence amid China's growing presence (Gokhale, 2021). Trust building and political sensitivity are essential, including addressing longstanding irritants such as boundary disputes and the 1950 Treaty of Peace and Friendship through cooperative development assistance (Gokhale, 2021). Strategically, India needs to compete without coercion, as perceived hegemonic actions have historically pushed Nepal closer to China, necessitating a policy reset to counterbalance Beijing's expanding footprint effectively (Johny, 2024).

### **China as a factor of South Asian Geopolitics**

China gains an opportunity to expand its regional influence at a relatively low strategic cost through economic initiatives like the Belt and Road Initiative, infrastructure investment, and aid, which deepen ties with Nepal and erode India's traditional dominance (Johny, 2024). However, these carries the risk of provoking counterbalancing by India, particularly as New Delhi perceives Nepal's hedging as a potential shift toward Beijing (Gokhale, 2021). China's gains remain dependent on Nepal's domestic political stability as internal unrest and institutional weaknesses can jeopardize long term projects and influence (Geopolitical Monitor, 2025).

### **South Asia's Dynamics**

The Nepal-India-China triangle illustrates a broader transition toward competitive multi-polarity in South Asia, where regional order is increasingly shaped by overlapping interests, economic competition and strategic hedging rather than unilateral dominance by any single power (Johny, 2024; Gokhale, 2021).

### **Conclusion**

The triangular dynamics among Nepal, India and China represent a microcosm of South Asia's evolving geopolitical order. Nepal's hedging strategy reflects increasing small-state agency amid great power rivalry, while India and China pursue competitive but calibrated engagement. The sustainability of this triangular balance depends on diplomatic restraint, economic viability and regional cooperation. Understanding Nepal's role is therefore essential for analyzing future trajectories of South Asian geopolitics. This has heightened India's concerns, encirclement via

enhanced connectivity, prompting competitive responses like India's own railways proposals to Kathmandu. Nonetheless, China's influence remains constrained by Nepal's pragmatic balancing act, domestic political volatility and external factors such as U.S. engagement, demonstrating that Beijing's leverage in the Himalayas is significant but not unlimited.

### **References**

- *Anil, A.S. & Koshy, S. S. (2025, October 21). Nepal's dilemma : Balancing sovereignty with ties to India and China. South Asian Voices.*
- *Baradia, M., & Jain, N. (2023). The changing nature of India-Nepal relations with special reference to china. RESEARCH REVIEW International journal of Multidisciplinary, 8(2), 82-86*
- *Geopolitical Monitor. (2025, October 3). Nepal between giants: India-China rivalry in the Himalayas.*
- *Ghosh, Sounak (2024, September 5). Nepal between India and China, Modern diplomacy, South Asia.*
- *Gokhale, V (2021, October 4). India's fog of misunderstanding surrounding Nepal-china relations. Carnegie Endowment for international peace.*
- *Johny, E. (2024). Foreign Policy strategies of Nepal between china and India : Bandwagon or hedging. International politics*
- *Kumar, P., & Kumar, N. (2024). China's influence in Nepal : India's concern. Shodhkosh : Journal of visual and Performing Arts, 5(4), 968-972.*
- *Observer Research Foundation (2025, December 18). Nepal's Gen Z uprising : A new test for India-China dynamics.*
- *Pandey, R. (2025, January 2). India's Nepal challenge, china factor. India foundation.*
- *Pokharel, A. P. (2024). Geopolitical dynamics in South Asia : A comparative study of Chinese and Indian interests in the sovereignty*

**Paper Received : 02 Jan. 2026**

**Paper Accepted : 12 Feb. 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## मध्यकालीन भारत का मौन इतिहास : उपेक्षित वर्ग का अप्रकट सामाजिक यथार्थ

प्रो. (डॉ.) अरुण कुमार सिंह \*

### सारांश

मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन की प्रभुत्वशाली परंपरा ने लंबे समय तक सत्ता, शासक वर्ग, राजवंशीय उत्तराधिकार और सैन्य उपलब्धियों को इतिहास की केन्द्रीय धुरी रूप में स्थापित किया। इस प्रक्रिया में समाज के वे व्यापक वर्ग—स्त्रियां, शूद्र और कारीगर—जो सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन के वास्तविक वाहक थे, इतिहास की मुख्यधारा से क्रमशः बाहर कर दिए गए। यह बहिष्करण आकस्मिक नहीं, बल्कि ज्ञान—उत्पादन की उन संरचनात्मक प्रवृत्तियों का परिणाम है, जिनमें जाति, वर्ग और लिंग ऐतिहासिक महत्व के निर्धारक बने रहे। प्रस्तुत शोध-पत्र मौन इतिहास की अवधारणा के आलोक में मध्यकालीन भारतीय समाज की पुनर्व्याख्या करता है। मौन इतिहास उन सामाजिक अनुभवों, श्रम-संबंधों और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों की ओर संकेत करता है, जो लिखित अभिलेखों में प्रत्यक्ष रूप से अनुपस्थित हैं, किंतु सामाजिक संरचना के भीतर निरंतर सक्रिय और निर्णायक रहे हैं। यह अध्ययन इस मान्यता पर आधारित है कि इतिहास केवल सत्ता की वाचिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि समाज के मौन वर्गों की सामूहिक स्मृति और अनुभवों का संचित रूप भी है। शोध-पत्र में स्त्रियों की सामाजिक-आर्थिक भूमिकाओं का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि मध्यकालीन स्त्रियां घरेलू क्षेत्र तक सीमित नहीं थीं, बल्कि कृषि, हस्तशिल्प, वस्त्र-निर्माण, स्थानीय विनिमय तथा धार्मिक-सांस्कृतिक आंदोलनों।

**कुंजी शब्द** — मौन इतिहास, मध्यकालीन भारत, स्त्रियां, शूद्र, कारीगर, सामाजिक इतिहास आदि।

### प्रस्तावना

भारतीय इतिहास लेखन की परंपरा अपने विकासक्रम में अनेक वैचारिक चरणों से गुजरी है। औपनिवेशिक काल में इतिहास लेखन का उद्देश्य प्रशासनिक सुविधा और साम्राज्यवादी वैधता को पुष्ट करना था, जबकि स्वतंत्रता के बाद राष्ट्रवादी इतिहास लेखन ने अतीत को गौरवगाथा के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया। इन दोनों ही प्रवृत्तियों में इतिहास का केन्द्र प्रायः सत्ता, राज्य, राजवंश, युद्ध, प्रशासन और अभिजन वर्ग बना रहा। समाज के वे वर्ग, जो उत्पादन, श्रम, सांस्कृ

---

\* प्रोफेसर, इतिहास, डी.ए.वी.पी.जी. कॉलेज, महाराजा सुहेल देव विश्वविद्यालय, आजमगढ़

तिक निरंतरता और सामाजिक जीवन के वास्तविक आधार थे, इतिहास की मुख्यधारा से बाहर रह गए। मध्यकालीन भारत का इतिहास इस प्रवृत्ति का सबसे सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। मध्यकालीन भारतीय इतिहास को सामान्यतः "सल्तनत काल" और "मुगल काल" जैसे राजनीतिक खांचों में विभाजित कर देखा गया है। इस विभाजन में शासकों की नीतियां, युद्ध, दरबारी संस्कृति और स्थापत्य उपलब्धियां इतिहास का प्रमुख विषय बन जाती हैं, जबकि समाज से भीतर विद्यमान जटिल सामाजिक संबंध, श्रम संरचनाएं और जनसामान्य का दैनिक जीवन हाशिए पर चला जाता है। परिणामस्वरूप स्त्रियां, शूद्र और कारीगर वर्ग – जो मध्यकालीन समाज की जीवन-रेखा थे– इतिहास लेखन में या तो मौन हैं या अत्यंत सीमित और रूढ़िबद्ध संदर्भों में उपस्थित हैं।

इतिहास केवल अतीत की घटनाओं का क्रमबद्ध विवरण नहीं होता, बल्कि वह उस समाज की चेतना, स्मृति और अनुभवों का प्रतिबिंब होता है, जिसमें वह लिखा जाता है जब इतिहास लेखन में कुछ वर्गों के अनुभवों को बार-बार अनदेखा किया जाता है, तब इतिहास का स्वरूप अधूरा, एकांगी और सत्ता-केंद्रित हो जाता है। इस संदर्भ में मौन इतिहास की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। मौन इतिहास उन सामाजिक अनुभवों, श्रम संबंधों और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं की ओर संकेत करता है, जो इतिहास के लिखित अभिलेखों में प्रत्यक्ष रूप से अनुपस्थित हैं, किंतु सामाजिक यथार्थ में निरंतर विद्यमान रहती हैं। मध्यकालीन भारत में इतिहास लेखन का कार्य मुख्यतः दरबारी इतिहासकारों, धार्मिक विद्वानों और उच्चवर्णीय शिक्षित वर्गों द्वारा किया गया। इन लेखकों की सामाजिक स्थिति, वैचारिक पृष्ठभूमि और सत्ता से निकटता ने इतिहास की विषय-वस्तु और दृष्टि को गहराई से प्रभावित किया। परिणामस्वरूप इतिहास का स्वर अभिजन, पुरुष और उच्चवर्णीय दृष्टिकोण से निर्मित हुआ। स्त्रियों का इतिहास पारिवारिक नैतिकता याद धार्मिक आदर्शों तक सीमित कर दिया गया, शूद्रों को सामाजिक श्रेणी के निचले पायदान पर रखकर उनके श्रम को स्वाभाविक मान लिया गया और कारीगर वर्ग को केवल करदाता या अधीनस्थ उत्पादक के रूप में देखा गया।

स्त्रियों के संदर्भ में या स्थिति विशेष रूप से जटिल रही। मध्यकालीन समाज में स्त्रियां केवल घरेलू दायरे तक सीमित नहीं थीं। वे कृषि, पशुपालन, हस्तशिल्प, वस्त्र-निर्माण, स्थानीय बाजारों और धार्मिक-सांस्कृतिक गतिविधियों में सक्रिय भूमिका निभाती थीं। इसके बावजूद इतिहास लेखन में स्त्रियों की पहचान प्रायः पत्नी, माता या धार्मिक आदर्श के रूप में ही प्रस्तुत की गई। उनका श्रम 'प्राकृतिक' मानकर अदृश्य कर दिया गया, जिससे स्त्री इतिहास एक मौन इतिहास बन गया। शूद्र वर्ग की स्थिति भी इसी प्रकार के ऐतिहासिक बहिष्करण को दर्शाती है। मध्यकालीन भारत की कृषि व्यवस्था, कर प्रणाली और उत्पादन संरचना शूद्र श्रम पर आधारित थी। फिर भी इतिहास लेखन में शूद्रों के जीवन, संघर्ष और सामाजिक चेतना पर गंभीर अध्ययन का अभाव दिखाई देता है। उन्हें सामाजिक संरचना का

निष्क्रिय घटक मान लिया गया, जबकि वास्तविकता यह थी कि शूद्र वर्ग सामाजिक परिवर्तन और सांस्कृतिक गतिशीलता का महत्वपूर्ण वाहक था। कारीगर वर्ग का इतिहास भी इसी मौन का शिकार हुआ। मध्यकालीन भारत की शहरी अर्थव्यवस्था, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और स्थापत्य उपलब्धियां कारीगरों के कौशल और तकनीकी ज्ञान के बिना संभव नहीं थीं। बुनकरों के वस्त्र, शिल्पकारों की कलाकृतियां और निर्माण कार्य समाज की आर्थिक और सांस्कृतिक पहचान का आधार थी। इसके बावजूद इतिहास लेखन में कारीगर वर्ग को प्रायः हाशिए पर रखा गया और उनके योगदान को शासकों की उपलब्धियों के अंतर्गत समाहित कर दिया गया।

इस शोध-पत्र की प्रस्तावना का उद्देश्य इसी ऐतिहासिक मौन को प्रश्नांकित करना है। यह अध्ययन इस मान्यता से आरंभ होता है कि इतिहास केवल सत्ता का आख्यान नहीं, बल्कि समाज के सभी वर्गों के अनुभवों का समग्र विवरण होना चाहिए। मौन इतिहास की अवधारणा के माध्यम से यह शोध मध्यकालीन भारतीय समाज की पुनर्व्याख्या क्या करता है और यह स्थापित करने का प्रयास करता है कि स्त्रियां, शूद्र और कारीगर वर्ग इतिहास के हाशिए पर नहीं, बल्कि उसके केंद्र में होने चाहिए। यह शोध सामाजिक इतिहास, लैंगिक इतिहास और आर्थिक इतिहास की अंतर्विषयक दृष्टि को अपनाता है। इसमें यह स्वीकार किया गया है कि पारंपरिक लिखित स्रोत जैसे – दरबारी इतिहास, प्रशासनिक अभिलेख और धार्मिक ग्रंथ-अपर्याप्त हैं। इसलिए भक्ति साहित्य, लोक परंपराएं, स्थापत्य और शिल्प साक्ष्य तथा सांस्कृतिक प्रतीकों को वैकल्पिक स्रोतों के रूप में अपनाया गया है। इन स्रोतों के माध्यम से मध्यकालीन भारत की उस परत को समझने का प्रयास किया गया है, जो अब तक इतिहास लेखन में मौन रही है।

प्रस्तुत प्रस्तावना यह स्पष्ट करती है कि मध्यकालीन भारत का सामाजिक यथार्थ केवल शासकों और अभिजनों तक सीमित नहीं था। वह एक जीवंत, श्रमप्रधान और सांस्कृतिक रूप से समृद्ध समाज था, जिसमें स्त्रियां, शूद्र और कारीगर वर्ग केंद्रीय भूमिका निभाते थे। इन वर्गों के मौन अनुभवों को इतिहास के केंद्र में लाना ना केवल अकादमिक आवश्यकता है, बल्कि इतिहास की लोकतांत्रिक और मानवीय पुनर्चना की दिशा में एक आवश्यक कदम भी है।

इस प्रकार "मौन इतिहास" वह इतिहास है जो लिखित अभिलेखों में प्रत्यक्ष नहीं मिलता, किन्तु सामाजिक व्यवहार, श्रम संरचनाओं, लोक परंपराओं, धार्मिक आंदोलनों और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों में जीवित रहता है। रणजीत गुहा के सबाल्टर्न अध्ययन इस बात को स्पष्ट करते हैं कि "अभिजन इतिहास लेखन ने सामान्य के अनुभवों को ऐतिहासिक महत्त्व से वंचित किया है।"<sup>1</sup> मध्यकालीन भारत में इतिहास लेखन मुख्यतः दरबारी इतिहासकारों, धार्मिक अभिजनों और उच्चवर्गीय लेखकों के हाथों में रहा। फलतः स्त्री, शूद्र और कारीगर वर्ग का सामाजिक यथार्थ इतिहास की मुख्यधारा में प्रवेश नहीं कर सका। मध्यकालीन सामाजिक जटिल, बहुस्तरीय संरचना

था, जिसमें जाति, वर्ग और लिंग सामाजिक संबंधों को निर्धारित करते थे। इरफान हबीब के अनुसार "यह काल उत्पादन-आधारित अर्थव्यवस्था का था, जिसमें कृषि, शिल्प और स्थानीय व्यापार सामाजिक जीवन की रीढ़ थे।"<sup>2</sup>

किंतु इन उत्पादन प्रक्रियाओं में संलग्न लोगों की सामाजिक स्थिति को इतिहास लेखन में पर्याप्त स्थान नहीं मिला। शासक वर्ग धार्मिक अभिजन सामाजिक संसाधनों पर नियंत्रण रखते थे, जबकि श्रम करने वाले वर्ग-विशेषतः शूद्र और कारीगर-सामाजिक बहिष्करण का शिकार थे। स्त्रियां, चाहे वे किसी भी वर्ग की हों, पितृसत्तात्मक संरचना के अंतर्गत सीमित कर दी गईं।

परंतु अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ कि मध्यकालीन भारत में स्त्रियों की भूमिका केवल घरेलू क्षेत्र तक सीमित नहीं थी। वे कृषि कार्य, पशुपालन, वस्त्र-निर्माण, हस्तशिल्प तथा स्थानीय बाजारों में सक्रिय रूप से भाग लेती थीं। उमा चक्रवर्ती ने स्पष्ट किया है कि "स्त्रियों का श्रम ऐतिहासिक रूप से 'प्राकृतिक' मानकर अदृश्य कर दिया गया।"<sup>3</sup> धार्मिक क्षेत्र में भी स्त्रियों की भागीदारी उल्लेखनीय थी। सती आंदोलन में मीराबाई, अक्का महादेवी जैसी स्त्रियां सामाजिक और धार्मिक रूढ़ियों चुनौती देती हैं। किंतु दरबारी इतिहास और धार्मिक ग्रंथों में स्त्रियों की इन भूमिकाओं को गौण बना दिया गया। इसका स्त्री इतिहासिक एक मौन इतिहास बन कर रह गया। रामचरण शर्मा के अनुसार "शूद्र वर्ग भारतीय सामाजिक संरचना का वह आधार था, जिस पर कृषि और उत्पादन व्यवस्था टिकी हुई थी।"<sup>4</sup> मध्यकालीन भारत में शूद्रों की स्थिति जातिगत श्रेणीकरण से निर्धारित होती थी। वे सामाजिक, धार्मिक और शैक्षिक अधिकारों से वंचित थे। इतिहास लेखन में शूद्रों का उल्लेख प्रायः नकारात्मक या तिरस्कारपूर्ण रूप में मिलता है। उनके संघर्ष, प्रतिरोध और सामाजिक चेतना को व्यवस्थित रूप से अनदेखा किया गया। भक्ति आंदोलन ने शूद्र चेतना को अभिव्यक्ति दी, किंतु परंपरागत इतिहास लेखन ने इसे धार्मिक आंदोलन तक सीमित कर दिया, इसके सामाजिक निहितार्थों को नहीं समझा।

मध्यकालीन भारत की नगरीय अर्थव्यवस्था कारीगर वर्ग के बिना असंभव थी। बुनकर, लुहार, बढई, कुम्हार, सुनार आदि शिल्पकार न केवल उत्पादन करते थे, बल्कि तकनीकी ज्ञान और सौंदर्यबोध के संवाहक भी थे। बी०डी० चट्टोपाध्याय के अनुसार "कारिगर वर्ग ने नगरीय संस्कृति के विकास में निर्णायक भूमिका निभाई।"<sup>5</sup> फिर भी इतिहास लेखन में कारिगरों को केवल करदाता या अधीनस्थ वर्ग के रूप में देखा गया। उनके शिल्प, तकनीक और सामाजिक संगठन को इतिहास में वह स्थान नहीं मिला जिसके वे अधिकारी थे। मौन इतिहास को समझने के लिए वैकल्पिक स्रोतों का सहारा आवश्यक है-जैसे भक्ति साहित्य, लोकगीत, स्थापत्य, शिल्प अवशेष और मौखिक परंपराएं। के०एन० पणिकर का मत है कि "सांस्कृतिक स्रोत इतिहास की मौन परतों को उद्घाटित करने में सहायक होते हैं।"<sup>6</sup>

इतिहास लेखन की प्रकृति के साथ ही मौन इतिहास का प्रादुर्भाव—मध्यकालीन इतिहास के प्रमुख स्रोत—दरबारी फारसी इतिहास, प्रशस्तियाँ और वंशावलियाँ—राजकीय संरक्षण में रचित थीं। इसका उद्देश्य शासक वर्ग की उपलब्धियों को महिमा मंडित करना था, न कि समाज के बहुत संख्या को वर्गों के जीवन अनुभवों को दर्ज करना। रोमिला थापर के अनुसार — “इतिहास लेखन के यह प्रवृत्ति सत्ता और ज्ञान के अंतर्संबंध को प्रकट करती है।”<sup>7</sup> इस प्रक्रिया में कृषक, कारीगर, श्रमिक, स्त्रियाँ और निम्न सामाजिक वर्ग इतिहास की मुख्य धारा से बाहर रह गए, जिससे एक “मौन इतिहास” का निर्माण हुआ।

उपेक्षित वर्ग और सामाजिक संरचना—मध्यकालीन समाज की आर्थिक रेड कृषक और कारीगर वर्ग थे। कृषि उत्पादन, शिल्प निर्माण और स्थानीय व्यापार इन्हीं वर्गों पर निर्भर था। इसके बावजूद कर व्यवस्था, सामाजिक भेद और असमान अधिकारों ने इनके जीवन को असुरक्षित बनाए रखा। रणजीत चक्रवर्ती यह स्पष्ट करते हैं कि “श्रमशील वर्ग उत्पादन में केंद्रीय होने के बावजूद सामाजिक शक्ति से वंचित थे।”<sup>8</sup> वे घरेलू और उत्पादक दोनों क्षेत्रों में सक्रिय थीं, किंतु सामाजिक मान्यता और अधिकारों से वंचित रहीं।<sup>9</sup>

भक्ति आंदोलन एवं सामाजिक चेतना—मध्यकालीन भक्ति आंदोलन मध्यकालीन समाज में उपेक्षित वर्गों की सामाजिक चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति के रूप में उभरा। कबीरदास, संत रविदास और नामदेव जैसे संतों की वाणी जातिगत भेदभाव और धार्मिक वर्चस्व के विरुद्ध प्रतिरोध की भाषा थी। श्यामसुंदर नगर के अनुसार, “भक्ति परंपरा ने सामाजिक समानता की वैचारिक भूमि तैयार की।”<sup>10</sup> इस प्रकार भक्ति साहित्य शास्त्रीय और दरबारी न होकर लोक जीवन से जुड़ा था, जिसने इतिहास के मौन पक्ष को स्वर प्रदान किया।

### लोक कथाएं एवं लोकगीत

लोकगीत, कथाएं और किंवदंतियाँ मध्यकालीन समाज के उन अनुभवों को संरक्षित करती रहीं जो लिखित इतिहास में अनुपस्थित हैं। लोक परंपराएं आर्थिक और सामाजिक यथार्थ की वैकल्पिक ऐतिहासिक सामग्री प्रदान करती हैं। इन स्रोतों के माध्यम से उपेक्षित वर्गों की पीड़ा, संघर्ष और सामूहिक चेतना को समझा जा सकता है।

इस प्रकार मध्यकालीन भारत का इतिहास केवल शासक वर्ग की गतिविधियों तक सीमित नहीं है, अपितु वह उन उपेक्षित वर्गों के जीवनानुभवों से भी निर्मित है, जिन्होंने समाज को क्रियाशील बनाए रखा। मौन इतिहास का अध्ययन न केवल ऐतिहासिक संतुलन स्थापित करता है, अपितु वह सामाजिक यथार्थ की अधिक प्रामाणिक समझ प्रदान करता है। इस दृष्टि से उपेक्षित वर्ग इतिहास के निष्क्रिय पात्र नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना के सक्रिय निर्माता थापर थे।

### निष्कर्ष

निष्कर्षतः स्पष्ट रूप से यह कहा जा सकता है कि मध्यकालीन भारत की ऐतिहासिक संरचना को केवल सत्ता-केंद्रित आख्यानों के माध्यम से समझना सामाजिक वास्तविकता के साथ अन्याय है। यह शोध उस दबी हुई सामाजिक स्मृति को उभरता है, जो औपचारिक इतिहास लेखन में अनुपस्थित रही, किंतु सामाजिक जीवन को निरंतर संचालित करती रही। उपेक्षित वर्गों की ऐतिहासिक उपस्थिति अभिलेखों की कमी के कारण नहीं, अपितु दृष्टिगत उपेक्षा के कारण अदृश्य बनी रही। इस अध्ययन से यह तथ्य उभर कर सामने आता है कि मध्यकालीन समाज की गतिशीलता श्रमशील समुदायों के योगदान के बिना कल्पनीय नहीं थी। कृषक, कारीगर, श्रमिक, स्त्रियाँ और लोक धाम संत परंपराएं सामाजिक जीवन की वह अंतर्धारा थी, जिसने उत्पादन, संस्कृत अभिव्यक्ति और नैतिक चेतना को जीवन तो बनाए रखा। इनके जीवन अनुभव सत्ता के प्रत्यक्ष प्रतिरोध में नहीं, अपितु दैनिक आचरण, सामूहिक व्यवहार और वैकल्पिक सांस्कृतिक संकेतों के माध्यम से व्यक्त होते रहे।

इस प्रकार इतिहास का मन होना निष्क्रियता का प्रतीक नहीं है, बल्कि वह संरचनात्मक संतुलन का संकेत है। उपेक्षित वर्गों ने सामाजिक व्यवस्था के भीतर रहते हुए उसके अंतर्विरोधों को चुनौती दी और अपनी उपस्थिति को लोकभाषा, भक्ति काव्य, परंपरागत कर्म और सांस्कृतिक प्रतीकों के माध्यम से सुरक्षित रखा। यहां प्रतिरोध सूक्ष्म था, किंतु दीर्घकालिक प्रभाव वाला था। मध्यकालीन भारत की सामाजिक वास्तविकता को समझने के लिए इतिहास लेखन की पद्धतियों का पुनर्विचार आवश्यक है। अभिजात्य स्रोतों के साथ-साथ लोकस्रोतों, सांस्कृतिक स्मृतियों और सामाजिक व्यवहार को ऐतिहासिक सामग्री के रूप में स्वीकार किए बिना समाज का संतुलित चित्र संभव नहीं है। इस दृष्टि से मौन इतिहास को केंद्र में लाना इतिहासबोध का विस्तार भी है और उसका लोकतंत्रीकरण भी।

समग्रता है यह शोध स्थापित करता है कि उपेक्षित वर्ग इतिहास के परिधीय पात्र नहीं थे, अपितु सामाजिक संरचना के सक्रिय वाहक थे। उनके अनुभव, संघर्ष और सांस्कृतिक योगदान को ऐतिहासिक विमर्श में सम्मिलित करना न केवल अतीत की पुनर्गठना है, बल्कि वर्तमान सामाजिक समझ को अधिक न्यायपूर्ण और समावेशी बनाने की दिशा में एक आवश्यक कदम भी है।

### संदर्भ

1. रणजीत गुहा-सबाल्टर्न अध्ययन और इतिहास लेखन, वाणी प्रकाशन, 2010, पृष्ठ 13
2. इरफान हबीब-मध्यकालीन भारत की आर्थिक संरचना, राजकमल प्रकाशन, 2004, पृष्ठ 45

3. उमा चक्रवर्ती-स्त्री और इतिहास, स्त्री प्रकाशन, 2013, पृष्ठ 34
4. रामशरण शर्मा-शूद्रों का इतिहास, मुंशीराम मनोहरलाल, 2004, पृष्ठ 41
5. बी०डी० चट्टोपाध्याय-मध्यकालीन समाज और अर्थव्यवस्था, OUP, 2010, पृष्ठ 58
6. के०एन०पणिककर-संस्कृति और इतिहास, NBT, 2002, पृष्ठ 52
7. थापर, रोमिला-इतिहास और उसकी व्याख्याएं, नई दिल्ली, पेंगुइन, 2011, पृष्ठ 118
8. चक्रवर्ती, रणजीत -भारत में श्रम और समाज, कोलकातारू के०पी० बागची, 2013, पृष्ठ 69
9. शर्मा, रामशरण-मध्यकालीन भारत की सामाजिक संरचना, दिल्ली, ओरिएंट ब्लैकस्वान, 2008, पृष्ठ 63
10. नागर, श्यामसुंदर-भक्ति आंदोलन और सामाजिक चेतना, जयपुर, रावत पब्लिकेशंस, 2015, पृष्ठ 92

**Paper Received : 20 Dec., 2025**

**Paper Accepted : 05 Jan., 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## भारतीय राजनीति में भाषावाद और समकालीन चुनौतियाँ

डॉ. दिग्विजय नाथ राय \*

### सारांश

भारत एक बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक लोकतंत्र है। यहाँ भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं है, बल्कि यह राजनीतिक पहचान, सामाजिक अधिकार और सांस्कृतिक अस्मिता का महत्वपूर्ण स्रोत भी है। स्वतंत्रता के बाद भाषाई प्रश्न ने संघीय ढाँचे, राज्यों के पुनर्गठन और क्षेत्रीय राजनीतिक शक्तियों को प्रभावित किया। 1956 का राज्य पुनर्गठन, 1965 का हिंदी-विरोधी आंदोलन, तथा क्षेत्रीय दलों का सशक्तिकरण भाषाई राजनीति के प्रमुख पड़ाव रहे हैं। समकालीन संदर्भ में वैश्वीकरण, नई शिक्षा नीति 2020, डिजिटल माध्यमों का प्रसार, अंग्रेजी का प्रभुत्व, तथा पहचान-आधारित राजनीतिक विमर्श भाषावाद को नए आयाम प्रदान कर रहे हैं। भाषावाद भारतीय लोकतंत्र में न तो पूर्ण रूप से विभाजनकारी है और न ही पूर्ण रूप से एकीकरणकारी बल्कि यह संघीय संतुलन और बहुलवादी लोकतंत्र की स्थिरता का आधार है।

**मूल शब्द :** भाषावाद, संघवाद, राज्य पुनर्गठन, राजभाषा नीति, क्षेत्रीय दल, बहुभाषिक लोकतंत्र

### प्रस्तावना

भारत का बहुभाषिक स्वरूप उसकी सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संरचना का अभिन्न हिस्सा है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में 121 प्रमुख भाषाएँ और लगभग 19,500 मातृभाषाएँ प्रचलित हैं। संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्तमान में 22 भाषाओं को मान्यता दी गई है। भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं है, बल्कि यह पहचान और अधिकार का स्रोत भी है। स्वतंत्रता-पूर्व भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान ही भाषाई अस्मिता राजनीतिक चेतना का हिस्सा बन चुकी थी।

भाषा किसी भी समाज की संस्कृति, पहचान और विचारों की अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम होती है। मनुष्य अपने विचार, भावनाएँ, ज्ञान और अनुभव भाषा के माध्यम से व्यक्त करता है। भारत जैसे बहुभाषी देश में भाषा का महत्व और भी अधिक है क्योंकि यहाँ विभिन्न क्षेत्रों, संस्कृतियों और समुदायों की अपनी-अपनी भाषाएँ और बोलियाँ हैं।

इसी संदर्भ में भाषावाद एक ऐसी सामाजिक-राजनीतिक प्रवृत्ति है जिसमें किसी विशेष भाषा को अत्यधिक महत्व दिया जाता है और अन्य भाषाओं की अपेक्षा उसे श्रेष्ठ या अधिक अधिकारयुक्त माना जाता है। कई बार यह प्रवृत्ति राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विवादों का कारण बन जाती है।

\* एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, आगरा कॉलेज, आगरा, डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

भाषावाद केवल भाषाई प्रेम तक सीमित नहीं रहता बल्कि यह क्षेत्रीयता, राजनीतिक हितों और सांस्कृतिक पहचान से भी जुड़ जाता है। भारत में भाषा के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन, भाषा आंदोलन और शिक्षा की भाषा से जुड़े विवाद इसके उदाहरण हैं।

### भाषावाद की अवधारणा – सैद्धांतिक आधार

भाषावाद को उस प्रवृत्ति के रूप में समझा जा सकता है जिसमें भाषा को राजनीतिक अधिकारों, प्रशासनिक सीमाओं तथा सांस्कृतिक स्वायत्तता के आधार के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। बहुलतावादी लोकतंत्रों में भाषा पहचान-निर्माण का महत्वपूर्ण साधन है। रजनी कोठारी ने अपनी कृति च्वसपजपबे पद प्दकपं में भारतीय राजनीति को विविधताओं के समायोजन की प्रक्रिया बताया है, जहाँ भाषा शक्ति-संतुलन का माध्यम बनती है। इसी प्रकार ग्रेनविल ऑस्टिन ने The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation में यह स्पष्ट किया कि संविधान निर्माताओं ने भाषाई विविधता को स्वीकारते हुए संतुलनकारी संघीय ढाँचा विकसित किया।

### संवैधानिक विमर्श और राजभाषा का प्रश्न

संविधान सभा में राजभाषा को लेकर तीव्र मतभेद उभरे। अंततः संविधान के अनुच्छेद 343 के तहत हिंदी को संघ की राजभाषा तथा अंग्रेजी को सहायक भाषा के रूप में स्वीकृति दी गई। यह व्यवस्था किसी एक भाषा की सर्वोच्चता स्थापित करने के बजाय व्यावहारिक संतुलन की नीति का परिणाम थी। 1963 का आधिकारिक भाषा अधिनियम इस संतुलन को संस्थागत रूप प्रदान करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हुआ।

### भारत में भाषावाद का ऐतिहासिक विकास

#### (1) स्वतंत्रता से पहले

ब्रिटिश काल में अंग्रेजी प्रशासन और शिक्षा की प्रमुख भाषा थी। इससे भारतीय भाषाओं की स्थिति कमजोर हो गई। इसी समय हिंदी, बंगाली, तमिल आदि भाषाओं के संरक्षण और विकास के लिए कई आंदोलन शुरू हुए।

#### (2) स्वतंत्रता के बाद

1947 में स्वतंत्रता प्राप्त होने के बाद यह प्रश्न उठा कि भारत की राष्ट्रीय भाषा क्या होगी। संविधान सभा में इस विषय पर काफी बहस हुई।

अंततः हिंदी को राजभाषा और अंग्रेजी को सहायक भाषा के रूप में स्वीकार किया गया।

### भाषाई आधार पर राज्य पुनर्गठन

स्वतंत्रता के कुछ वर्षों बाद भाषाई आधार पर प्रशासनिक पुनर्गठन की मांग तीव्र हुई। 1953 में आंध्र प्रदेश का गठन इस प्रक्रिया की शुरुआत का प्रतीक बना। इसके पश्चात राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिशों के आधार पर 1956 में राज्यों का पुनर्गठन किया गया। यह निर्णय भारतीय संघवाद को स्थिरता प्रदान करने वाला सिद्ध हुआ क्योंकि इससे भाषाई असंतोष को संवैधानिक वैधता मिली। 1956 में राज्यों का पुनर्गठन अधिनियम पारित किया गया, जिसके तहत राज्यों की सीमाएँ भाषाई आधार पर निर्धारित की गईं।

### उदाहरण

- आंध्र प्रदेश – तेलुगु भाषा
- महाराष्ट्र – मराठी
- गुजरात – गुजराती
- तमिलनाडु – तमिल

इस निर्णय से कई क्षेत्रों में भाषाई पहचान मजबूत हुई।

### दक्षिण भारत और हिंदी-विरोधी आंदोलन

1960 के दशक में तमिलनाडु में हिंदी को अनिवार्य बनाने के प्रस्तावों के विरुद्ध व्यापक जन-आंदोलन हुए। द्रविड़ मुनेत्र कडगम ने भाषाई पहचान को राजनीतिक शक्ति में रूपांतरित किया। इन आंदोलनों ने यह स्पष्ट किया कि भाषा का प्रश्न केवल प्रशासनिक सुविधा का विषय नहीं, बल्कि अस्मिता और राजनीतिक अधिकार का प्रश्न है।

### क्षेत्रीय राजनीति और भाषाई अस्मिता

भाषाई चेतना ने अनेक क्षेत्रीय दलों को जन्म दिया। तेलुगु देशम पार्टी ने तेलुगु अस्मिता को राजनीतिक मंच प्रदान किया। शिव सेना ने मराठी पहचान को केंद्र में रखा। असम गण परिषद ने क्षेत्रीय-भाषाई अधिकारों को अपने एजेंडा में शामिल किया। इन दलों ने भारतीय लोकतंत्र में प्रतिनिधित्व की बहुलवादी संरचना को सुदृढ़ किया।

### भाषावाद के कारण

भाषावाद के कई कारण होते हैं –

- **सांस्कृतिक पहचान** – भाषा किसी समाज की संस्कृति और परंपराओं से जुड़ी होती है। इसलिए लोग अपनी भाषा की रक्षा करना चाहते हैं।

- **राजनीतिक हित** – कई बार नेता भाषा के आधार पर लोगों को संगठित करके राजनीतिक लाभ प्राप्त करते हैं।
- **क्षेत्रीयता** – भाषा किसी क्षेत्र की पहचान बन जाती है और लोग अपने क्षेत्रीय हितों की रक्षा के लिए एकजुट हो जाते हैं।
- **शिक्षा और रोजगार** – कई सरकारी नौकरियों और शिक्षा संस्थानों में भाषा का महत्व होने के कारण भाषाई विवाद पैदा हो सकते हैं।
- **सामाजिक प्रतिष्ठा** – कुछ भाषाओं को अधिक प्रतिष्ठित माना जाता है, जैसे अंग्रेजी। इससे अन्य भाषाओं के प्रति हीनता की भावना पैदा हो सकती है।

#### भाषावाद के प्रभाव

##### सकारात्मक प्रभाव

- **भाषा और संस्कृति का संरक्षण** – भाषावाद के कारण लोग अपनी भाषा और साहित्य को सुरक्षित रखने का प्रयास करते हैं।
- **सांस्कृतिक गौरव की भावना** – अपनी भाषा के प्रति गर्व की भावना विकसित होती है।
- **क्षेत्रीय विकास** – भाषाई पहचान के कारण क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा मिल सकता है।

##### नकारात्मक प्रभाव

- **राष्ट्रीय एकता पर प्रभाव** – अत्यधिक भाषावाद राष्ट्रीय एकता को कमजोर कर सकता है।
- **सामाजिक तनाव** – अलग-अलग भाषाओं के लोगों के बीच विवाद हो सकते हैं।
- **राजनीतिक संघर्ष** – भाषा के आधार पर राजनीतिक संघर्ष और आंदोलन हो सकते हैं।
- **शिक्षा में असमानता** – भाषा के कारण शिक्षा के अवसरों में असमानता उत्पन्न हो सकती है।

#### समकालीन परिप्रेक्ष्य और चुनौतियाँ

- **वैश्वीकरण और अंग्रेजी** – अंग्रेजी वैश्विक अर्थव्यवस्था और उच्च शिक्षा की भाषा बन चुकी है। इससे हिंदी एवं अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के समक्ष प्रतिस्पर्धात्मक दबाव बढ़ा है।

- **नई शिक्षा नीति 2020** – भारत सरकार द्वारा घोषित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में मातृभाषा-आधारित शिक्षा पर बल दिया गया है। किंतु शिक्षक-प्रशिक्षण, पाठ्यसामग्री और बहुभाषिक कक्षाओं की व्यावहारिक चुनौतियाँ सामने हैं।
- **डिजिटल युग** – डिजिटल प्लेटफॉर्म पर अंग्रेजी का वर्चस्व भाषाई असमानता को बढ़ाता है। भारतीय भाषाओं में तकनीकी संसाधनों का विकास अभी भी अपर्याप्त है।
- **पहचान-आधारित राजनीति** – भाषा को राजनीतिक ध्रुवीकरण के उपकरण के रूप में प्रयोग किया जाना सामाजिक विभाजन को जन्म दे सकता है।

### विश्लेषणात्मक विमर्श

भाषाई पुनर्गठन ने संघवाद को स्थिर किया। क्षेत्रीय दलों ने लोकतांत्रिक सहभागिता बढ़ाई। अत्यधिक भाषाई राष्ट्रवाद राष्ट्रीय एकता के लिए चुनौती हो सकता है। शिक्षा और डिजिटल माध्यमों में संतुलित बहुभाषिक नीति आवश्यक है।

### निष्कर्ष

भारतीय राजनीति में भाषाई विमर्श लोकतांत्रिक बहुलवाद की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। यह न तो पूर्णतः विभाजनकारी है और न ही पूर्णतः एकीकरणकारी बल्कि यह परिस्थितियों के अनुसार दोनों भूमिकाएँ निभाता है। भविष्य की भाषा-नीति को समावेशी, संतुलित और तकनीकी दृष्टि से सशक्त होना चाहिए, ताकि राष्ट्रीय एकता और क्षेत्रीय अस्मिता के बीच स्वस्थ समन्वय स्थापित किया जा सके।

### संदर्भ

1. Austin, G. (1966). *The Indian constitution: Cornerstone of a nation.* Oxford University Press.
2. Brass, P. R. (1994). *The politics of India since independence.* Cambridge University Press.
3. Guha, R. (2007). *India After Gandhi.* Picador India.
4. Kothari, R. (1970). *Politics in India.* Orient Longman.
5. Government of India. (2020). *National education policy 2020.* Ministry of Education.
6. *The Constitution of India. (1950).* Government of India.
7. Sharma, R. N. (2010). *Indian Sociology.* New Delhi: Atlantic Publishers.
8. Singh, Yogendra (2001). *Structure and Change in Indian Society.* New Delhi: Rawat Publications.

9. *Kumar Krishna (2012). Education and Language in India. New Delhi: Oxford University Press.*
10. *Brass, Paul R. (1991). Ethnicity and Nationalism. New Delhi: Sage Publications.*
11. *Dasgupta, Jyotirindra (1970). Language Conflict and National Development. University of California Press.*

*Paper Received : 30 Dec., 2025*

*Paper Accepted : 10 Jan., 2026*

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## अकाल और उसके बाद : जीवन का सूक्ष्म निरीक्षण

डॉ. नियति कल्प \*

### सारांश

1952 ई० में प्रकाशित 'अकाल और उसके बाद' प्रसिद्ध प्रगतिशील कवि और साम्यवादी विचारधारा के प्रबल पोषक नागार्जुन की कविता है। यह कविता उनके काव्य-संग्रह 'सतरंगे पंखोंवाली' में संकलित है। मात्र आठ पंक्तियों की इस छोटी सी कविता में कवि की गहरी संवेदना पूरी सजीवता के साथ उपस्थित हुई है। कवि ने चेतन-अचेतन सभी के दुःख को अपनी कविता में समाहित किया है। अकाल और उसके बाद की घर-परिवार में स्थिति का यथार्थ और यथास्थिति का चित्रण कविता को अत्यंत प्रभावी और हृदयस्पर्शी बना देता है। भारत के सामान्य जन की अनुभूतियाँ नागार्जुन की अनुभूतियों में रची-बसी हुई हैं। इस लघु कविता में कवि ने अकाल के समय और उसके बाद की स्थिति को अपने सरस शब्दों और आकर्षक बिंबों के माध्यम से जीवंत कर दिया है। कविता की सार्थकता इसी में है कि वह कवि की समग्र अनुभूतियों को पाठकों के अंतर्मन में संप्रेषित कर देने में पूरी तरह समर्थ हो सके और इस अर्थ में कवि यहाँ पूरी तरह सफल है। घर में अनाज आने की खुशी की ध्वनि, उसकी अनुगूँज पाठक को भी उल्लास से सराबोर कर देती है। यथार्थवादी कवि ने अकाल की भयावहता को ही चित्रित नहीं किया है वरन् उसकी समाप्ति के बाद आने वाले सुख, आनंद और परितृप्ति का एहसास भी कराया है।

**कुंजी शब्द** – अकाल, लघु, भयावहता, चेतन, अचेतन

हिन्दी साहित्य में आरंभ से ही कवियों की एक दीर्घ परंपरा विद्यमान है। परंतु इन कवियों की लंबी सूची में उन्हीं कवियों की स्मृतियाँ हमारे मन-मस्तिष्क में विद्यमान रहती हैं जिनकी रचनाएँ जन-रचनाएँ बनकर हमारे मन में गहरी छाप छोड़ती हैं। ऐसे जनधर्मी कवियों में बीसवीं सदी के रचनाकार बाबा नागार्जुन की रचनात्मकता के विविध वर्ण परिलक्षित होते हैं। उनका काव्य-संसार सर्वहारा वर्ग का संसार है जहाँ जीवन का यथार्थ है, सहृदयता है, मनुष्यता है, प्रकृति भी है और प्रकृतिजनित समस्याएँ भी।

1952 ई० में प्रकाशित 'अकाल और उसके बाद' प्रसिद्ध प्रगतिशील कवि और साम्यवादी विचारधारा के प्रबल पोषक नागार्जुन की कविता है। यह कविता उनके काव्य-संग्रह 'सतरंगे पंखोंवाली' में संकलित है। मात्र आठ पंक्तियों की इस छोटी सी कविता में कवि की गहरी संवेदना पूरी सजीवता के साथ उपस्थित हुई है। उक्त कविता में अकाल के समय की दुःखद और मर्मांतक स्थिति और उसके बाद

\* सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड

की चहल-पहल और आह्लादक स्थिति के दो सजीव, सशक्त और प्रभावी बिंब कविता में उपस्थित हैं। अकाल में विवशतापूर्ण उदासी और अकाल के बाद घर में अनाज आने की खुशी, दोनों ही स्थितियाँ अत्यंत ही प्रभावक और ग्राह्य बन पड़ी हैं। “नागार्जुन की कविता में मनुष्य कहीं बाढ़ग्रस्त है तो कहीं अकालग्रस्त।...जीवन के यथार्थ को जितनी निर्ममता से नागार्जुन ने उजागर किया है उतना अन्यत्र नहीं मिलता।”<sup>1</sup> निश्चित रूप से अकाल और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं का दुष्प्रभाव उच्च या धनिक वर्ग पर नहीं पड़ता है। प्रत्येक परिस्थिति में मजदूर और किसान वर्ग पर ही मुसीबतों का पहाड़ टूटता है। धनिक वर्ग इस परिस्थिति से अछूता रहता है। कवि संवेदनशील होता है। उसकी संवेदना मानव मात्र से नहीं वरन् मानवेतर प्राणियों से भी जुड़ी होती है। कवि नागार्जुन की संवेदना भी मात्र अकाल पीड़ित मनुष्यों के साथ ही नहीं है वरन् अनेक जीव-जंतुओं के साथ भी संपृक्त है जिनकी हालत ठीक मनुष्यों की ही तरह ही दयनीय और अशक्त है। वहीं निर्जीव वस्तुएँ जैसे-चूल्हा और चक्की भी मानो इन सबके दुःख में दुःखी है।

कवि ने चेतन-अचेतन सभी के दुःख को अपनी कविता में समाहित किया है। अकाल और उसके बाद की घर-परिवार में स्थिति का यथार्थ और यथास्थिति का चित्रण कविता को अत्यंत प्रभावी और हृदयस्पर्शी बना देता है। कविता की प्रारंभिक पंक्तियाँ अपने सहज-सरल एवं बोधगम्य शब्दों के सटीक प्रयोग के कारण अकालजनित दुःख को अभिव्यक्ति प्रदान करने में पूर्णतः सक्षम है। जिसका चित्रण निम्न पंक्तियों में हुआ है-

“कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास  
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास  
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त  
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।”<sup>2</sup>

उक्त पंक्तियों में कवि ने अकाल के समय में समस्त प्राणियों की भूख की पीड़ा और उसकी भयावहता का संजीव अंकन किया है। अकाल के दिनों में घर में अनाज के अभाव के कारण भोजन नहीं बना, जिस कारण घर का चूल्हा जला ही नहीं। घर में अनाज न होने के कारण चक्की में अनाज भी नहीं पीसा गया। कवि कहता है कि अकाल में कई दिनों तक चूल्हा रोता रहा और चक्की उदास रही। चूल्हे और चक्की की विवशता उनके रोने और उदास होने में परिलक्षित होती है। अकाल की घनी छाया ने चूल्हे और चक्की को भी बेतरह प्रभावित किया है। चूल्हा और चक्की ये दोनों मानव के सहयोगी और प्रधान उपकरण हैं। इनके सहयोग के अभाव में मानव का जीवन पूर्णरूपेण अधूरा है। चूल्हे की सार्थकता उसके जलने में है और चक्की की चलने में है। चूल्हा के जलने और चक्की के चलने से ही मानव का जीवन गतिशील है। क्योंकि चलना ही यानी गतिशील होना ही जीवन है। यह कवि और उसकी कविता की प्रभावक क्षमता ही है कि चूल्हा और चक्की जैसी निर्जीव और

अचेतन वस्तुओं का मानवीकरण उन्हें घर और परिवार के दुःख में शामिल कर देता है। अकाल की विभीषिका को चूल्हे का रुदन और चक्की की उदासी और भी बढ़ा देती है।

उसी चूल्हे और चक्की के पास कई दिनों तक एक कानी कुतिया भी भूख की पीड़ा को दबाकर सोती रही है। कुतिया के शरीर में हलचल तो तब होती जब उसे भोजन मिलता। कुतिया भी परिवार की एक सदस्या है। अतः वह भी घर वालों के दुःख में शामिल है। वह निश्चेष्ट होकर भी अपनी वेदना का प्रकाशन कर रही है। परस्पर साहचर्य का यह बेजोड़ उदाहरण है। भूख की ज्वाला सभी प्राणियों को समान रूप से विकल करती है। अनाज की महत्ता को यहाँ प्रमुखता से स्वीकार किया गया है। जीने के लिए अन्न की अनिवार्यता स्वयं सिद्ध है।

वहीं दूसरी तरफ छिपकलियाँ भी दीवार पर कई दिनों तक इस आशा में घूमती और चक्कर लगाती रहीं कि उन्हें उनका प्रिय ग्रास पतंगा मिल जाय। लेकिन पतंगा की उपस्थिति का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता क्योंकि अभावग्रस्तता की स्थिति में घर में तो दीया भी नहीं जला करता है और पतंगे तो प्रकाश से आकर्षित होकर आते हैं। यह सहज अनुमेय है कि जिस घर में खाने को एक दाना तक उपलब्ध नहीं है वहाँ दीया जलाने के लिए तेल कहाँ से आयेगा? वही चूहों की हालत भी अन्य प्राणियों की तरह ही अनाज के अभाव में शिकस्त है। चूहों के संबंध में कवि की उक्ति 'हालत रही शिकस्त' ने कविता को अधिक जीवंत और प्रभावी बना दिया है, जिससे घर में पड़े शिकस्त चूहे का बिंब आँखों के सामने उपस्थित हो जाता है। नागार्जुन के काव्य में विषय-वैविध्य और भाषा की बहुस्तरीयता सहज लक्षित की जा सकती है। विष्णु नागर ने नागार्जुन के काव्य की विशेषताओं की ओर इंगित करते हुए लिखा है – "जीवन के अनेक अनुभव और ऐसे-ऐसे अनुभव उन्होंने कविता में दाखिल कराये, जिनका पहले प्रवेश निषिद्ध था।"<sup>3</sup> ऐसा इसलिए संभव हुआ क्योंकि नागार्जुन की कविता जीवन और जमीन से जुड़ी हुई कविता है। भारत के सामान्य जन की अनुभूतियाँ नागार्जुन की अनुभूतियों में रची-बसी हुई हैं। इन अनुभूतियों से पगी कविता रसास्वादन के उत्कर्ष तक जा पहुँचे तो इसमें क्या अचरज ?

चूल्हा, चक्की, कानी कुतिया, छिपकलियों और चूहों की सम्मिलित उपस्थिति ने जिस प्रकार अकालजनित, अभावग्रस्त स्थिति की विवशता और भयावहता के वातावरण का निर्माण किया है, वह निश्चित रूप से प्रशंसनीय है। यह कवि की सूक्ष्म विश्लेषण दृष्टि और उसकी गहरी संवेदना को भी अभिव्यक्त करता है। उक्त पंक्तियों के माध्यम से एक बात जो हमारे समक्ष उभरकर सामने आती है, वह यह है कि कविता में जिस परिवार की पीड़ा की अभिव्यंजना है— वह निम्न मध्यवर्गीय परिवार ग्राम्य जीवन से संबद्ध है। क्योंकि उस घर में चूल्हा है, चक्की है और ग्रामीण परिवेश को अभिव्यक्त करने वाले सारे उपकरण और तत्त्व है। यह कविता आजादी के बाद के आरंभिक वर्षों की कविता है। उस समय भारत पूर्णतः एक ग्रामीण समाज था।

औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण के दौर बस शुरू ही हो रहे थे । इस कविता से नागार्जुन ने जिस घर का बिम्ब खींचा है, वह तत्कालीन भारत का प्रतिनिधित्व करता बिम्ब है । 'हरित क्रांति' अभी हुई नहीं थी। लेकिन भारत के लोग आजाद हवा में अपनी तरह से जीवन को अपना रहे थे, उसे बेहतर कर रहे थे । इस कविता में घर की हर सजीव-निर्जीव वस्तु की सहभागिता है । भारतीय संस्कृति में समाज की सबसे छोटी इकाई परिवार को माना जाता है । और यह परिवार सिर्फ मनुष्यों से मिलकर नहीं बनता है । प्रस्तुत कविता इसकी एक खूबसूरत बानगी है । आरंभिक चार पंक्तियों में कवि ने घर के किसी भी सदस्य का परिचय नहीं दिया है। उनके अभावजन्य पीड़ा की अभिव्यक्ति चूल्हा-चक्की और घर में उपस्थित जीव-जंतुओं के माध्यम से की गई है, जिससे उनकी वेदना और अधिक उभर कर सामने आती है।

कविता की अगली चार पंक्तियों में कवि ने अकाल के बाद की सुखमय, हर्षमय और आह्लादपूर्ण स्थिति को प्रभावी बिंबो के माध्यम से उपस्थित किया है। पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

“दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद  
धुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद  
चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद  
कौए ने खुजलाई पाँखे कई दिनों के बाद।”<sup>4</sup>

उक्त पंक्तियाँ हमें परितृप्ति और परिपूर्णता की ताजगी का एहसास करती हैं। अकाल समाप्त होने के बाद बहुत लंबे समय के बाद घर में अनाज के दाने के रूप में खुशियों की बरसात हुई है। भोजन तैयार होने के क्रम में आँगन से उठने वाले धुएँ के माध्यम से आनंद का सृजन हुआ। धुआँ का उठना चूल्हा जलने का संकेत है। आँगन से उठने वाले धुएँ में कई प्राणियों के जीवन की रक्षा और उमंग-उत्साह के संचार की बात निहित है। वह धुआँ आशा और प्राणरक्षा का प्रतीक है, खुशियों की बौछार है, जिसमें सभी प्राणियों की चिर प्रतीक्षित आशाएँ फलीभूत होती दीख रही हैं।

गाँव-घर, आँगन और छप्पर का संपूर्ण परिदृश्य आँखों के समक्ष तब तैर जाता है जब कवि कौए के पंख खुजलाने की बात कहता है। घर के सदस्य जब भोजन करने के बाद परितुष्ट होते हैं तभी उनकी थाली में जूठन के रूप में बचे हुए अंश से कौआ भी परितुष्ट होता है। कौए के पंख खुजलाने का बिंब अतिशय प्रभावक और हृदयग्राही है। इसी संग्रह 'सतरंगे पंखवाली' की एक कविता है 'बहुत दिनों के बाद' । जिस तरह 'अकाल और उसके बाद' के दूसरे अंतरे में आवृत्ति में आनेवाली पंक्ति है ' कई दिनों के बाद' , 'बहुत दिनों के बाद' कविता की टेक की पंक्ति है ' बहुत दिनों के बाद' । यह कविता 1958 में रचित है । यह कविता स्थितियों के सामान्य हो जाने के बाद की कविता है । धन-धान्य व सौंदर्यपूरित बिम्बों से पाठक की पाँचों इंद्रियों को जाग्रत करती । 'अकाल और उसके बाद' एवं 'बहुत दिनों के

बाद' कविताओं को एक साथ पढ़ने पर हमारे सामने मानव मन की अनुभूतियों की एक विस्तृत रेंज उपस्थित होती है। हम चकित हुए बिना नहीं रहते कि कवि जिस संवेदना के साथ अभाव को कविता में उतारता है, उसी उदात्तता के साथ जीवन के सौंदर्य-भरे क्षणों का प्रकटीकरण भी कर सकता है। नंदकिशोर नवल ने नागार्जुन पर लिखे अपने एक लेख में लिखा है "सच्चाई यह है कि कविता को स्थायित्व प्रदान करनेवाली वस्तु विचार या भावना नहीं, बल्कि वह सौंदर्यानुभूति है, जो विचार तो विचार, मिट्टी का भी स्पर्श कर दे, तो वह सोने में बदल जाए।"5 नागार्जुन की इन दोनों कविताओं के लिए भी यह बात पूर्णतः सत्य है।

इस प्रकार इस लघु कविता में कवि ने अकाल के समय और उसके बाद की स्थिति को अपने सरस शब्दों और आकर्षक बिंबों के माध्यम से जीवंत कर दिया है। कविता की सार्थकता इसी में होती है कि वह कवि की समग्र अनुभूतियों को पाठकों के अंतर्मन में संप्रेषित कर देने में पूरी तरह समर्थ हो सके और इस अर्थ में कवि यहाँ पूरी तरह सफल है। घर में अनाज आने की खुशी की ध्वनि, उसकी अनुगूँज पाठक को भी उल्लास से सराबोर कर देती है। यथार्थवादी कवि ने अकाल की भयावहता को ही चित्रित नहीं किया है वरन् उसकी समाप्ति के बाद आने वाले सुख, आनंद और परितृप्ति का एहसास भी कराया है। इस कविता के दूसरे बंद की प्रशंसा करते हुए नंदकिशोर नवल ने अपनी पुस्तक 'आधुनिक हिंदी कविता का विकास' में लिखा है – "कहने की आवश्यकता नहीं कि इसकी अंतिम पंक्ति का चित्र, जिसमें घर के छप्पर पर बैठा एक कौआ चोंच से अपनी पाँखें खुजलाकर अपना उल्लास प्रकट करता है, अंकित करना नागार्जुन के ही बूते की बात थी। इस एक चित्र से पूरी कविता चमक उठी है।"6

निःसंदेह प्रस्तुत कविता कवि की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति, उसकी कलात्मकता का सबसे बड़ा प्रमाण है। अकाल और उसके बाद के समय का मर्मस्पर्शी चित्रण कवि ने सहज, सरल एवं व्यंजक भाषा में किया है। कविता में जगह-जगह पर प्रयुक्त बिंबों के माध्यम से यह समझा जा सकता है कि कवि ने इन सारी स्थितियों और परिवेश का स्वयं साक्षात्कार किया है। कहने की जरूरत नहीं कि नागार्जुन की रचना के केंद्र में गाँव और गरीब प्रमुखता के साथ अवस्थित हैं। वे जीवनपर्यंत विवश लाचार और उपेक्षित-वंचित लोगों के पक्षधर बने रहे। यह कहने में जरा भी अतिरेक नहीं कि नागार्जुन सही अर्थों में जन के कवि हैं।

### संदर्भ

1. डॉ. तनूजा तिवारी, प्रगतिशील कविता में सौन्दर्य चिन्तन, भारतीय भाषापीठ, नयी दिल्ली, 1987 ई०, पृ०165
2. शोभाकान्त (सं.), नागार्जुन रचनावली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011 ई., पृ.226
3. अजय तिवारी, नागार्जुन की कविता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005 ई., पृ. 214

4. शोभाकान्त(सं), नागार्जुन रचनावली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011 ई.  
पृ.226
5. नंदकिशोर नवल, परिषद्-पत्रिका, भारतीय राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, जनवरी  
2019 ई., पृ. 66
6. नंदकिशोर नवल, आधुनिक हिंदी कविता का इतिहास, भारतीय ज्ञानपीठ, नई  
दिल्ली, 2012 ई., पृ. 370

*Paper Received : 20 Dec., 2025*

*Paper Accepted : 05 Jan., 2025*

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा की भूमिका

डॉ. लाल बहादुर राम \*

### सारांश

आधुनिक युग में आपदाएँ केवल भौतिक रूपों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि साइबर स्पेस में भी बड़े पैमाने पर क्षति पहुँचा सकती हैं। प्राकृतिक, मानवीय अथवा तकनीकी आपदाओं के दौरान सूचना प्रणालियों का सुरक्षित रहना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि सरकारी एजेंसियाँ, स्वास्थ्य सेवा, परिवहन प्रणाली, ऊर्जा आपूर्ति और आपदा प्रबंधन तंत्र साइबर प्लेटफॉर्म पर निर्भर रहते हैं। यह शोध-पत्र आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा की महत्ता, उसके प्रमुख आयामों तथा संभावित समाधानात्मक उपायों पर प्रकाश डालता है। अध्ययन दर्शाता है कि साइबर सुरक्षा उपायों के बिना आपदा प्रबंधन अधूरा है, और किसी भी देश की आपदा-प्रतिरोधक क्षमता साइबर संरचनाओं की सुरक्षा पर निर्भर करती है।

**कुंजी शब्द** – साइबर सुरक्षा, आपदा तैयारी, डेटा संरक्षण, डिजिटल अवसंरचना, साइबर जोखिम प्रबंधन, आपदा प्रबंधन।

### परिचय

21वीं सदी में आपदा प्रबंधन के तरीकों में व्यापक बदलाव आया है। आज सभी महत्वपूर्ण सेवाएँ –संचार, स्वास्थ्य, वित्त, ऊर्जा वितरण, परिवहन तथा सरकारी प्रशासन –डिजिटल नेटवर्क पर आधारित हैं। ऐसे में आपदा के दौरान साइबर प्रणालियों का सुरक्षित रहना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। आपदा की स्थिति में यदि साइबर हमला हो जाए, जैसे –डेटा चोरी, सर्वर डाउन होना, महत्वपूर्ण सरकारी या स्वास्थ्य डेटा का नष्ट हो जाना, बिजली या जल-प्रणाली का बंद हो जाना, तो यह आपदा की गंभीरता को कई गुना बढ़ा देता है। इसलिए आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा को एक केंद्रीकृत घटक के रूप में शामिल करना समय की मांग है।

### समस्या का विवरण

भारत सहित विश्व के अनेक देशों में डिजिटल अवसंरचना तेजी से विकसित हो रही है, परंतु इसके साथ साइबर जोखिम भी बढ़ रहे हैं। प्रश्न यह है कि – क्या हमारा आपदा प्रबंधन तंत्र साइबर जोखिमों को ध्यान में रखते हुए पर्याप्त रूप से तैयार है? इसी समस्या को शोध का मुख्य आधार बनाया गया है।

---

\* एसोसिएट प्रोफेसर, सैन्य विज्ञान विभाग, समता पी.जी. कॉलेज, सादात, गाजीपुर, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर

## अध्ययन के उद्देश्य

### आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा के महत्व को स्पष्ट करना

इस अध्ययन का प्रथम उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि आधुनिक डिजिटल युग में आपदा तैयारी केवल भौतिक संसाधनों, मानवबल और बुनियादी ढांचे तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि सूचना प्रौद्योगिकी और डिजिटल प्रणालियाँ भी इसका अभिन्न अंग बन चुकी हैं।

आज आपदा पूर्व चेतावनी प्रणाली, संचार नेटवर्क, डेटा प्रबंधन, स्वास्थ्य सेवाएँ, बिजली आपूर्ति, जल प्रबंधन तथा आपातकालीन सेवाएँ सभी किसी न किसी रूप में साइबर नेटवर्क पर निर्भर हैं। ऐसी स्थिति में साइबर हमले, डेटा चोरी, सिस्टम फेल्योर या हैकिंग आपदा की गंभीरता को कई गुना बढ़ा सकते हैं। अतः यह उद्देश्य आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा की आवश्यकता, प्रासंगिकता और उसके अभाव से उत्पन्न खतरों को सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दोनों स्तरों पर स्पष्ट करना है।

### साइबर जोखिमों के प्रकार और उनके प्रभावों का विश्लेषण

इस अध्ययन का दूसरा उद्देश्य विभिन्न प्रकार के साइबर जोखिमों का गहन विश्लेषण करना है, जो आपदा की स्थिति में या उससे पूर्व उत्पन्न हो सकते हैं। इनमें प्रमुख रूप से – साइबर आतंकवाद, रैनसमवेयर हमले, डेटा उल्लंघन, फिशिंग और सोशल इंजीनियरिंग, महत्वपूर्ण अवसंरचनाओं पर साइबर हमले शामिल हैं।

यह उद्देश्य यह भी विश्लेषण करता है कि ये साइबर जोखिम आपदा प्रबंधन प्रणाली, सरकारी निर्णय-प्रक्रिया, जनसंचार, आर्थिक गतिविधियों और नागरिक सुरक्षा पर किस प्रकार प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। इससे यह समझ विकसित होती है कि साइबर खतरों की अनदेखी आपदा को और अधिक विनाशकारी बना सकती है। आपदा प्रबंधन तंत्र में साइबर सुरक्षा को शामिल करने हेतु उपाय प्रस्तुत करना इस अध्ययन का तीसरा उद्देश्य यह है कि आपदा प्रबंधन तंत्र (Disaster Management Framework) में साइबर सुरक्षा को एक अनिवार्य घटक के रूप में शामिल करने के लिए व्यावहारिक एवं नीतिगत उपाय सुझाए जाएँ।

इस उद्देश्य के अंतर्गत—

- साइबर-सुरक्षित आपदा पूर्व चेतावनी प्रणाली
  - सुरक्षित डेटा बैक-अप और रिकवरी योजनाएँ
  - साइबर ड्रिल और प्रशिक्षण कार्यक्रम
  - आपदा-पूर्व साइबर जोखिम मूल्यांकन
  - तकनीकी एवं प्रशासनिक समन्वय
- जैसे उपायों पर प्रकाश डाला जाता है।

इसका लक्ष्य एक ऐसा समेकित (Integrated) आपदा प्रबंधन मॉडल प्रस्तुत करना है जिसमें भौतिक और डिजिटल सुरक्षा दोनों समान रूप से सुदृढ़ हों।

### सरकार, संस्थानों और नागरिकों की जिम्मेदारियों का निर्धारण करना

इस अध्ययन का चौथा उद्देश्य आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा को लेकर विभिन्न हितधारकों की भूमिकाओं और जिम्मेदारियों का निर्धारण करना है। इसके अंतर्गत—

- सरकार की भूमिका नीति निर्माण, कानून प्रवर्तन, साइबर अवसंरचना के संरक्षण और राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा रणनीति के क्रियान्वयन के रूप में,
- संस्थानों एवं संगठनोंकी भूमिका सुरक्षित आईटी प्रणालियों, डेटा संरक्षण, कर्मचारियों के प्रशिक्षण और आपातकालीन साइबर योजनाओं के रूप में,
- तथा नागरिकों की भूमिका डिजिटल साक्षरता, साइबर जागरूकता और जिम्मेदार ऑनलाइन व्यवहार के रूप में स्पष्ट की जाती है।

यह उद्देश्य यह स्थापित करता है कि साइबर—सुरक्षित आपदा तैयारी केवल सरकार का दायित्व नहीं, बल्कि सामूहिक सामाजिक जिम्मेदारी है।

### आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा का महत्व

#### आपदा के समय सूचना प्रणालियों का सुरक्षित रहना

आपदा प्रबंधन का आधार ही सूचना प्रवाह है। यदि सिस्टम हैक हो जाए या वायरस आ जाए तो राहत एवं पुनर्वास प्रक्रिया बाधित हो सकती है।

#### महत्वपूर्ण अवसंरचना की सुरक्षा

जैसे — विद्युत ग्रिड, जल आपूर्ति, बैंकिंग एवं भुगतान प्रणाली, अस्पताल और स्वास्थ्य डाटा। इनके साइबर हमले से लाखों लोगों का जीवन प्रभावित हो सकता है।

#### फेक न्यूज़ व गलत सूचना को रोकना

आपदा में अफवाहें स्थिति को और बिगाड़ती हैं। साइबर सुरक्षा तथा डिजिटल मॉनिटरिंग गलत सूचना रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

#### डेटा संरक्षण

आपदा के समय संवेदनशील सरकारी डेटा को चोरी या लीक होने से बचाना आवश्यक है।

**आपदा में साइबर खतरों के प्रकार**

- 1) DDoS हमले – सर्वर को डाउन कर देना।
- 2) Phishing – राहत निधियों या सरकारी वेबसाइटों के नाम पर ठगी।
- 3) Ransomware – डेटा लॉक करके फिरौती मांगना।
- 4) Critical Infrastructure Hacking – बिजली, पानी, संचार प्रणाली पर हमला।
- 5) Data Breach – संवेदनशील सरकारी या नागरिक डेटा की चोरी।

**भारत में साइबर सुरक्षा और आपदा प्रबंधन: प्रमुख चुनौतियाँ****साइबर जागरूकता की कमी**

भारत में साइबर सुरक्षा से जुड़ी सबसे बड़ी चुनौती आम नागरिकों, सरकारी कर्मचारियों तथा कई संस्थागत स्तरों पर साइबर जागरूकता का अभाव है। आपदा की स्थिति में डिजिटल प्लेटफॉर्म, मोबाइल नेटवर्क, सोशल मीडिया और ऑनलाइन सेवाओं पर निर्भरता अत्यधिक बढ़ जाती है। ऐसी परिस्थितियों में फर्जी लिंक, अफवाहें, फिशिंग संदेश और भ्रामक सूचनाएँ तेजी से फैलती हैं, जिससे जन-व्यवस्था और आपदा प्रबंधन की प्रभावशीलता प्रभावित होती है। सीमित डिजिटल साक्षरता के कारण लोग साइबर हमलों की पहचान नहीं कर पाते, जिससे साइबर जोखिम और अधिक बढ़ जाता है।

**तकनीकी अवसंरचना का असमान विकास**

भारत में तकनीकी और डिजिटल अवसंरचना का विकासक्षेत्रीय असमानतासे ग्रस्त है। शहरी क्षेत्रों में उन्नत नेटवर्क, डेटा सेंटर और साइबर सुरक्षा सुविधाएँ उपलब्ध हैं, जबकि ग्रामीण और दूरदराज क्षेत्रों में अभी भी सीमित इंटरनेट कनेक्टिविटी और कमजोर आईटी संरचना पाई जाती है। आपदा के समय यह असमानता और अधिक स्पष्ट हो जाती है, जिससे सूचना का प्रवाह बाधित होता है, राहत एवं बचाव कार्य प्रभावित होते हैं तथा साइबर सुरक्षा उपायों का समान रूप से क्रियान्वयन संभव नहीं हो पाता।

**सरकारी एवं निजी क्षेत्र में सीमित समन्वय**

आपदा प्रबंधन और साइबर सुरक्षा दोनों ही बहु-हितधारक क्षेत्र हैं, जिनमें सरकार, निजी कंपनियाँ, तकनीकी सेवा प्रदाता और नागरिक समाज की संयुक्त भूमिका आवश्यक होती है। भारत में अभी भी सरकारी एवं निजी क्षेत्र के बीच समन्वय की कमीदेखने को मिलती है। सूचनाओं के आदान-प्रदान, साइबर खतरों की साझा

निगरानी और संयुक्त प्रतिक्रिया तंत्र का अभाव आपदा के समय साइबर हमलों से निपटने में बड़ी बाधा बनता है।

### एथिकल हैकरों और साइबर विशेषज्ञों की कमी

भारत जैसे विशाल और डिजिटल रूप से तेजी से बढ़ते देश में प्रशिक्षित साइबर विशेषज्ञों और एथिकल हैकरों की संख्या अपर्याप्त है। आपदा की स्थिति में साइबर सिस्टम पर हमलों की संभावना बढ़ जाती है, ऐसे में तत्काल तकनीकी प्रतिक्रिया देने वाले विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है। विशेषज्ञों की कमी के कारण साइबर घटनाओं की पहचान, रोकथाम और पुनर्प्राप्ति में विलंब होता है, जो आपदा प्रबंधन को और जटिल बना देता है।

### रैनसमवेयर एवं फिशिंग हमलों का बढ़ता खतरा

हाल के वर्षों में भारत में रैनसमवेयर और फिशिंग हमलों में तीव्र वृद्धि देखी गई है। आपदा के समय जब संस्थान और नागरिक मानसिक दबाव में होते हैं, तब साइबर अपराधी इसी स्थिति का लाभ उठाते हैं। अस्पतालों, आपातकालीन सेवाओं, सरकारी वेबसाइटों और राहत एजेंसियों को निशाना बनाकर किए गए रैनसमवेयर हमले न केवल आर्थिक नुकसान पहुँचाते हैं, बल्कि जन-जीवन और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए भी गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं।

### आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा के लिए आवश्यक उपाय

1. **मजबूत साइबर नीति एवं फ्रेमवर्क**
  - CERT & In की क्षमता को बढ़ाना
  - राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा नीति का प्रभावी कार्यान्वयन
2. **बैकअप और रिकवरी योजना**  
सभी सरकारी विभागों को डेटा का दैनिक बैकअप रखना चाहिए।
3. **साइबर ड्रिल एवं प्रशिक्षण**  
आपदा प्रबंधन एजेंसियों, पुलिस, स्वास्थ्य विभाग और प्रशासन के लिए साइबर सुरक्षा प्रशिक्षण अनिवार्य होना चाहिए।
4. **AI आधारित साइबर अटैक मॉनिटरिंग सिस्टम**  
जो रियल-टाइम में खतरे का पता लगा सकें।
5. **नागरिकों की भूमिका**  
सुरक्षित पासवर्ड, फिशिंग लिंक से सावधानी, जानकारी सत्यापित करके साझा करना।

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से स्थापित होता है कि आपदा प्रबंधन और साइबर सुरक्षा परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक-दूसरे के पूरक एवं सहायक तंत्र हैं। परंपरागत रूप से आपदा प्रबंधन को भौतिक राहत, बचाव कार्य, चिकित्सा सहायता और पुनर्वास तक सीमित माना जाता रहा है, किंतु डिजिटल प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास ने इस अवधारणा को व्यापक बना दिया है। आज आपदा पूर्व चेतावनी प्रणाली, आपातकालीन संचार नेटवर्क, डेटा संग्रहण, संसाधन आवंटन, स्वास्थ्य सेवाएँ तथा प्रशासनिक निर्णय-प्रक्रिया अत्यधिक रूप से डिजिटल प्लेटफॉर्म पर निर्भर हो चुकी हैं। ऐसी स्थिति में यदि इन डिजिटल प्रणालियों की साइबर सुरक्षा सुनिश्चित नहीं की जाती, तो आपदा की तीव्रता और प्रभाव कई गुना बढ़ सकता है। अध्ययन यह भी दर्शाता है कि भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले और विविध भौगोलिक परिस्थितियों वाले देश में साइबर सुरक्षा का मज़बूत ढांचा आपदा जोखिम न्यूनीकरण में निर्णायक भूमिका निभा सकता है। साइबर हमलों, फर्जी सूचनाओं और डेटा उल्लंघन की घटनाएँ न केवल राहत कार्यों को बाधित करती हैं, बल्कि जनता में भय, भ्रम और अविश्वास भी उत्पन्न करती हैं। अतः यह आवश्यक है कि आपदा प्रबंधन रणनीतियों में साइबर जोखिमों को एक स्वतंत्र और गंभीर चुनौती के रूप में स्वीकार किया जाए तथा डिजिटल और भौतिक सुरक्षा के बीच संतुलन स्थापित किया जाए।

### निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध-पत्र के निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि आपदा तैयारी में साइबर सुरक्षा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण, अनिवार्य और अपरिहार्य है। आधुनिक समय में किसी भी प्रभावी आपदा प्रबंधन प्रणाली की कल्पना साइबर सुरक्षा के बिना नहीं की जा सकती। डिजिटल अवसंरचना पर बढ़ती निर्भरता के कारण साइबर हमले, डेटा चोरी और प्रणाली विफलता आपदा के प्रभाव को और अधिक गंभीर बना सकती हैं। इसलिए सरकार, संस्थान और नागरिककृतीनों की संयुक्त भागीदारी से एकसाइबर-सुरक्षित आपदा प्रबंधन ढांचाविकसित करना समय की मांग है। यह अध्ययन इस तथ्य को पुष्ट करता है कि भविष्य का आपदा प्रबंधन केवल भौतिक संसाधनों पर आधारित नहीं होगा, बल्कि वह डिजिटल सुरक्षा, साइबर जागरूकता और तकनीकी समन्वयपर आधारित होगा। यदि साइबर सुरक्षा को आपदा तैयारी का अभिन्न अंग बनाया जाए, तो न केवल आपदा से होने वाली क्षति को कम किया जा सकता है, बल्कि समाज को अधिक सुरक्षित, सशक्त और संवेदनशील भी बनाया जा सकता है।

### संदर्भ

1. शर्मा, आर. के. (2019). आपदा प्रबंधन: सिद्धांत एवं व्यवहार. नई दिल्ली: राजपाल एंड संस।
2. सिंह, अजय कुमार. (2020). साइबर सुरक्षा: अवधारणा, चुनौतियाँ और समाधान. नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।

3. भारत सरकार. (2016). राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन योजना. नई दिल्ली: गृह मंत्रालय, भारत सरकार।
4. भारत सरकार. (2020). राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा नीति. नई दिल्ली: इलेक्ट्रॉनिकी एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार।
5. वर्मा, सुनीता. (2021). डिजिटल युग में आपदा प्रबंधन की चुनौतियाँ. भारतीय सामाजिक अनुसंधान पत्रिका, 12(2), 45-56।
6. मिश्रा, पवन कुमार. (2018). सूचना प्रौद्योगिकी और राष्ट्रीय सुरक्षा. वाराणसी: चौखंबा प्रकाशन।
7. यादव, नरेंद्र. (2022). साइबर अपराध और भारत में बढ़ते डिजिटल जोखिम. समकालीन अध्ययन, 8(1), 73-82
8. राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण. (2019). आपदा जोखिम न्यूनीकरण हेतु दिशा-निर्देश. नई दिल्ली।
9. त्रिपाठी, सीमा. (2023). आपदा प्रबंधन में साइबर सुरक्षा की आवश्यकता. अकादमिक शोध पत्रिका, 15(3), 101-110
10. कुमार, राजेश. (2021). डिजिटल इंडिया और साइबर सुरक्षा. नई दिल्ली: ओरिएंट ब्लैकस्वान (हिन्दी संस्करण)।

*Paper Received : 22 Dec., 2025*

*Paper Accepted : 15 Jan., 2026*

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में न्यायिक पुनर्विलोकन की भूमिका एवं महत्त्व

डॉ. राजदेव सिंह \*

### सारांश

शक्ति-पृथक्करण का सिद्धांत लोकतांत्रिक शासन प्रणाली का आधार-स्तम्भ है। शासन के प्रत्येक अंग को संवैधानिक मर्यादाओं के भीतर रहकर ही अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों का निर्वहन करना होता है। जिस पर निगरानी का कार्य संविधान ने उच्चतर न्यायपालिका को सौंप रखा है। भारत में न्यायपालिका ने बहुत ही अच्छे तरीके से अपनी इस भूमिका का निर्वहन किया है। इसी का परिणाम है कि जनता का अटूट भरोसा इस पर कायम है। विगत आठ दशकों में न्यायपालिका ने अपनी इस शक्ति का प्रयोग न सिर्फ व्यक्तियों के मूल अधिकारों की संरक्षा के लिए बल्कि विधायिका एवं कार्यपालिका के निरंकुश, मनमाने एवं अविवेकपूर्ण तरीके से किये गये कार्यों के लिए भी किया है। न्यायिक पुनर्विलोकन लोकतन्त्र, विधि शासन, संवैधानिक संस्थाओं का स्वायत्तता एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रताओं को कायम रखने का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तन्त्र है। परन्तु संविधान ने निगरानी की जो शक्ति न्यायपालिका में निहित की है, उसका दुरुपयोग नहीं किया जाना चाहिए। देश में संविधान सर्वोच्च्य है, और सभी संवैधानिक अंगों को (जिसमें न्यायपालिका भी आती है) संविधान की सीमा के भीतर रहकर ही एक-दूसरे के पारस्परिक सहयोग से कार्य करना चाहिए इससे न सिर्फ लोकतन्त्र व संवैधानिक संस्थाओं की जड़े मजबूत होंगी बल्कि जनता का भरोसा भी उन पर और मजबूत होगा, तथा देश को विकसित भारत बनाने का लक्ष्य प्राप्त करने में मदद मिलेगी।

**मूल शब्द** – लोकतन्त्र, संसद, विधि शासन, विधायिका, कार्यपालिका, शक्ति पृथक्करण एवं मूल अधिकार आदि।

प्रत्येक देश का शासन उस देश के संविधान के अनुसार चलाया जाता है। संविधान में सरकार के तीनों अंगों (विधायिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका) के अधिकारों, कर्तव्यों, शक्तियों एवं सीमाओं के बारे में विस्तृत प्रावधान होता है। शासन के सभी अंग अपनी मर्यादा में रहकर कार्य कर रहे हैं, यह सुनिश्चित करने का दायित्व संविधान द्वारा ही सर्वोच्च्य न्यायपालिका को प्रदान किया गया और इस महत्वपूर्ण भूमिका को सम्यक् रूप से निभाने के लिए उसे अनेक शक्तियाँ प्रदान की गयी है। न्यायिक पुनर्विलोकन इन्हीं में से एक है। न्यायिक पुनर्विलोकन प्रत्येक उस

\* असिस्टेंट प्रोफेसर, विधि विभाग, के.जी.के. पी.जी. कालेज, मुरादाबाद, महात्मा ज्योतिबा फूले  
रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

देश में विद्यमान रहता है, जहाँ विधि का शासन होता है, और संविधान को सर्वोच्च माना जाता है। कोई भी संविधि, अधिनियम, आदेश या अध्यादेश जो संविधान के उपबन्धों के प्रतिकूल हो, उसे शून्य घोषित कर दिया जाता है। वास्तव में हमारे संविधान निर्माताओं ने अपनी दूरदर्शिता दिखाते हुए न्यायिक पुनर्विलोकन को संविधान में स्थान दिया था। वें इस तथ्य से भली-भाँति परिचित थे कि यदि विधायिका सक्षम विधि निर्माण नहीं करती है या संविधान के उपबन्धों को निष्फल करने का प्रयास करती है, तो उस पर प्रभावी नियंत्रण आवश्यक है। वास्तव में न्यायिक पुनर्विलोकन विधि शासन का आधार-स्तम्भ हैं। कोई भी विधि के ऊपर नहीं हो सकता है। और प्रत्येक मनुष्य को न्याय प्राप्त करने का अधिकार है। न्यायिक पुनर्विलोकन विधि शासन की कसौटी एवं सार है। न्यायपालिका के पास विधि शासन को बनाये रखने का न्यायिक पुनर्विलोकन एक महत्वपूर्ण अस्त्र है।

**उत्पत्ति एवं विकास :** मानव विकास का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब किसी व्यक्ति को असीमित शक्ति मिल जाती है तो वह भ्रष्ट व निरंकुश हो जाता है, इसलिए इस शक्ति को सीमित करने का सदैव प्रयास किया गया है। मान्टेस्क्यू ने सरकार के सभी तीनों अंगों की अबाधित एवं अनियंत्रित शक्ति पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से ही शक्ति-पृथक्करण के सिद्धांत का प्रतिपादन किया था। राज्य की एक शक्ति दूसरी शक्ति के कार्यों के संचालन में हस्तक्षेप न करे और किसी एक अंग में शक्तियों का केन्द्रीयकरण न हो, इसलिए न्यायिक पुनर्विलोकन की आवश्यकता अनुभव की गई।

इस प्रकार न्यायिक पुनर्विलोकन विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका की शक्तियों के प्रयोग पर नियंत्रण रखने की शक्ति है। न्यायिक पुनर्विलोकन की धारणा का उद्भव सीमित शक्ति वाली सरकार के सिद्धांत से हुआ। इस सिद्धांत के अनुसार विधियाँ दो प्रकार की होती हैं:- (क) देश की सर्वोच्च विधि अर्थात् संविधान (ख) साधारण विधि। संविधान अन्य सभी विधियों का आधार एवं मुख्य स्रोत होता है। ऐसी कोई भी विधि जो संविधान के उपबन्धों का अतिक्रमण या अतिलंघन करती है असंवैधानिक मानी जायेगी।

इस सिद्धांत को सर्वप्रथम अमेरिकन उच्चतम न्यायलय के न्यायधीश मार्शल ने मारबरी बनाम मेडीसिन (1803) के मामले में प्रतिपादित किया था। इस मामले में फेडरल पार्टी सन् 1800 के चुनाव में पराजित हो गयी थी, किन्तु उसने पद छोड़ने से पहले अनेक न्यायिक पद सृजित कर दिये थे। इनमें 42 जस्टिसेज ऑफ पीस पर राष्ट्रपति जान एडम ने 42 फेडरलिस्टों को नियुक्ति कर दिया जिसकी पुष्टि सीनेट द्वारा कर ही गई तथा उस पर हस्ताक्षर भी कर दिये गये किन्तु राष्ट्रपति के सचिव जान मेडिसिन उनमें से किसी को नियुक्तिपत्र नहीं दे सके। नये राष्ट्रपति थामस जैफरसन ने उन्हें अभ्यर्थियों को नियुक्तिपत्र न देने का निर्देश दिया। एक अभ्यर्थी मारबरी ने सुप्रीम कोर्ट में परमादेश रिट फाइल करके प्रार्थना की कि सचिव

को उन्हें नियुक्तिपत्र देने का आदेश पारित किया जाये। उन्होंने यह रिट ज्यूडिसरी ऐक्ट, 1789 के अधीन फाइल की थी, जिसमें यह प्रावधान था कि सुप्रीम कोर्ट रूढ़िजन्य सिद्धांतों के आधार पर परमादेश रिट जारी कर सकता है किन्तु अमेरिकन संविधान के अनुच्छेद 3 के खण्ड (2) में सुप्रीम कोर्ट को सिर्फ राजदूतों, लोकमंत्रियों एवं काउन्सिलों के विरुद्ध ही रिट जारी करने की शक्ति प्राप्त है, जो सचिव के विरुद्ध संस्थित मामलों में पक्षकार थे। निर्णित किया गया कि चूँकि मारबरी इनमें से किसी के अन्तर्गत नहीं है, इसलिए न्यायालय को इनमें अधिकारिता नहीं है।

**न्यायिक पुनर्विलोकन का अर्थ एवं आधार :** प्रोफेसर कारविन के अनुसार न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति न्यायालयों की वह शक्ति है जिसके अन्तर्गत वे विधानमण्डल द्वारा पारित अधिनियमों की संवैधानिकता की जांच करते हैं। वे ऐसी किसी भी विधि को प्रवर्तित करने से इंकार कर सकते हैं, जो संविधान के उपबन्धों से असंगत है। यह कार्य न्यायालयों की साधारण अधिकारिता के अन्तर्गत आता है। लेकिन यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति केवल उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों को जिन्हें कोर्ट ऑफ जस्टिस कहा जाता है, को ही प्राप्त होती है। न्यायिक पुनर्विलोकन का आधार शक्ति-पृथक्करण के सिद्धांत को अपनाते हुए सरकार की शक्तियों में संतुलन स्थापित करके निरंकुशता एवं स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाते हुए संविधान द्वारा प्रदत्त स्वतंत्रताओं की रक्षा करना तथा संविधान की सर्वोच्चता को बनाये रखना है।

**अन्य देशों में प्रावधान, ब्रिटेन :** यद्यपि ब्रिटेन में संसदीय संप्रभुता को स्वीकार किया गया है इस कारण वहाँ न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति सीमित है। वहाँ संसद सर्वोच्च है और वह आदमी को औरत एवं औरत को आदमी बनाने के अलावा सभी कार्य कर सकती है। मैग्नाकार्टा तथा बिल ऑफ राइट्स के बाद इस दिशा में विचार किया जाने लगा। मान्टेस्क्वू ने अपनी पुस्तक स्पिरिट ऑफ लॉज (1701) में सर्वप्रथम न्यायिक पुनर्विलोकन की बात कही। मैकियावेली ने भी अपनी कृति 'दी प्रिंस' में न्यायिक पुनर्विलोकन को विधि शासन के लिए आवश्यक माना है। संवैधानिक सुधार अधिनियम, 2005 द्वारा अब ब्रिटेन में भी सर्वोच्च न्यायालय औपचारिक रूप से 1 अक्टूबर 2009 को स्थापित किया गया है। संसदीय संप्रभुता के सिद्धांत के कारण इसकी न्यायिक समीक्षा की शक्ति अत्यन्त सीमित है। यह संसद द्वारा बनाए गये किसी भी प्राथमिक कानून को रद्द नहीं कर सकता। यद्यपि इसको द्वितीयक कानूनों को रद्द करने की शक्ति है, उदाहरणार्थ यदि वह कानून प्राथमिक कानून में दी गई शक्तियों के विरोध में पाया जाता है।

**संयुक्त राज्य अमेरिका :** न्यायिक पुनर्विलोकन को अमेरिका में बहुत ही व्यापक रूप में अपनाया गया है। यहाँ संविधान सर्वोच्च होने के कारण न्यायपालिका किसी भी ऐसे विधि, संविधि, अधिनियम, विधायी या कार्यपालकीय कार्य जो संविधान के प्रावधानों के असंगत या विपरीत है, को शून्य घोषित कर सकती है। इस प्रकार

वहाँ सीमित सरकार के स्वरूप को अपनाया गया है। अमेरिकी स्वतन्त्रता क्रांति के पश्चात स्वतन्त्रता की घोषणा, वर्जिनीया अधिकार पत्र तथा अमेरिकी संविधान के अधिकार पत्र 1791 ने वहाँ स्वतन्त्र व बृहद स्तर पर न्यायिन पुनर्विलोकन को जन्म दिया क्योंकि वे ब्रिटेन की तरह संसदीय सर्वोच्चता स्वीकार करने के पक्षधर नहीं थे यद्यपि अमेरिकी संविधान में न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धांत को मूल संविधान में कोई स्थान नहीं दिया गया था। आस्ट्रेलिया एवं कनाडा में भी न्यायालयों को न्यायिक पुनर्विलोकन कर व्यापक शक्ति प्राप्त है।

**भारत में स्थिति :** भारत में न्यायिक पुनर्विलोकन के सन्दर्भ में व्यापक प्रावधान किये गये हैं। अनुच्छेद 13, 32, 136, 137 व 226 में न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति उच्चतम न्यायालय व उच्च न्यायालयों को प्रदान की गई है। अनुच्छेद 137 संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि के या अनुच्छेद 145 के अधीन बनाये गये नियमों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय को अपने द्वारा सुनाये गये निर्णय या दिये गये आदेश का पुनर्विलोकन करने की शक्ति होगी।

अपनी इस शक्ति के अधीन सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय विधान मण्डलों द्वारा पारित किसी भी अधिनियम को असंवैधानिक घोषित कर सकता है, यदि वे संविधान के उपबन्धों से असंगत पाये जाते हैं। यद्यपि भारतीय संविधान में विधान मण्डल द्वारा पारित अधिनियमों पर न्यायिक पुनर्विलोकन का आधार अमेरिका के संविधान से अधिक सुदृढ़ स्थिति में है किन्तु अमेरिकी संविधान की तुलना में भारत में यह शक्ति सीमित है। ऐसा होने के कई कारण हैं, प्रथम भारतीय संविधान बहुत विस्तृत है जबकि अमेरिकी संविधान बहुत छोटा संविधान है, द्वितीय भारतीय संविधान में संशोधन अपेक्षाकृत सरलता से किया जा सकता है जबकि अमेरिकी संविधान में संशोधन की प्रक्रिया बहुत जटिल है, तृतीय भारतीय संविधान में कुछ ऐसे निश्चित क्षेत्र रखे गये हैं जिनको न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि से कुछ शर्तों के आधार पर बाहर कर दिया गया है जैसे— अनुच्छेद 131, 132, 280, 372 व नौवीं अनुसूचि।

भारत में न्यायिक पुनर्विलोकन की स्थिति को स्पष्ट करते हुए मुख्य न्यायाधीश पतंजली शास्त्री ने मद्रास राज्य बनाम वी.जी.रो. (A.I.R. 1952 S.C.) के वाद में कहा कि हमारे संविधान में न्यायिक पुनर्विलोकन से सम्बंधित स्पष्ट प्रावधान दिये गये हैं जो संविधान के अनुकूल हैं किन्तु यह अमेरिकन संविधान से भिन्न है जहाँ कि सर्वोच्च न्यायालय ने 5वें एवं 14वें संविधान संशोधन में प्रयुक्त सम्यक् विधि प्रक्रिया पदावली की विस्तृत व्याख्या करके विधायिका द्वारा पारित अधिनियमों के पुनर्विलोकन की असीमित शक्ति धारण की। यदि कभी इस देश के न्यायालयों के समक्ष कोई महत्वपूर्ण एवं कठिन प्रश्न आये तो विधानमण्डल के प्राधिकार पर जानबूझकर आक्रमण की भावना से कूद पड़ने का उद्देश्य नहीं है बल्कि ऐसे समय

में उन्हें संविधान द्वारा प्रदत्त अपने कर्तव्यों को सीधे-साधे ढंग से सम्पादित करना चाहिए। यह विशेष रूप से मूल अधिकारों के सम्बन्ध में सत्य है क्योंकि संविधान ने उन अधिकारों पर न्यायालय को एक सजग प्रहरी के रूप में नियुक्त किया है।

इसी प्रकार ए0के0 गोपालन बनाम मद्राय राज्य (A.I.R. 1950 SC) के बाद में मुख्य न्यायाधीश कानिया ने कहा कि संविधान निर्माताओं ने तो केवल चेतावनी के रूप में अनुच्छेद 13 में न्यायिक पुनर्विलोकन से सम्बंधित उपबन्धों का समावेश किया है, अन्यथा इसकी अनुपस्थिति में भी न्यायालयों को ऐसी शक्ति सहज रूप से प्राप्त है। भारत में संविधान सर्वोच्च्य विधि है और एक अधिनियम को विधिमान्य होने के लिए आवश्यक है वह सही प्रकार से संविधान के उपबन्धों के अनुरूप हो। कोई भी अधिनियम संवैधानिक है या नहीं, इस प्रश्न का निर्णय करने की शक्ति न्यायापालिका को ही प्राप्त है।

**न्यायिक पुनर्विलोकन के सम्बन्ध में न्यायिक सक्रियता :** सर्वोच्च्य न्यायालय ने अनेक क्षेत्रों में न्यायिक सक्रियता का परिचय देते हुए देश में विधि शासन की स्थापना तथा संविधान की सर्वोच्चता कायम की है।

**(क) प्रशासनिक कार्यों के सम्बन्ध में :** अपने ऐतिहासिक महत्व के निर्णय एल0 चन्द्रकुमार बनाम भारत संघ (A.I.R 1988 S.C 1125) में उच्चतम न्यायालय की 7 सदस्यीय संविधान पीठ ने सर्वसम्मति से यह अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 323 का खण्ड 2 (ग) और अनुच्छेद 323 (ख) का खण्ड 3 (ग) जिसके द्वारा अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय तथा अनुच्छेद 226 एवं 227 के अधीन उच्च न्यायालयों की अधिकारिता को प्रशासनिक अधिकरणों से समाप्त कर दिया गया था, असंवैधानिक एवं अवैध है क्योंकि वे न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति को नष्ट करते हैं जो संविधान का "आधारभूत ढाँचा" है। पी0 सांबामूर्ति बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य (A.I.R. 1987 S.C. 663) में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रत्येक प्रशासनिक विनिश्चय न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति के अधीन है। संसद उच्च न्यायालय के स्थान पर एक वैकल्पिक संस्थापक व्यवस्था, जैसे कि प्रशासनिक अधिकरण बना सकती है, बशर्ते कि वह अधिकरण उच्च न्यायालय जितना ही प्रभावी हो। चूँकि अनुच्छेद 341-1 का खण्ड 5 राज्य सरकार को अधिकरण के न्यायिक निर्णय को बदलने की शक्ति देता है जो सीधे तौर पर विधायिका और कार्यपालिका के बीच शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन करता है, इसीलिए खण्ड (5) को अंसैवाधिक एवं शून्य घोषित कर दिया गया।

**(ब) मूल अधिकारों के सम्बन्ध में :** न्यायपालिका के इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण केशवानन्द भारती बनाम केरल राज्य (A.I.R. 1973 S.C. 1461) के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि उच्चतम न्यायालय को न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त है और वह संसद द्वारा पारित की गई विधियों को संविधान की कसौटी

पर कस व परख सकता है एवं मूल अधिकारों से असंगत होने पर उसे रद्द या निरसित कर सकता है। मेनका गाँधी बनाम भारत संघ (A.I.R. 1978 SC) के वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मूल अधिकारों से असंगत होने या उनके प्रभावित करने वाली विधियों को न्यायालय देख सकता है और उनका पुनर्विलोकन कर सकता है। मिनर्वा मिल्स बनाम भारत संघ (A.I.R. 1980 SC 1789) के बाद में संविधान पीठ ने न्यायिक पुनर्विलोकन को संविधान का आधारभूत ढाँचा मानते हुए 42वें संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 368 में जोड़े गये खण्ड (4) व (5) को असंवैधानिक घोषित कर दिया।

**(ग) आपातकाल के सन्दर्भ में :** माखन सिंह बनाम पंजाब राज्य (A.I.R. 1964 SC 382) के वाद में अभिनिर्धारित किया कि राष्ट्रपति के आदेश की भी न्यायिक समीक्षा की जा सकती है यदि वह प्रथम दृष्टया विद्वेषपूर्ण या अप्राधिकृत प्रतीत है। ए0डी0एम0 जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ल (A.I.R. 1976 SC 1207) के मामले में न्यायिक पुनर्विलोकन को एक नया आयाम दिया गया तथा अपने विसम्मत निर्णय में न्यायाधीश खन्ना ने कहा कि इंग्लैण्ड में भी किसी व्यक्ति को बिना सुने या परीक्षण किये सिद्धदोष या बन्दी नहीं बनाया जाता जबकि वहाँ संसद सर्वोच्च्य है तो फिर भारत में बिना परीक्षण के किसी व्यक्ति को कैसे निरुद्ध रखा जा सकता है, क्योंकि यहाँ तो संविधान सर्वोच्च्य है।

एस0 आर0 बोम्मई बनाम भारत संघ (1994) 3 SCC 1 में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 356 के अधीन राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करने और विधानसभाओं को भंग करने की राष्ट्रपति की शक्ति सशर्त है, यह आत्यन्तिक शक्ति नहीं है। वह न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति के अधीन है। न्यायालय के बहुमत का निर्णय सुनाते हुए न्यायाधीश श्री पी0वी0 जीवनरेडडी ने कहा कि राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करने की घोषणा का न्यायिक पुनर्विलोकन किया जा सकता है और इसमें दुर्भावना से ग्रस्त पाये जाने पर विधानसभा को पुनः जीवित भी किया जा सकता है।

**नीति- निर्धारण के सम्बन्ध में :** बालकों कर्मचारी संघ बनाम भारत (A.I.R. 2002 SC) के मामले में न्यायालय ने यद्यपि प्रारम्भ में आर्थिक नीति निर्धारण के सम्बन्ध में न्यायिक पुनर्विलोकन को मना किया लेकिन फिर भी इस सम्बन्ध में सरकार को सचेत किया कि वह आर्थिक नीतियों के निर्धारण में पारदर्शिता व युक्तियुक्तता का ध्यान रखे साथ ही साथ संविधान की मर्यादाओं का उल्लंघन न करे।

एकता शक्ति फाउण्डेशन बनाम दिल्ली सरकार (A.I.R. 2006 SC) के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने दोहराया कि अदालतें नीतिगत मामलों में कार्यपालिका की जगह नहीं ले सकती जब तक कि कोई मौलिक अधिकार का उल्लंघन न हो या संवैधानिक

सीमाएं पार न हो, लेकिन प्रशासनिक निर्णयों में तर्कहीनता की जांच कर सकती हैं। टाटा सेलुलर कम्पनी बनाम भारत संघ (1994) 6 SC 651 के ऐतिहासिक मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने प्रशासनिक निर्णयों की न्यायिक समीक्षा के दायरे को परिभाषित किया और कहा कि प्रशासनिक निर्णयों, खासकर निविदाओं में न्यायालयों को बहुत संयम बरतना चाहिए एवं प्रशासनिक प्राधिकारी के निर्णय को तुरन्त नहीं बदलना चाहिए जब तक कि चयन प्रक्रिया मनमानी (Arbitrary) तर्कहीन (Unreasonable), भेदभावनपूर्ण (Discriminatory), या प्राकृतिक न्याय (Natural Justice) के सिद्धांतों का उल्लंघन न करती हो।

सेन्टर फार पब्लिक इंटरेस्ट लिटिगेशन बनाम भारत संघ (2012) 3 SCC 1 के ऐतिहासिक मामले में उच्चतम न्यायालय ने एक बार पुनः न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग करते हुए सरकार द्वारा 2008 में मनमाने ढंग से वितरित किये गये 122 2G स्पेक्ट्रम लाइसेंसों को रद्द कर दिया और सरकार को आदेशित किया कि वह प्राकृतिक संसाधनों का आवंटन सार्वजनिक नीलामी में बोली लगाकर करे न कि पहले आओ, पहले पाओ के आधार पर। जिससे राष्ट्र का अधिक से अधिक लाभ हो सके।

(ड) अनुसूचि के सम्बन्ध में : किहोतो होलोहन बनाम जाचिल्हू (A.I.R. 1993 SC 412) के बाद में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि दल- विरोधी कानून के तहत विधानसभा अध्यक्ष द्वारा लिये गये निर्णय में त्रुटियों की जांच का न्यायिक पुनर्विलोकन किया जा सकता है। साथ ही न्यायालय ने यह माना कि समीक्षा का यह दायरा बहुत सीमित है। न्यायालय केवल संवैधानिक जनादेश के उल्लंघन पर आधारित दुर्भावना, प्राकृतिक न्याय के नियमों का पालन नहीं करने और दुराग्रह के मामलों में ही न्यायिक समीक्षा करेगा।

आई0 आर0 कोएलहो बनाम तमिलनाडू राज्य (2007) 3 SCC 1 के बाद में उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रश्न उठा कि क्या नौवीं अनुसूचि में शामिल विधियों को मूल अधिकारों के उल्लंघन के आधार पर चुनौती दी जा सकती है? न्यायालय की नौ सदस्यीय संविधान पीठ ने अपने ऐतिहासिक फैसले में कहा कि 24 अप्रैल 1973 (केशवानन्द भारती मामले का निर्णय आने की तिथि के बाद) को नौवीं अनुसूचि में डाली गई कोई भी विधि यदि वह संविधान के मूल ढाँचे (Basic Structure) या मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती है, तो उसका न्यायिक पुनर्विलोकन किया जा सकता है। इस फैसले ने केशवानन्द भारती मामले में प्रतिपादित मूल ढाँचे के सिद्धांत की पुष्टि की और संविधान के संरक्षक के रूप में उच्चतम न्यायालय की भूमिका को पुनः स्थापित किया।

(च) राष्ट्रपति/राज्यपाल की क्षमादान शक्ति के सम्बन्ध में : मारू राम बनाम भारत संघ (A.I.R. 1983 SC 361) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि

राष्ट्रपति/राज्यपाल की क्षमादान शक्ति पूर्णतः न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन नहीं है लेकिन जहाँ इसका प्रयोग मनमाने, तर्कहीन एवं दुर्भावनापूर्ण आधार पर किया जाता है वहाँ इसकी समीक्षा की जा सकती है।

ई0 सुधाकर बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य (A.I.R. 2006 SC 3385) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 72 के अधीन राष्ट्रपति और अनुच्छेद 161 के अधीन राज्यपाल की क्षमादान शक्तियाँ असीमित नहीं हैं और ये न्यायिक समीक्षा के अधीन हैं। यदि ऐसी शक्ति का प्रयोग मनमाने ढंग से (Arbitrary) बिना विवेक का प्रयोग किये (non-application of mind) दुर्भावनापूर्ण इरादे से किया गया है तो न्यायालय ऐसे क्षमादान के आदेश को रद्द कर सकता है।

सुप्रीम कोर्ट एडवोकेट्स-ऑन-रिकार्ड एसोसिएशन बनाम भारत संघ (2015)13 SCC 1 के ऐतिहासिक मामले में उच्चतम न्यायालय ने 4:1 के बहुमत से संसद द्वारा पारित 99वें संविधान संशोधन एवं राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग अधिनियम, 2015 को न्यायपालिका की स्वतन्त्रता को प्रभावित करने वाला एवं संविधान के मूल ढाँचे का उल्लंघन मानते हुए असंवैधानिक एवं रद्द घोषित कर दिया। तमिलनाडू राज्य बमान तमिलनाडू के राज्यपाल और एक अन्य (JLT 2025 SCJ अप्रैल- मई 61 के बाद में न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि राज्य विधापिका के द्वारा पारित विधेयकों को उस पर अनुमति हेतु अनुच्छेद 200 के अन्तर्गत राज्य द्वारा राज्यपाल के समक्ष प्रस्तुत करने पर अथवा राज्यपाल द्वारा आरक्षित विधेयक को अनुच्छेद 201 के अन्तर्गत राष्ट्रपति के समक्ष भेजे जाने पर 'पाकेट विटो' अथवा निरपेक्ष विटो के तहत उस पर अनुमति देने के लिए लम्बी अवधि तक इन्कार नहीं किया जा सकता है। यद्यपि ऐसी अनुमति दिये जाने अथवा अनुमति रोक लेने अथवा विधेयक को आरक्षित रखने की कोई समय-सीमा विहित नहीं है फिर भी ये कृत्य राज्यपाल अथवा राष्ट्रपति के द्वारा एक युक्तियुक्त समय के भीतर अवश्य कर लेना चाहिए अन्यथा उक्त समय के बाद अनुमति दिया गया हुआ मान लिया जायेगा। इस प्रकार अनुच्छेद 200 व 201 के अन्तर्गत राज्यपाल और राष्ट्रपति के द्वारा अपनी शक्तियों के प्रयोग में लिये गये निर्णयों की न्यायिक समीक्षा की जा सकती है।

**निष्कर्ष :** न्यायिक पुनर्विलोकन सर्वोच्च न्यायालय के हाथ में एक ब्रह्मस्त्र है जो उसने विधि शासन एवं संविधान की संरक्षा के लिए धारण किया है। इसका प्रयोग कर न्यायालय सरकार के मनमाने एवं निरंकुश शासन से मुक्ति दिलाता है। वस्तुतः संविधान निर्माताओं का मुख्य ध्येय भारत के लोगों की स्वतन्त्रता एवं गरिमा की रक्षा करना है, जिन्होंने इसके लिए लगभग 200 वर्षों तक संघर्ष किया। अतः यह आवश्यक है कि इसकी रक्षा की जाये। संविधान के लागू होने के बाद भारत

की जो महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं, उनमें से एक उच्चतर न्यायपालिका द्वारा पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग करना है। जब तक इस शक्ति का प्रयोग न्यायालयों द्वारा प्रभावी रूप से एवं निर्भयता के साथ किया जाता रहेगा, तब तक देश में लोकतन्त्र सुरक्षित व सुनिश्चित रहेगा और संविधान बना रहेगा चाहे उसमें जितनी भी कमी हो। उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालयों के समक्ष संवैधानिक रिटों के लिए जिस बड़ी संख्या में आवेदन होते हैं, उससे यह प्रकट होता है कि भारत में 'मर्यादित सरकार है' या 'विधि का शासन है व्यक्तियों का नहीं'। हमारे उच्चतम न्यायालय ने कार्यपालिका के विरुद्ध, अन्याचारी विधान के विरुद्ध और विधानमण्डल के विरुद्ध व्यक्ति के अधिकारों की सदैव रक्षा की है। जब कभी विधानमण्डल ने व्यक्ति के विरुद्ध या न्यायाधीशों के विरुद्ध अपने विशेषाधिकारों पर अत्यधिक बल दिया तब उच्चतम न्यायालय ने उस पर रोक लगा दी। जिस प्रकार गुलाब में काँटे होते हैं, उसी प्रकार न्यायिक पुनर्विलोकन में भी कुछ कंटक हैं। विगत दशकों में हमारे उच्चतम न्यायालय ने कुछ नवीन सिद्धांत प्रतिपादित किये हैं जैसे— "आधारिक संरचना" "आधारिक लक्षण" "भविष्यलक्षी अध्यारोपण" "अप्रगणित मूल अधिकार" एवं "संवैधानिक नैतिकता" आदि। जिनके लिए संविधान में कोई स्पष्ट आधार नहीं है। न्यायालयों को अपनी इस प्रवृत्ति पर स्वःनियंत्रण लगाना होगा अन्यथा इसके गलत परिणाम भी हो सकते हैं चाहे भले ही न्यायिक नूतनताओं के निर्माताओं के आशय कतने ही उत्तम क्यों न हो। इस गतिरोध के कारण भ्रम और अनिश्चितता होगी। विशालतम संविधान और अद्यतन संशोधनों द्वारा पहले ही इसमें पर्याप्त वृद्धि हो गई है। लिखित संविधान का उद्देश्य राजनीतिक प्रणाली में निश्चितता एवं व्यवस्था लाना होता है किन्तु जनता के लिए, प्रशासकों के लिए और स्वयं न्यायालयों के लिए भी यह दुख का विषय है कि अनिश्चितता और भ्रम बढ़ते जा रहे हैं। जब विधायिका एवं न्यायापालिका संशोधन या न्यायिक सक्रियतावाद के माध्यम से एक दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न करते हैं तो कड़वाहट बढ़ जाती है। और यह कोई नहीं कह सकता कि किन-किन क्षेत्रों में इन नवीन सिद्धांतों का विस्तार किया जायेगा। क्योंकि इससे अन्तिम वचन उच्चतम न्यायालय का ही होगा। इसका परिणाम यह होगा कि संविधान का संशोधन न्यायापालिका के द्वारा होगा जबकि अनुच्छेद 368 विनिर्दिष्ट रूप से यह शक्ति विधायी तन्त्र को सौंपता है।

### संदर्भ

1. बसु, दुर्गादास— भारत का संविधान : एक परिचय (1998) सातवां संस्करण प्रेंटिस हाल आफ इंडिया प्रा०लि० नई दिल्ली
2. बसु, दुर्गादास — भारत का संविधान : एक परिचय (2002) वाधवा पब्लिकेशंस, नागपुर

3. पाण्डेय, जे0एन0 – भारत का संविधान (2019)– सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
4. बावेल, बसंतीलाल– भारत का संविधान (2003)– सेन्द्रल लॉ पब्लिकेशंस, इलाहाबाद
5. शुक्ला, वी0एन0 – भारत का संविधान (2008)– ईस्टर्न बुक कम्पनी, लखनऊ
6. कुमार, नरेन्द्र – भारत की संवैधानिक विधि (2018)– इलाहाबाद लॉ एजेन्सी, फरीदाबाद
7. अवस्थी – अवस्थी –इंडियन कांस्टीट्यूशन चतुर्थ संस्करण (2025) एल0एन0ए0 पब्लिकेशंस, आगरा
8. जजमेन्ट एण्ड लॉ टुडे इलाहाबाद अप्रैल–मई 2025
9. [www.drishtias.com](http://www.drishtias.com)
10. [www.hindi.livelaw.in](http://www.hindi.livelaw.in)

**Paper Received : 18 Dec., 2025**

**Paper Accepted : 07 Jan., 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## आर्द्रभूमि का पारिस्थितिक महत्व, चुनौतियाँ एवं संरक्षण

डॉ० हनी मिश्रा \*

### सारांश

प्रकृतिक रूप में जल की उपस्थिति ठोस, द्रव तथा गैस के रूप में पायी जाती है। जीवन में जल का अन्योन्याश्रित सम्बंध है। मानव जीवन के अस्तित्व की परिकल्पना जलाभाव में सम्भव नहीं है। यह कहा जा सकता है कि "जल ही जीवन" है। जल की महत्ता सर्वविदित है, लेकिन इसके प्रकृतिक गुण एवं इसकी विशिष्टताओं के सन्दर्भ में हमारा ज्ञान अत्यल्प है। जल हमें भौतिक सुखों के उत्कर्ष तक पहुँचा सकता है तथा पारिस्थिति वैपरित्य में इसका विध्वंसक रूप हमारा सर्वनाश भी कर सकता है। मानव के उत्थान में जहाँ जल सहायक सिद्ध हो सकता है, वहीं उसके विनाश का महत्वपूर्णकारक भी बन सकता है। नम भूमि क्षेत्र हमारे लिए उतने ही उपयोगी है जितने वन क्षेत्र विश्व के हर भूभाग में नम भूमिया मिलती हैं जो उथले पानी के क्षेत्र, तलीय क्षेत्र, नदियों के मैदान, बाढ़ के मैदान, प्राकृतिक समुद्री क्षेत्र, मैंग्रोव एक बड़े तालाब के रूप में मौजूद है। एक अनुमान के अनुसार विश्व के भूभाग का लगभग 5 से 6 प्रतिशत हिस्सा नम भूमि के रूप में मौजूद है। जलप्लावन आदि से जहाँ जीविका के समस्त साधनों का महती जल-राशि में विलीनीकरण हो जाता है, वहीं इसके परिवर्तित विकासात्मक स्वरूप से मानव के समुचित विकास का मार्ग भी प्रशस्त हो सकता है। आर्द्रभूमि मानव जीवन उसके रहन सहन को तो प्रभावित करता ही है।

**मूल शब्दः—** आर्द्रभूमि, रामसर साइट, जलवायु परिवर्तन, नम भूमि क्षेत्र का महत्व

### परिचय

आर्द्रभूमि या 'वैटलैंड' वह क्षेत्र है जहाँ जल का जमाव स्थायी रूप से या मौसमी रूप से होता है। इसे 'पृथ्वी का गुर्दा' (Kidneys of the Earth) कहा जाता है क्योंकि यह जल को शुद्ध करने का कार्य करता है। इसमें दलदल, नदियाँ, झीलें, डेल्टा और तटीय क्षेत्र शामिल हैं। पर्यावरण के किसी भी कार्य में अस्वाभाविक रूप से किए गए परिवर्तन को भले ही व्यापक प्रभाव स्थान विशेष में तत्काल नहीं दिखता है। किंतु उसका सूक्ष्म प्रभाव जरूर होता है। समय के साथ असर भी दिखता है किसी भी नम भूमि के भौतिक जैविक और रासायनिक अवयव उस नम भूमि की पहचान सुनिश्चित करते हैं। नम भूमि क्षेत्र उसके अनगिनत प्रकार के जंतुओं,

\* असिस्टेंट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, डी०ए०वी० पी०जी० कालेज, छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर, उ०प्र०

वनस्पतियों व सूक्ष्मजीवों के विकास एवं संरक्षण के लिए अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराते हैं इन दलदली मौसमी तालाबों को पहले यह माना जाता था कि यह अनुपयुक्त स्थान है किंतु जैसे-जैसे नम भूमि क्षेत्र के पर्यावरण में योगदान का पता चला तभी से सबका ध्यान इसके संरक्षण की ओर लगा है। नम भूमि क्षेत्र प्राणियों के पोषण प्रजनन और उनके पीने के पानी के महत्वपूर्ण क्षेत्र व जल पक्षियों के विचरण की शरण स्थली है। यह क्षेत्र जमीन से कुछ अलग ऐसे पक्षियों जलचरों सरीसृपों व सूक्ष्म जीवों व जंतुओं का आलय होते हैं जो ऐसे वर्ग में ही रह सकते हैं नम भूमि में मिलने वाले जीव जंतु कई अर्थों में भिन्न होते हैं यह इस संचित जल से अपने आहार की पूर्ति करते हैं। जल जातिगत विविधता को बनाए रखने के लिए आज ये महत्वपूर्ण है जिनमें एक जटिल और महत्वपूर्ण आहार श्रृंखला बनती है माइक्रो के रूप में नम भूमियां समुद्री प्रभाव को रोकते हैं वह तूफान से होने वाले नुकसान को कम करने में सहायक होते हैं। स्वीटजरलैंड में विश्व संरक्षण संगठन के भवन पर रामसर ब्यूरो की स्थापना की गई है किसी भी देश को अपने यहां की नम भूमि संबंधी प्रस्ताव को इसी ब्यूरो के पास भेजना पड़ता है। प्रस्ताव मिलने पर ब्यूरो इनका मूल्यांकन करता है वह मानक पूर्ण होने के बाद उन्हें रामसर स्थल का दर्जा दिया जाता है। रामसर स्थलों की सूची में सबसे ज्यादा संख्या 175 यूनाइटेड किंगडम का है हालांकि क्षेत्रफल की दृष्टि से यह बहुत बड़े नहीं है। दुनिया का सबसे बड़ा रामसर भूमि क्षेत्र ब्राजील का रियो निग्रो है। जबकि दूसरा कनाडा का क्वीन आप मोड नामक क्षेत्र है

### अध्ययन का उद्देश्य

1. भारत में आर्द्रभूमि की प्रकृति, स्वरूप का सामान्य अध्ययन करना।
2. भारत में आर्द्रभूमि के प्रभाव का अध्ययन एवं विश्लेषण करना।
3. भारत में आर्द्रभूमि के प्रबन्धन हेतु विभिन्न नीतियां।

### विधि तंत्र

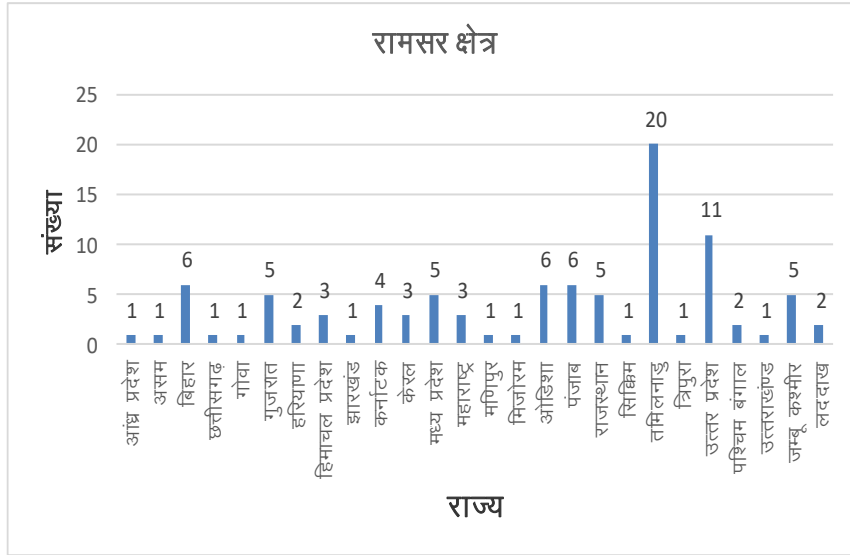
प्रस्तुत शोध पत्र में विभिन्न तथ्यों का अध्ययन एवं विश्लेषण करने हेतु द्वितीयक आंकड़ों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक आंकड़े सांख्यिकीय पत्रिकाओं, सरकारी कार्यालयों, गैर सरकारी कार्यालयों, पुस्तकों, रिपोर्टों एवं इन्टरनेट के माध्यम से प्राप्त की गयी है। प्रस्तुत शोधपत्र में अनुभाषिक एवं सांख्यिकीय विधियों का सहारा लिया गया है।

### आर्द्रभूमि का वर्गीकरण

अंतर्देशीय आर्द्रभूमि के अन्तर्गत झीलें, तालाब, दलदल और नदियाँ तटीय आर्द्रभूमि के अन्तर्गत मैंग्रोव, लैगून, और मूंगा चट्टानें धान के खेत, मछली पालन के तालाब और जलाशय प्रमुख हैं। जैव विविधता के संरक्षण में आर्द्रभूमि के अन्तर्गत



केवलादेव नेशनल पार्क, राजस्थान यह भी 1981 में घोषित की गई थी और भारत की एक प्रमुख रामसर साइट है। रामसर साइट्स की उपयोगिता बहुत अधिक है, और ये हमारे पर्यावरण और जीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। यहाँ कुछ प्रमुख उपयोगिताएँ हैं।



### पारिस्थितिक और आर्थिक महत्व

रामसर साइट्स पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएँ प्रदान करती हैं, जैसे कि मिट्टी का निर्माण, जल चक्र, और वायु शुद्धिकरण आदि। आर्द्रभूमि दुनिया की 40 प्रतिशत प्रजातियों का घर है। ये प्राकृतिक फिल्टर की तरह काम करते हैं और प्रदूषकों को सोख लेते हैं। यह स्पंज की तरह अतिरिक्त वर्षा जल को सोखकर बाढ़ के खतरे को कम करता है। आर्द्रभूमि कार्बन सिंक के रूप में कार्य करती है, जो ग्लोबल वार्मिंग को कम करने में सहायक है। मछली पकड़ने, कृषि और पर्यटन के माध्यम से लाखों लोगों को रोजगार मिलता है। पृथ्वी पर पाई जाने वाली मत्स्य प्रजातियों में से अकेले 40 प्रतिशत ताजे जल में ही पाई जाती है।

### प्रमुख चुनौतियाँ और खतरे

रामसर साइट्स पर कई तरह के संकट हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख हैं तेजी से बढ़ती आबादी और भूमि उपयोग में परिवर्तन के कारण रामसर साइट्स के आसपास के क्षेत्रों में विकास हो रहा है, जिससे इन साइट्स को खतरा हो रहा है। औद्योगिक, कृषि और घरेलू कचरे के कारण रामसर साइट्स में प्रदूषण बढ़ रहा है, जिससे जल गुणवत्ता खराब हो रही है। विदेशी प्रजातियों के आक्रमण से रामसर साइट्स की जैव विविधता को खतरा हो रहा है। जलवायु परिवर्तन के कारण रामसर

साइट्स के जल स्तर और तापमान में परिवर्तन हो रहा है, जिससे इन साइट्स की जैव विविधता को खतरा हो रहा है। अनियोजित विकास और निर्माण गतिविधियों के कारण रामसर साइट्स के आसपास के क्षेत्रों में प्रदूषण और शोर बढ़ रहा है, जिससे इन साइट्स को खतरा हो रहा है जलवायु परिवर्तन के कारण रामसर साइट्स के जल स्तर और तापमान में परिवर्तन हो रहा है, जिससे इन साइट्स की जैव विविधता को खतरा हो रहा है। जल संसाधनों का अति उपयोग और बर्बादी के कारण रामसर साइट्स के जल स्तर में कमी आ रही है। सामुदायिक भागीदारी की कमी के कारण रामसर साइट्स के संरक्षण में समस्या आ रही है। निधि की कमी के कारण रामसर साइट्स के संरक्षण और प्रबंधन में समस्या आ रही है।

दुर्भाग्य की बात यह है कि आज संरक्षित व अन्य चिह्नित भूमि क्षेत्र के अलावा अन्य गैर चिह्नित नम भूमि क्षेत्र में काफी तेजी से नष्ट हो रहे हैं बढ़ती जनसंख्या की आपूर्ति के खातिर विशाल परियोजनाओं को बनाने शहरीकरण आधारभूत सुविधाएं जुटा ने नए-नए आर्थिक क्षेत्र की स्थापना होने से जहां खाली हो या निकट दृष्टि भूमि घट रही है वहीं इससे भूमि आवरण में बड़े पैमाने पर परिवर्तन आ रहा है। नम भूमि क्षेत्र को बेकार मानने से इसका क्षेत्रफल कम होता चला जा रहा है। नम भूमियों के लिए प्रदूषण एक बड़ा खतरा है नम भूमियों के जैविक व अजैविक प्रदूषण कार्य तत्त्व यथा शोधन संयंत्र से निकले पदार्थ, तेल और औद्योगिक व घरेलू रसायनों भारी धातुओं से अपशिष्ट के मिलने से जल की भौतिक रासायनिक अजैविक संरचना बदल जाती है। इनके पानी में मिलने से उसमें पाए जाने वाले सभी जीव जंतु प्रभावित होते हैं। जलभूमि क्षेत्रों के बारे में विश्वसनीय और नियमित जानकारी उनके संरक्षण की आवश्यकता व उनके सामाजिक तथा आर्थिक महत्व के अभाव ने सरकारों द्वारा नीति बनाने तथा प्रशासनिक नियंत्रण बनाने में बाधाएं डाली हैं। हालांकि इसको देखते हुए दुनिया भर के पर्यावरण विज्ञानी काफी समय से ऐसे क्षेत्रों को बचाने की बात कर रहे हैं लेकिन इस संबंध में जागरूकता के अभाव के कारण इनकी ओर कम ही ध्यान दिया गया है। दुर्भाग्य की बात यह है कि आज संरक्षित व अन्य चिह्नित नमभूमि क्षेत्रों के अलावा अन्य गैर चिह्नित नमभूमि क्षेत्र भी तेजी से नष्ट हो रहे हैं। बढ़ती जनसंख्या की आपूर्ति के लिए विशाल परियोजनाओं को बनाने, शहरीकरण, आधारभूत सुविधाएं जुटाने, नये-नये आर्थिक क्षेत्रों की स्थापना होने से जहां खाली व अन्य कृषि भूमि घट रही है, वही इससे भूमि आवरण में बड़े पैमाने पर परिवर्तन आ रहा है। नमभूमियों को बेकार मानते हुए उन्हें पाटकर उनमें निर्माण करने से भी नमभूमि क्षेत्रफल कम होता चला जा रहा है। नमभूमियों के लिए प्रदूषण एक बड़ा खतरा बनकर उभरा है। नमभूमियों में जैविक व अजैविक प्रदूषणकारी तत्वों यथा कीटनाशकों, शोधन संयंत्रों से निकले पदार्थ, खनिज तेल, औद्योगिक व घरेलू रसायनों, भारी धातुओं, सीवरेज से लेकर व ठोस अपशिष्टों के मिलने से जल की भौतिक, रासायनिक व जैविक संरचना बदल जाती है। इनके पानी में मिलने से शैवाल से लेकर उसमें पाए जाने

वाले सभी जीवजन्तु प्रभावित होते हैं। प्रदूषण के बढ़ने से नमभूमि क्षेत्रों में प्राकृतिक की रूप से उगने वाली वनस्पतियां लुप्त होती हैं, जिनका स्थान प्रदूषित जल पात्र में उगने वाली खरपतवार व वनस्पतियां लेकर नमभूमि क्षेत्रों के कन संवेदनशील तंत्र को परोक्ष रूप से नष्ट करने लगी हैं। प्राकृतिक रूप से पाई जाने वाली वनस्पतियों में कमी का असर उन वनस्पतियों पर आश्रित पक्षियों, जन्तुओं, सरीसृपों, सूक्ष्मजीवियों आदि पर पड़ रहा है जो उन पर आश्रित हैं। इसी प्रकार ऐसे क्षेत्रों में सीमा से अधिक दोहन से भी इनको नुकसान पहुंचता है। इनमें से मृदुजल में पाई जाने वाली जैव विविधता सभी प्रकार की जैव विविधताओं में सबसे ज्यादा संकटापन्न हैं, किन्तु सागरीय नमक्षेत्र भी नष्ट बर्बाद न हो रहे हो ऐसा नहीं है। बढ़ती मानवीय आवश्यकताओं की आपूर्ति के कारण हुए पर्यावरणीय बदलाव के चलते पृथ्वी से कई प्रकार की वनस्पतियां व जीव-जंतु विलुप्त हो चुके हैं। जीवों व वनस्पतियों की कई प्रजातियां दुर्लभ हो चुकी हैं तो कई संकटग्रस्त हैं। ऐसे में यदि पृथ्वी के परिदृश्य से नमभूमियां भी गायब हो जाए तो पृथ्वी से अनेक प्रकार के पशु-पक्षियों, वनस्पतियों, कीटों, सूक्ष्मजीवियों का अस्तित्व स्वतः ही समाप्त हो जाएगा। इसमें समग्र प्रभाव की मात्र कल्पना की जा सकती है। शहरों के विस्तार के कारण आर्द्रभूमियों को सुखाकर निर्माण कार्य किया जा रहा है। औद्योगिक कचरा, प्लास्टिक और कृषि रसायनों का बहाव, तापमान में वृद्धि और समुद्र के जल स्तर का बढ़ना, विदेशी पौधों (जैसे जलकुंभी) का अत्यधिक प्रसार भी हो रहा है।

### रामसर कन्वेंशन और भारत

रामसर कन्वेंशन एक अंतरराष्ट्रीय संधि है जो आर्द्रभूमियों के संरक्षण के लिए 1971 में ईरान में हस्ताक्षरित की गई थी। 2026 तक, भारत में रामसर साइटों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, जो पर्यावरण संरक्षण के प्रति देश की प्रतिबद्धता को दर्शाती है। उपग्रह की सर्वेक्षण के याद आंकड़ों के आधार पर भारत में नाम भूमि क्षेत्रफल लगभग 35 लाख हेक्टेयर के आसपास था जिन में 50 हेक्टेयर तक ना भूमि क्षेत्र को शामिल किया गया था। इसके अतिरिक्त ऐसी नम भूमिया भी कब नहीं है जिनका क्षेत्रफल 50 हेक्टेयर से कम है। भारत में सबसे अधिक 77 नाम भूमि की पहचान असम में हुई है इसके उपरांत कर्नाटक है। भारत में 604 स्थल नाम भूमि है जिनमें जनवरी 2026 तक 96 रामसर स्थल की पात्रता रखते है जिसमें राज्य में 89 जबकि केन्द्रशासित प्रदेश में 7 है। भारत सरकार ने देश में नम भूमियों के संरक्षण हेतु नई दिशा निर्देश आधार भूमि संरक्षण व प्रबंधन अधिनियम दिसंबर 2010 को जारी किए। इस दिशा निर्देश में पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील ऐसे स्थल जो उच्च जैव विविधता वाले है इन्हे बचाने के लिए हानिकारक गतिविधियों जैसे निर्माण बिना उपचारित कचरे तथा औद्योगीकरण को प्रतिबंधित करने का प्रावधान किया गया है। जिसमें निम्न गतिविधियों पर प्रतिबंध आरोपित किया गया है आधार भूमि के अधिग्रहण पर प्रतिबंध, क्षेत्र में औद्योगिक इकाइयों की स्थापना तथा

वर्तमान इकाइयों के बिस्तार पर प्रतिबंध, हानिकारक पदार्थों के निर्माण संग्रह तथा निस्तारण पर प्रतिबंध, ठोस कचरे की डम्पिंग पर रोक, अगर पहले से ही ठोस कचरे की डम्पिंग आधार भूमि क्षेत्र के आसपास हो रहा है तो उसे नियम अनुसूचित होने के 6 महीने के अंदर चरणबद्ध रूप से समाप्त कर दिया जाएगा। नगरों या शहरों के बिना उपचारित अवशिष्ट अथवा सीवेज आदि पर रोक, आद्र भूमि के अंतर्गत जल कृषि, कृषि योग्य बागवानी जैसी गतिविधियों पर रोक लगाई गई है। किसी भी आर्द्रभूमि को गैर प्राकृतिक उपयोग के लिए केंद्र सरकार तभी इजाजत देगी जब प्राधिकरण ऐसी सिफारिश करें और केंद्र सरकार लोकहित के लिए आवश्यक समझे। इस प्राधिकरण में अध्यक्ष सहित 12 सदस्य हैं जिनका कार्यकाल 3 वर्ष का होता है। वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के सचिव इसके अध्यक्ष होते हैं।

### संरक्षण के उपाय

ईरान के रामसर शहर में नम भूमियों पर पहली बार किसी भी स्वस्थ सम्मेलन का आयोजन 2 फरवरी 1971 को किया गया था। इस सम्मेलन के फल स्वरूप ही 127 देशों ने समझौता किया कि अपने-अपने देश में आर्द्रभूमि क्षेत्र को बचाने के लिए संकल्प के साथ-साथ प्रयास भी करेंगे। यह सम्मेलन आर्द्रभूमि क्षेत्र को बचाने की दिशा में पहला प्रयास था। तभी से हर साल 2 फरवरी को नम भूमि दिवस मनाया जाता है। रामसर स्थलों की नई परिभाषा के अनुसार – ऐसे स्थानों को जहां पर कृत्रिम स्थाई या अस्थायी जल युक्त रहने वाला वह ताजा अथवा नमकीन स्थल हो रामसर की सूची में लिया जा सकता है। इसके अंतर्गत समुद्री जल वाले ऐसे क्षेत्र भी आते हैं जिसके जल की गहराई 6 मीटर से ज्यादा हो। रामसर मान्यता के लिए दो श्रेणियां हैं इनमें से पहली श्रेणी में वह प्राकृतिक क्षेत्र भी आते हैं जो अपने आप में दुर्लभ हो और किसी खास जैविक भौगोलिक क्षेत्र में पड़ते हो। जबकि दूसरी श्रेणी में वह क्षेत्र रखे जाते हैं जो किसी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लुप्त होने वाली प्रजातियों को संरक्षण प्रदान करते हैं। कुछ ऐसे जल भूमि क्षेत्र भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण माने जाते हैं यदि वे जंतुओं एवं वनस्पतियों को आकर प्रदान करते हो जो एक विशिष्ट क्षेत्र में जैव विविधता को बनाए रखते हो एवं इसी प्रकार दुर्लभता की कगार पर पहुंच चुके जंतु या वनस्पतियों के जीवन चक्र को संरक्षण देते हो। ऐसे क्षेत्र जहां मछलियों के लिए प्रचुर भोजन हो या उनके अंडे देने के लिए आदर्श स्थान हो या कुछ विशेष पक्षियों के उड़ान पद पर पड़ते हो, वह भी रामसर स्थल का दर्जा पाने के पात्र है।

### निष्कर्ष

सरकार को आर्द्रभूमि (संरक्षण और प्रबंधन) नियमों को कड़ाई से लागू करना एवं स्थानीय समुदायों को संरक्षण अभियान में भी शामिल करना चाहिए। प्रदूषित आर्द्रभूमियों की सफाई और उनमें प्राकृतिक वनस्पतियों को फिर से उगाना का प्रयास करना चाहिए। विश्व आर्द्रभूमि दिवस (2 फरवरी) के माध्यम से जन जागरूकता को

बढ़ावा देना चाहिए। आर्द्रभूमि न केवल पर्यावरण संतुलन के लिए अनिवार्य है, बल्कि मानव अस्तित्व के लिए भी आवश्यक है। यदि हमने समय रहते इनके संरक्षण पर ध्यान नहीं दिया, तो जल संकट और प्राकृतिक आपदाओं की विभीषिका बढ़ती जाएगी।

### सन्दर्भ

- सिंह, अमर एवं रजा, मेहदी (1980), मानवीय संसाधन एवं संरक्षण भूगोल, प्रगति प्रकाशन, मेरठ।
- सुराणा, नरेन्द्रमल एवं राजकुमारी (2013), पर्यावरण अध्ययन, एसबीपीडी पब्लिशिंग हाउस आगरा।
- सिंह, इन्दिरा (2009), पर्यावरण भूगोल, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली।
- मामोरिया, चतुर्भुज (2022), पर्यावरण, आपदा प्रबन्धन एवं जलवायु परिवर्तन, एसबीपीडी पब्लिशिंग हाउस आगरा।
- सिंह, सविन्द्र (2020), पर्यावरण भूगोल का स्वरूप, प्रवालिका पब्लिकेशन्स इलाहाबाद।
- Gupta, N., Pradhan, S., Jain, A., & Patel, N. (2021). Sustainable agriculture in India 2021. Council on Energy, Environment and Water.

**Paper Received : 20 Dec., 2025**

**Paper Accepted : 05 Feb., 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## प्राथमिक शिक्षा स्तर पर निर्धनता का शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

डॉ० रीना \*

### सन्दर्भ

किसी भी व्यक्ति की प्रगति और विकास के लिए शिक्षा एक अनिवार्य क्षेत्र है गरीबों के कारण शिक्षा प्राप्ति के दौरान अक्सर विभिन्न में बाधाओं का सामना करना पड़ता है। शिक्षा पर गरीबी के प्रभाव से उत्पन्न होने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए उपायों को क्रियान्वित करने की आवश्यकता है। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य शिक्षा पर गरीबों के प्रभाव को समझना है ने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए उपायों को लागू करने की आवश्यकता है। शोध पत्र का उद्देश्य भारत में शिक्षा पर गरीबी के प्रभाव को समझना है। मुख्य क्षेत्र जिन बातों को ध्यान में रखा गया है, वे हैं, बचपन की गरीबी और उसकी अभिव्यक्तियाँ, प्राथमिक गरीबी की स्थिति के अनुसार शिक्षा, गरीबी में कमी पर शिक्षा का प्रभाव, गरीबी का प्रभाव छोटे बच्चों के स्कूल के अनुभव पर, महिलाओं के लिए शिक्षा को बढ़ावा देना भारत में गरीबी से त्रस्त परिवार, गरीबी और शिक्षा नीति तथा इसके दायरे में रणनीतियाँ, शिक्षा नीति निर्माताओं।

**मूल शब्द :** शिक्षा, गरीबी, शिक्षा नीतिय, रणनीतियाँ, व्यक्ति, संसाधन

### परिचय

गरीबी शब्द का अर्थ मुख्य रूप से संसाधनों की कमी से मतलब है गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की संख्या अलग-अलग तरीके से मापी जाती है। भारत में बच्चों को आमतौर पर तीन श्रेणी में बाटा जाता है स्कूल जाने वाले पूर्ण कालिक, नौकरी करने वाले जिन्हें बाल श्रम कहा जाता है और वे जो कुछ भी नहीं कर रहे हैं उन्हें कहीं नहीं रहने वाले बच्चे कहा जाता है। ग्रामीण इलाकों में आमतौर पर घर आकार मे बड़े होते हैं आमतौर पर एक ही घर में तीन से अधिक बच्चे होते हैं परिवार गरीबी की स्थिति सभी बच्चों को सीखने और शिक्षा देने की अनमति नहीं देती क्योंकि यह पहले से भी मौजूद है जैसा कि कहा गया है जब माता-पिता कम कर जाते हैं तो वह आमतौर पर वे अपने बड़े बच्चों, विशेषकर लड़कियों से अपेक्षा करते हैं कि वे अपने छोटे भाई-बहनों की देखभाल करें, इसलिए, छोटे भाई-बहनों पर अत्याचार होता है, जिससे

---

\* असिस्टेंट प्रोफेसर, बी०एड० विभाग, के०पी०एच०ई०आई०, प्रयागराज, प्रो. राजेन्द्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

वे शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। कुल 223.5 बच्चों की आबादी में से 2004-05 में 2.9 मिलियन बच्चे या 1.3% अति गरीब थे, 66.7 मिलियन बच्चे या 29.8% गरीबी से ग्रस्त थे, 124 मिलियन बच्चे या 55.48% गैर-गरीब निम्न श्रेणी में थे वर्ग, और 29.9 मिलियन बच्चे या 13.38% गैर-गरीब श्रेणी में थे। यद्यपि प्रकार, गरीबी से ग्रस्त बच्चों का अनुपात, अर्थात् 31.1 प्रतिशत, गरीबी से ग्रस्त बच्चों के अनुपात से बड़ा है कुल जनसंख्या का, ग्रामीण क्षेत्र के लिए 28.7% और शहरी क्षेत्र के लिए 25.9%।

देश में हर तीन में से एक बच्चा गंभीर गरीबी की स्थिति में रहता है। इस समस्या के बावजूद, लगभग 70% बच्चे गरीबी की स्थिति में रह रहे हैं भारत में 2009 में शिक्षा अधिनियम पारित हुआ, जिसके तहत 15 वर्ष तक के बच्चों को मुफ्त शिक्षा प्रदान की जाएगी। 14 वर्ष की आयु तक वर्तमान में, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में, सभी बच्चे, यहां तक कि वंचित, हाशिए पर और सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों से संबंधित लोग भी समाज को शैक्षणिक संस्थानों में दाखिला लेने का अवसर प्राप्त हुआ है और अपने कौशल और क्षमताओं को निखारा। गरीबी से ग्रस्त बच्चों को अवसर प्राप्त हुआ है स्कूलों में दाखिला लेने के लिए, लेकिन संसाधनों की कमी के कारण, उन्हें कभी-कभी कठिनाई का सामना करना पड़ता है वर्दी, किताबें, स्टेशनरी सामान आदि उपलब्ध कराने में समस्याएँ आईं।

प्राथमिक विद्यालयों में बच्चे छोटे होते हैं, उनके लिए उचित आहार और पोषण प्राप्त करना महत्वपूर्ण है। गरीबी की स्थिति स्वस्थ और पौष्टिक जीवन का प्रावधान नहीं करती है। बच्चों को आहार और इस तरह, उनकी सीखने की क्षमता और कौशल प्रभावित होते हैं। बच्चों को आमतौर पर अवधारणाओं को समझने में समस्या और जानकारी की कमी का अनुभव होता है और ज्ञान उन्हें स्कूल में अच्छा प्रदर्शन करने में सक्षम नहीं बनाता है। मध्याह्न भोजन योजना के तहत बच्चों को स्वस्थ और पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराया जाएगा ताकि स्कूलों में बच्चों को अपनी पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित करने के लिए आवश्यक ऊर्जा मिल सके। स्वच्छ पेयजल आदि की व्यवस्था हो तो निश्चित रूप से विद्यार्थियों को शिक्षा और ज्ञान की प्राप्ति होगी। गरीबी शिक्षा को कैसे प्रभावित कर सकती है, इसके कुछ प्रमुख कारण इस प्रकार हैं -

### 1. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सीमित पहुँच

गरीबी अक्सर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के अवसरों तक पहुँच को सीमित कर देती है। गरीबी में रहने वाले परिवारों के पास स्कूल की फीस, यूनिफॉर्म, पाठ्यपुस्तकें या स्कूल आने-जाने के लिए परिवहन का खर्च उठाने के लिए वित्तीय साधन नहीं हो सकते हैं। परिणामस्वरूप, गरीब पृष्ठभूमि के बच्चों को अपर्याप्त सुविधाओं, खराब प्रशिक्षित शिक्षकों और सीमित शिक्षण संसाधनों वाले कम संसाधन वाले स्कूलों में जाने के लिए मजबूर होना पड़ सकता है।

## 2. अपर्याप्त पोषण और स्वास्थ्य

गरीबी अक्सर पौष्टिक भोजन, स्वास्थ्य सेवा और स्वच्छता सुविधाओं तक अपर्याप्त पहुँच से जुड़ी होती है। कुपोषण और अनुपचारित स्वास्थ्य समस्याएँ बच्चों के संज्ञानात्मक विकास, शारीरिक स्वास्थ्य और समग्र स्कूली प्रदर्शन को प्रभावित कर सकती हैं। खराब स्वास्थ्य के कारण अनुपस्थिति, एकाग्रता में कमी और सीखने की क्षमता में बाधा आ सकती है, जिससे शैक्षिक असमानताएँ और बढ़ सकती हैं।

## 3. घर पर सीमित शैक्षिक संसाधन

गरीबी बच्चे के घर में शैक्षिक संसाधनों की उपलब्धता को सीमित कर सकती है। गुजारा करने के लिए संघर्ष कर रहे परिवारों के पास किताबें, कंप्यूटर, इंटरनेट या अनुकूल अध्ययन वातावरण उपलब्ध नहीं हो सकता है। संसाधनों की यह कमी बच्चे की स्व-अध्ययन, असाइनमेंट पूरा करने या स्वतंत्र रूप से सीखने की क्षमता में बाधा डाल सकती है।

## 4. मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक तनाव

गरीबी में रहने से बच्चों को दीर्घकालिक तनाव, असुरक्षा और भावनात्मक चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है। वित्तीय अस्थिरता, आवास की असुरक्षा और हिंसा या अपराध के संपर्क में आने से उनके मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। ऐसे तनाव उनके ध्यान, एकाग्रता और सीखने की प्रक्रिया में प्रभावी रूप से शामिल होने की क्षमता को प्रभावित कर सकते हैं।

## 5. सीमित पाठ्येतर गतिविधियाँ

गरीबी अक्सर बच्चों की खेल, कला और क्लब जैसी पाठ्येतर गतिविधियों में भागीदारी को सीमित कर देती है। ये गतिविधियाँ समग्र विकास, सामाजिक कौशल और समग्र शैक्षिक जुड़ाव में योगदान दे सकती हैं। ऐसे अवसरों तक पहुँच की कमी बच्चों को एक समग्र शैक्षिक अनुभव से वंचित कर सकती है।

## 6. स्कूल छोड़ने की दर और सीमित शैक्षिक आकांक्षाएँ

कम आय वर्ग के छात्रों के अपने अधिक संपन्न साथियों की तुलना में स्कूल छोड़ने का जोखिम अधिक होता है। आर्थिक दबाव, पारिवारिक आय में योगदान देने की आवश्यकता, या सहायता की कमी के कारण छात्र जल्दी स्कूल छोड़ सकते हैं। इसके अतिरिक्त, गरीबी का चक्र छात्रों की आकांक्षाओं को प्रभावित कर सकता है और उच्च शिक्षा प्राप्त करने या संतोषजनक करियर पथ अपनाने में उनके विश्वास को सीमित कर सकता है।

शिक्षा पर गरीबी के प्रभाव को दूर करने के लिए सरकारी नीतियों, सामाजिक सहायता प्रणालियों और सामुदायिक भागीदारी को शामिल करते हुए एक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। शिक्षा पर गरीबी के नकारात्मक प्रभावों को कम करने और शैक्षिक समानता को बढ़ावा देने के लिए गरीबी को कम करने, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच में सुधार, पोषण संबंधी सहायता प्रदान करने, स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने और सहायक शिक्षण वातावरण बनाने के प्रयास आवश्यक हैं।

### भारत में गरीबी उन्मूलन के समाधान

भारत में गरीबी उन्मूलन के लिए आर्थिक, सामाजिक और संरचनात्मक कारकों पर जोर देने वाला एक समावेशी दृष्टिकोण समय की मांग है। भारत में गरीबी के दानव से लड़ने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए –

#### 1. बुनियादी सुविधाओं तक समान पहुँच प्रदान करना

गरीबी उन्मूलन के लिए, खासकर ग्रामीण इलाकों में, बुनियादी सुविधाओं तक पहुँच बेहद जरूरी है। भोजन, स्वच्छ पेयजल और आश्रय की सुविधा से गरीब लोग उत्पादक रूप से काम कर पाएँगे और खुद को गरीबी से बाहर निकाल पाएँगे।

#### 2. कृषि आय में सुधार

देश की अधिकांश आबादी अभी भी आय के लिए कृषि पर निर्भर है, इसलिए कृषि आय में सुधार निश्चित रूप से कई लोगों को गरीबी से बाहर लाएगा। सरकार का 2022-23 तक किसानों की आय दोगुनी करने का लक्ष्य इस दिशा में एक आवश्यक कदम है।

#### 3. गैर-कृषि रोजगार में वृद्धि

देश में गरीबी उन्मूलन के लिए गैर-कृषि रोजगार सृजन एक और महत्वपूर्ण उपाय है। खाद्य प्रसंस्करण, परिवहन, निर्माण, बिक्री, विपणन आदि जैसे क्षेत्र कई लोगों के लिए रोजगार पैदा कर सकते हैं।

#### 4. ऋण तक उचित पहुँच

ऋण तक उचित पहुँच से उद्यमी युवाओं को व्यवसाय स्थापित करने और रोजगार सृजन करने का अवसर मिलेगा। लेकिन, वर्तमान व्यवस्था उचित पहुँच की अनुमति नहीं देती है, और इस व्यवस्था को सुधारने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं। ऐसा ही एक कदम बैंकों द्वारा शुरू की गई महिला-उन्मुख ऋण सुविधाएँ हैं। सरकारी योजनाएँ मुद्रा योजना, स्त्री शक्ति योजना, अन्नपूर्णा योजना आदि ऋण सुलभता के लिए महिला-उन्मुख योजनाएँ हैं।

### 5. बालिका शिक्षा

गरीबी उन्मूलन के लिए बालिकाओं को शिक्षा प्रदान करना आवश्यक है। इससे बालिकाओं को औपचारिक रोजगार प्राप्त करने और आत्मनिर्भर बनने में मदद मिलेगी।

### 6. आर्थिक विकास में तेजी लाना

आर्थिक विकास में तेजी से रोजगार के नए अवसर पैदा होंगे और सरकार को करों के रूप में अधिक राजस्व प्राप्त होगा। बदले में, सरकार इस धन का उपयोग गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को लागू करके और भारत में गरीबी के प्रभाव को कम करने के लिए आवश्यक बुनियादी ढाँचे का निर्माण करके सीधे गरीबी पर प्रहार करने के लिए कर सकती है।

### 7. रोजगार

विनिर्माण, कृषि और सेवा उद्योग तीन संभावित क्षेत्र हैं जिनमें काफी रोजगार सृजित हो सकते हैं। इसलिए नीति निर्माताओं को अर्थव्यवस्था में विकास को प्रोत्साहित करने के अपने प्रयासों में इन क्षेत्रों को प्राथमिकता देनी चाहिए, जो न्यायसंगत होगा और अधिक रोजगार सृजित करेगा।

### 8. कौशल विकास

रोजगार दर को बढ़ाने के साथ-साथ श्रमिकों के कौशल को श्रम बाजार की जरूरतों के अनुरूप बनाने के लिए कौशल विकास कार्यक्रमों पर काफी ध्यान दिया जाना चाहिए।

### 9. माइक्रोफाइनेंस

कम सुविधा प्राप्त लोगों, जैसे कम प्रतिनिधित्व वाले लोगों और महिलाओं को अपना उद्यम शुरू करने और उसे विकसित करने में सक्षम बनाने के लिए छोटे व्यवसाय ऋण और माइक्रोक्रेडिट सुविधाओं तक पहुंच प्रदान करना, जिससे उनकी आय में वृद्धि हो सके।

### 10. यूनिवर्सल बेसिक इनकम (यूबीआई)

एक लक्षित यूबीआई कार्यक्रम की कल्पना करें, जिसमें गरीबी उन्मूलन में मदद के लिए सभी के लिए, विशेषकर गरीबों के लिए आय की गारंटी हो।

### 11. कल्याणकारी योजनाएँ

गरीब और वंचित लोगों के लिए सहायता कार्यक्रमों का विस्तार किया जाना चाहिए तथा उन्हें मजबूत बनाया जाना चाहिए, जिसमें एनएसएएपी, पीडीएस और नरेगा जैसे सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम शामिल हैं।

## 12. क्षमता निर्माण

स्वास्थ्य बीमा: सरकार को सभी भारतीयों के लिए औसत चिकित्सकीय दवा मूल्य (मेडिकेयर) में और वृद्धि का प्रस्ताव करना चाहिए तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य देखभाल प्रणालियों की गुणवत्ता में सुधार करना चाहिए, विशेष रूप से वंचितों और ग्रामीण समुदायों के लिए।

### सार्वभौमिक शिक्षा तक पहुंच: अच्छी स्कूल सुविधाएं

सार्वभौमिक शिक्षा तक पहुंच: अच्छी स्कूल सुविधाएं प्रदान करें, सर्वोत्तम शिक्षकों को खोजें और नियुक्त करें, तथा बच्चों को वित्तीय सहायता प्रदान करें ताकि वे अच्छी शिक्षा प्राप्त कर सकें और स्कूल में बने रह सकें।

### भारत में गरीबी उन्मूलन पहल

**एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आईआरडीपी) :** आईआरडीपी 1978-79 में शुरू किया गया था और 2 अक्टूबर, 1980 से पूरे देश में विस्तारित किया गया था। कार्यक्रम का उद्देश्य, क्रमिक योजना अवधियों में, ग्रामीण गरीबों को उत्पादक रोजगार

**अन्नपूर्णा योजना :** वर्ष 1999-2000 में शुरू की गई यह योजना उन वरिष्ठ नागरिकों को मुफ्त खाद्यान्न उपलब्ध कराती है जो स्वयं की देखभाल करने में असमर्थ हैं, विशेष रूप से सबसे कमजोर बुजुर्गों को जो एनओएपीएस के अंतर्गत नहीं आते हैं।

**महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) 2005 :** ग्रामीण परिवारों को एक वर्ष में 100 दिन का रोजगार देने का वादा करता है, जिसमें एक तिहाई रोजगार महिलाओं के लिए निर्धारित है, तथा यदि 15 दिनों के भीतर रोजगार उपलब्ध नहीं कराया जाता है तो बेरोजगारी भत्ते का प्रावधान करता है। दिसम्बर 2025 में मनरेगा का नाम बदलकर 'जी राम जी' कर दिया गया।

**राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन: आजीविका (2011) :** ग्रामीण गरीबों के लिए नियमित वित्तीय गतिविधियों, जैसे स्वयं सहायता समूह और कौशल विकास कार्यक्रम बनाने पर ध्यान केंद्रित करता है।

**राष्ट्रीय शहरी आजीविका मिशन :** एनयूएलएम का उद्देश्य शहरी गरीबों को स्वयं सहायता समूहों में संगठित करना, कौशल विकास प्रशिक्षण आयोजित करना तथा स्वरोजगार उपक्रमों के लिए ऋण तक पहुंच बनाना है।

उपरोक्त योजनाओं का भारत में गरीबी के प्रभावों पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ेगा। अगर इन्हें सही ढंग से लागू किया जाए, तो भारत में गरीबी कम से कम हो जाएगी। गरीबी एक ऐसी स्थिति है जहाँ व्यक्ति भोजन, वस्त्र, स्वच्छ पेयजल और

आश्रय जैसी बुनियादी जरूरतें पूरी नहीं कर पाता। नीति आयोग का बहुआयामी गरीबी सूचकांक (एमपीआई) 2021, जो स्वास्थ्य, शिक्षा और जीवन स्तर को गरीबी के तीन आयाम मानता है, बताता है कि देश की 25.01% आबादी गरीबी में रहती है। भारत में गरीबी के कारणों और प्रभावों के विभिन्न कारण हैं। इसलिए, कई समितियों ने गरीबी की स्थिति निर्धारित करने के लिए अलग-अलग आंकड़ों का इस्तेमाल किया है।

### निष्कर्ष

शिक्षा प्राप्ति के लिए आवश्यकताओं और अपेक्षाओं की पूर्ति आवश्यक है। सरकारी स्कूलों में शिक्षा निःशुल्क प्रदान की जाती है, लेकिन व्यक्तिगत उन्हें स्वयं ही अन्य वस्तुएं प्राप्त करनी पड़ती हैं, जैसे कि यूनिफॉर्म, स्कूल बैग, स्टेशनरी परिवहन सुविधाएँ वगैरह। गरीबी से त्रस्त व्यक्तियों के लिए यह मुश्किल हो जाता है इन जरूरतों को पूरा करने के लिए। वे आमतौर पर अपनी लड़कियों से घर के काम करने की उम्मीद करते हैं और अपने भाई-बहनों की देखभाल करें, जबकि उनके माता-पिता काम पर जाते हैं। अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की भूमिका, निजी स्कूलों और गैर-सरकारी संगठनों के लिए भी यह महत्वपूर्ण है, लेकिन सीमित है, और इसे अधिकतम सीमांत माना जाएगा, तथा राज्य की जिम्मेदारी सर्वोच्च रहेगी। महत्व। गरीबी से त्रस्त व्यक्तियों के बीच शिक्षा को सुविधाजनक बनाने के लिए, यह वित्तीय सहायता, बुनियादी ढांचे, नागरिक सुविधाओं, रचनात्मक का प्रावधान करना आवश्यक है स्कूलों के भीतर गतिविधियों, अनुदेशात्मक रणनीतियाँ और उचित शिक्षण अधिगम विधियों, ताकि ये सीखने के प्रति प्रेरित महसूस करते हैं।

### संदर्भ

- 'प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण' (सर्व शिक्षा अभियान) (2016), सावित्री कुमारी
- प्राथमिक शिक्षा चुनौतियां एवं समस्याएं (2022), अरविंद कुमार यादव
- प्रारंभिक शिक्षा (व्यक्तित्व विकास के विविध चरण) (2021), आशुतोष दुबे
- <https://share.google/lovdgDQqYcjUSIZ22>
- <https://share.google/Dn7POyJseKSKgmjkd>
- <https://fairgaze.com/interested-article/poverty-in-india-facts-causes-effects-and-solutions.htm>

Paper Received : 31 Dec., 2026

Paper Accepted : 15 Jan., 2026

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## भारत में गठबंधन की राजनीति : एक विश्लेषणात्मक अवलोकन

डॉ० नरेन्द्र भारती \*

### सारांश

भारतीय लोकतंत्र संसदात्मक व्यवस्था पर आधारित है। यहाँ पर संघात्मक प्रणाली को अपनाया गया है। ऐसी प्रणाली को भारत की बहु संस्कृति, भाषाई और क्षेत्रीय विभिन्नता के चलते अपनाया गया है। गठबंधन सरकार की आवश्यकता किसी एक राजनीतिक दल को सरकार गठन के लिए आवश्यक बहुमत नहीं प्राप्त होने की स्थिति में पड़ती है। द्विदलीय या एक दलीय प्रभुत्ववाली राजनीतिक व्यवस्थाओं की तुलना में बहुदलीय व्यवस्था में गठबंधन सरकार की संभावना अधिक है। स्वतंत्रता के पश्चात् प्रारंभिक दो दशकों तक केन्द्र में एक ही पार्टी का वर्चस्व था। इस वर्चस्व के कारण भारतीय राजनीतिक व्यवस्था एकात्मक शासन की तरफ बढ़ती जा रही थी, किन्तु 1960 के दशक के अंतिम वर्षों में कांग्रेस का प्रभुत्व समाप्त होने लगा। 1969 तक आते-आते कांग्रेस में फूट पड़ गयी। श्रीमती गाँधी के नेतृत्व में पहली गठबंधन सरकार का गठन हुआ। 1977 में पहली गैर-कांग्रेसी सरकार का गठन हुआ, जो कई गैर-कांग्रेसी दलों से मिलकर बनी थी। इसके बाद 1989 में गठबंधन की सरकार केन्द्र में क्रमशः वी.पी.सिंह और चन्द्रशेखर सिंह के नेतृत्व में आयी। 1991 में नरसिम्हा राव के नेतृत्व में पहली ऐसी गठबंधन सरकार अस्तित्व में आयी जिसने अपना कार्यकाल पूरा किया। 1999 में भाजपा के नेतृत्व वाले एन.डी.ए. गठबंधन सरकार ने भी अपना कार्यकाल पूरा किया था। इस प्रकार, भारतीय गठबंधन की राजनीति के साथ उत्तरोत्तर अग्रसर है जो दो गठबंधनों के इर्द-गिर्द घूम रही है। प्रस्तुत शोध-पत्र में 1977 से लेकर 2024 तक बनने वाली गठबंधन सरकारों का एक विश्लेषणात्मक अवलोकन प्रस्तुत किया गया है।

**मूल शब्द:** लोकतंत्र, गठबंधन, संघीय व्यवस्था, चुनाव प्रक्रिया, बहुदलीय व्यवस्था।

सामान्यतः जब एक दल सरकार बनाने की स्थिति में नहीं होता तब गठबंधन का निर्माण होता है। अनेक दल सरकार बनाने के लिए एक साथ आते हैं। ये दल अपने सिद्धान्त एवं विचारधारा के साथ समझौता करते हुए साथ आते हैं।<sup>1</sup> घटक दल न्यूनतम साझा कार्यक्रम का निर्माण करते हैं जिसके आधार पर सरकार अपना काम करती है। भारत में गठबंधन का लम्बा इतिहास रहा है।<sup>2</sup> स्वतंत्रता के पूर्व भारत सरकार अधिनियम, 1935 के तहत 1937 में गठबंधन सरकार का निर्माण हुआ था।

---

\* श्री कृष्ण कॉम्प्लेक्स, अहियापुर चौक, मुजफ्फरपुर, बिहार

स्वतंत्र भारत में गठबंधन का प्रथम प्रयोग 1977 में हुआ। 1977 से लेकर अब तक विभिन्न गठबंधन सरकारों का निर्माण हुआ जिनका मिला-जुला अनुभव रहा है।

मोरारजी देसाई के नेतृत्व में 1977 में गैर-काँग्रेसी राजनीति दलों ने जनता पार्टी सरकार की स्थापना की। 1963 में राम मनोहर लोहिया ने 'गैर-काँग्रेसवाद'<sup>3</sup> का नारा दिया। आजादी के बाद संपन्न हुए तीन आम चुनावों में काँग्रेस की भारी जीत हुई थी। ऐसा प्रतीत होने लगा कि काँग्रेस को हराया नहीं जा सकता तथा यह हमेशा सत्ता में काबिज रहेगी। गैर-काँग्रेसी मतों के विभाजन को रोकने के लिए काँग्रेस के खिलाफ केवल एक विपक्षी उम्मीदवार की बात लोहिया ने की। डॉ. लोहिया का यह फार्मूला काम कर गया तथा 1967 के आम चुनाव में कांग्रेस पार्टी को सात राज्यों में पराजय का सामना करना पड़ा।<sup>4</sup> लोहिया के फार्मूले ने भारत में गठबंधन की राजनीति की नींव रख दी। प्रथम गठबंधन सरकार केन्द्रीय स्तर पर मोरारजी देसाई के नेतृत्व में 1977 में गठित की गई। जनता सरकार लगभग दो वर्षों (1977-79) तक सत्ता में रही। सरकार में सत्ता संघर्ष के कारण देसाई को त्याग-पत्र देना पड़ा।

दूसरा गठबंधन अक्टूबर 1979 में चौधरी चरण सिंह के नेतृत्व में बना। इस गठबंधन को CPI एवं CPI(M) का समर्थन प्राप्त था। किन्तु चरण सिंह लोकसभा में विश्वास मत प्राप्त नहीं कर सके। जब राष्ट्रपति ने उन्हें तीन सप्ताह के अन्दर विश्वास मत प्राप्त करने को कहा तो चरण सिंह ने सदन का सामना किए बगैर त्याग-पत्र दे दिया। इस प्रकार, वे भारत के प्रथम प्रधानमंत्री बन गए जिन्होंने सदन का सामना नहीं किया।<sup>5</sup>

गठबंधन की राजनीति का तीसरा प्रयोग 1989 में हुआ। वी.पी. सिंह के नेतृत्व में राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार बनी। इस मोर्चा को काँग्रेस के साथ-साथ भाजपा का समर्थन प्राप्त हुआ। इसे CPI, CPI(M), RSP एवं फॉरवर्ड ब्लॉक का भी समर्थन प्राप्त था। किन्तु यह सरकार भी अधिक समय तक नहीं चल पायी। लालकृष्ण आडवाणी को रथ यात्रा के दौरान गिरफ्तार कर लिया गया। प्रतिक्रियास्वरूप भाजपा ने वी. पी. सिंह सरकार से समर्थन वापस ले लिया। इस प्रकार, यह सरकार मात्र ग्यारह महीने तक चल सकी।

केन्द्रीय स्तर पर चौथा गठबंधन चन्द्रशेखर के नेतृत्व में बना। वी. पी. सिंह के त्याग-पत्र देने के पश्चात् चन्द्रशेखर ने सरकार बनाने का दावा पेश कर दिया। काँग्रेस, AIADMK, बहुजन समाज पार्टी, मुस्लिम लीग, नेशनल कांफ्रेंस, केरल काँग्रेस, शिरोमणि अकाली दल एवं कुछ स्वतंत्र सदस्यों के सहयोग से चन्द्रशेखर ने 11 नवम्बर 1990 को सरकार का गठन किया। किन्तु यह सरकार भी अधिक दिनों तक नहीं चल सकी। काँग्रेस के समर्थन वापसी के कारण चन्द्रशेखर ने प्रधानमंत्री पद से इस्तीफा दे दिया।

पाँचवाँ गठबंधन एच.डी. देवेगौड़ा के नेतृत्व में बना। संयुक्त मोर्चा सरकार का गठन उन्होंने किया। यह मोर्चा 13 राजनीतिक दलों का गठबंधन था। इस मोर्चा को काँग्रेस, CPI, CPI(M), समाजवादी पार्टी, डी. एम. के., असम गणपरिषद, राष्ट्रीय जनता दल तथा तेलगू देशम पार्टी सहित कुल 13 दलों का समर्थन प्राप्त था। संयुक्त मोर्चा की सरकार उस रथ के समान थी जिसमें 13 घोड़े विभिन्न दिशाओं में सरकार को खींच रहे थे।<sup>6</sup> सरकार पर अनावश्यक दबाव था। सौदेबाजी चरम पर थी। इन सबके बीच काँग्रेस ने सरकार से समर्थन वापस ले लिया जिसके कारण सरकार बीच में ही गिर गई।

आई.के. गुजराल के नेतृत्व में छठे गठबंधन सरकार का गठन हुआ। इस गठबंधन सरकार को भी काँग्रेस, CPI, CPI(M), समाजवादी पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल सहित अन्य दलों का समर्थन प्राप्त था। पूर्व की भाँति यहाँ भी काँग्रेस पार्टी ने समर्थन वापस ले लिया। सरकार अल्पमत में आ गई। प्रधानमंत्री गुजराल ने इस्तीफा दे दिया तथा राष्ट्रपति के. आर. नारायणन को लिखा कि चूँकि मेरी सरकार ने बहुमत खो दिया है, इस कारण नैतिक आधार पर मैं अपने पद पर बने रहना नहीं चाहता हूँ। सातवें गठबंधन का नेतृत्व अटल बिहारी वाजपेयी ने 19 मार्च 1998 से 10 अक्टूबर 1999 तक किया। वाजपेयी सरकार को AIADMK, भाजपा, अकाली दल, शिवसेना, DMK, सहित अन्य दलों का समर्थन हासिल था। यह सरकार भी अधिक दिनों तक नहीं चल पायी क्योंकि वाजपेयी ने AIADMK की माँग को अस्वीकार कर दिया। जयललिता ने रक्षा मंत्री जार्ज फर्नान्डीस को अपदस्थ करने की माँग की थी जिसे वाजपेयी ने अस्वीकार कर दिया।<sup>7</sup> जब वाजपेयी ने लोक सभा में बहुमत प्रस्ताव पेश किया तो AIADMK ने प्रस्ताव के विरोध में मत दिया तथा इस प्रकार एक मत से सरकार गिर गई। प्रधानमंत्री वाजपेयी ने राष्ट्रपति को अपना इस्तीफा सौंप दिया।

पुनः, अटल बिहारी वाजपेयी ने आठवें गठबंधन का नेतृत्व किया। तेरहवीं लोक सभा चुनाव के पश्चात् एन. डी. ए. का नेतृत्व वाजपेयी ने किया। इस गठबंधन को चौबीस राजनीतिक दलों का समर्थन प्राप्त था जिसमें AIADMK, तेलगू देशम पार्टी, नेशनल काँग्रेस, तृणमूल काँग्रेस, शिवसेना तथा शिरोमणि अकाली दल प्रमुख थे। इस प्रकार, इस गठबंधन को विभिन्न विचारधारा, संस्कृति, धर्म, क्षेत्र, सामाजिक संरचना आदि का समर्थन प्राप्त था। देश में गठबंधन के इतिहास में पहली बार इस गठबंधन ने वाजपेयी के नेतृत्व में अपना कार्यकाल पूरा किया।<sup>8</sup> नौवीं गठबंधन की सरकार का नेतृत्व मनमोहन सिंह ने 2004 से 2009 तक किया। मनमोहन सिंह ने यू.पी.ए. का नेतृत्व किया जिसे एन.सी.पी., राष्ट्रीय लोकदल, नेशनल काँग्रेस, मुस्लिम लीग, केरल काँग्रेस, समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल तथा वाम दलों का समर्थन प्राप्त था।

यू.पी.ए. ने पुनः दसवें गठबंधन सरकार का गठन 2009 में किया। इस बार फिर मनमोहन सिंह प्रधानमंत्री चुने गए। इस गठबंधन को बहुमत से दस सीटें कम

मिलीं थी। इसे कुल 262 सीटें मिलीं। इस गठबंधन को समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल, तथा जनता दल (सेक्युलर) का समर्थन मिला। इन सभी दलों ने यू.पी.ए. को बिना शर्त समर्थन जारी रखा ताकि अगले पाँच वर्षों तक भाजपा नेतृत्व वाले एन.डी.ए. को सत्ता से बाहर रखा जा सके।<sup>9</sup>

### बहुदलीय व्यवस्था की शुरुआत

1989 के आम चुनाव में कांग्रेस की हार ने भारतीय राजनीति में कांग्रेस के वर्चस्व को समाप्त कर दिया तथा बहुदलीय व्यवस्था की शुरुआत हुई। चुनाव में अनेक दलों की भागीदारी शुरु हुई। किसी भी एक दल को लोकसभा में बहुमत नहीं मिला तथा केन्द्रीय स्तर पर गठबंधन सरकार एक वास्तविकता बन गई जिसमें क्षेत्रीय दलों की अहम भूमिका हो गई। क्षेत्रीय दलों के उदय एवं गठबंधन की राजनीति ने राज्यों की सौदेबाजी की क्षमता में वृद्धि की।<sup>10</sup> केन्द्र राज्यों को उपेक्षित नहीं कर सकता था, विशेषकर तब जब केन्द्र की सरकार उस दल के समर्थन पर टिकी हुई थी जिसकी सरकार किसी राज्य में थी। केन्द्र के महत्त्वपूर्ण निर्णय उस राज्य सरकार के दबाव में लिए जाने लगे। मंत्रियों की नियुक्ति तथा विभागों के बदलाव में ऐसे राज्य सरकारों का दबाव स्पष्ट था। इस कारण, अन्य राज्यों ने केन्द्र के सौतेले व्यवहार की भी आलोचना की।

इस प्रकार, 1989 के बाद केन्द्र में गठबंधन सरकार का दौर शुरु हुआ। किसी भी एक दल को सरकार बनाने के लिए स्पष्ट बहुमत नहीं मिला। 1991-1996 की नरसिम्हा राव की सरकार भी पूर्ण बहुमत में न होने के कारण अन्य दलों के बाहरी समर्थन पर चली। 1996 के बाद से केन्द्र में जो सरकारें बनीं, वे क्षेत्रीय दलों के सहयोग से बनीं। केन्द्र सरकारों का बनना एवं टूटना क्षेत्रीय दलों की मर्जी एवं दया पर निर्भर करने लगा। प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी की पहली सरकार 13 दिन और दूसरी सरकार 13 महीने चली। 1999 से 2004 तक वाजपेयी ने 24 दलों वाली गठबंधन सरकार का नेतृत्व किया। 2004 से 2014 तक मनमोहन सिंह के नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार चली। इस दौरान केन्द्र सरकार गठबंधन के दबाव में लाचार एवं विवश दिखी। राष्ट्रीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों की भूमिका निर्णायक हो गई। सहकारी संघीय व्यवस्था का स्थान ब्लैकमेलिंग संघवाद ने ले लिया। केन्द्र सरकार के निर्णय गठबंधन के सहयोगियों के दबाव में लिए जाने लगे। प्रधानमंत्री पद का भारी अवमूल्यन हुआ। क्षेत्रीय दलों का दबदबा देशी-विदेशी मामलों में बढ़ने लगा। घटक दलों की मदद के बिना केन्द्र में सरकार चलाना मुश्किल हो गया।

### एन.डी.ए. : 1999-2004

1999 में भाजपा के नेतृत्व वाले एन.डी.ए. में 16 दल थे तथा जिसने 300 सीटें जीतीं। इस गठबंधन में भाजपा 182 सीटों के साथ सबसे बड़ी पार्टी थी। कांग्रेस एवं उसके सहयोगी दलों को 134 सीटें मिलीं। कांग्रेस को सबसे अधिक 112

सीटें प्राप्त हुई। वहीं वामदलों ने 42 सीटें जीतीं।<sup>11</sup> वाजपेयी के नेतृत्व में एन.डी.ए. ने गठबंधन राजनीति को एक नई दिशा प्रदान की। एन.डी.ए. सरकार ने स्वस्थ केन्द्र-राज्य सम्बन्ध पर बल दिया। इसके द्वारा दावा किया गया कि वह राष्ट्रीय हितों तथा क्षेत्रीय आकांक्षाओं दोनों का प्रतिनिधित्व करती है। इस प्रकार, एन.डी.ए. का मुख्य उद्देश्य बहुस्तरीय विविधता में राष्ट्रीय एकता, सघन बहुलवाद तथा संघवाद का चरित्र प्रस्तुत करना था जो गठबंधन प्रयोग की सफलता में कारगर सिद्ध हुआ।

#### यू.पी.ए. : 2004-2014

2004 लोकसभा के चुनाव ने यह स्पष्ट कर दिया कि भारत पूर्ण रूप से गठबंधन युग में प्रवेश कर चुका है। एक-दलीय सरकार अब और नहीं चल सकती। कई दलों का गठजोड़ ही अब केन्द्रीय राजनीति की नियति बन गई। यहाँ यह भी स्पष्ट हो गया था कि जो गठबंधन बन रहा है, वह कहीं से भी वैचारिक नहीं है बल्कि परिस्थितिवश निर्मित है। यू. पी. ए. की सरकार को वाममोर्चा ने समर्थन दिया। यू. पी. ए. चुनाव के बाद बना गठजोड़ था, जबकि एन. डी. ए. मूल रूप से चुनाव से पूर्व का गठजोड़ था। काँग्रेस 145 सीटों के साथ सबसे बड़ी पार्टी थी। पार्टी ने पिछले चुनाव (1999) की 49 सीटें बरकरार रखी। 65 सीटों पर हारी जहाँ पिछली बार जीती थी। वहीं 96 नई सीटों पर जीत हासिल किया। दूसरी ओर भाजपा 44 सीटें हारते हुए कुल 138 सीटें ही जीत पाई। वोट प्रतिशत 23 से 21.5 होने के कारण बहुत सारे लोकसभा क्षेत्र इसके हाथ से निकल गए।<sup>12</sup>

2009 के चुनाव में यू. पी. ए. की लगातार दूसरी बार सरकार बनी। यह 1989 के बाद पहली गठबंधन सरकार थी। जो लगातार दूसरी बार चुनकर आई। यहाँ गठबंधन में काँग्रेस की स्थिति मजबूत हुई। 206 सीटों के साथ काँग्रेस सबसे बड़ी पार्टी बनी। यू. पी. ए.-ए के दौरान संघवाद की ऐसी प्रवृत्ति सामने आयी है जिसमें कहा जा सकता है कि भारतीय राजनीति सहयोगी संघवाद एवं सौदेबाजी संघवाद के बीच डोलती नजर आती है।<sup>13</sup> कभी-कभी ऐसा भी लगता है कि कमजोर केन्द्र सरकार एवं मजबूत राज्य सरकारों के बीच संघवादी चरित्र का संतुलन न बिगड़ जाय। केन्द्र की यू. पी. ए. सरकार आतंकवाद को रोकने के लिए आतंकविरोधी ट्रिब्यूनल (NCT) कानून लाना चाहती थी, परन्तु कई क्षेत्रीय दलों यथा तृणमूल काँग्रेस, जे. डी. यू. तथा बीजेपी ने इसका विरोध किया। उनका तर्क था कि इस तरह का कानून राज्य सरकारों को विश्वास में लिए बगैर नहीं पारित किया जा सकता है। यह देश के संघीय चरित्र पर आघात होगा। सरकार यह कानून पारित नहीं करवा सकी। इस घटना ने देश के संघीय चरित्र को प्रदर्शित किया जहाँ टकराव और वैमनस्य केन्द्र एवं राज्य सरकारों के बीच देखा गया।

2011 में प्रधानमंत्री के बांग्लादेश दौरे पर पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी को भी जाना था, जहाँ दोनों देशों के बीच तीस्ता नदी जल बँटवारा संधि पर हस्ताक्षर करना था। किन्तु अन्तिम क्षणों में ममता बनर्जी ने अपना कार्यक्रम रद्द कर

दिया। फलतः, संधि पर हस्ताक्षर नहीं हो पाया। इसी तरह यू.एन.ओ. के मानवाधिकार आयोग में श्रीलंका के विरुद्ध लाये गए निन्दा प्रस्ताव पर केन्द्र सरकार को न चाहते हुए भी घटक दल डी.एम.के. के खिलाफ में मतदान करना पड़ा।

### लोकसभा चुनाव 2014, 2019, 2024: गठबंधन की राजनीति और बदलते राजनीतिक परिदृश्य

2014 के आम चुनाव में गठबंधन की प्रवृत्ति में बदलाव आया। भाजपा 282 सीटों के साथ सबसे बड़ी पार्टी बनी। अपने बल पर भाजपा सरकार बना सकती थी। समर्थन की आवश्यकता नहीं थी। फिर भी नरेन्द्र मोदी ने एन. डी. ए. के घटक दलों को शामिल करते हुए सरकार का गठन किया। भाजपा के नेतृत्व वाला यह गठबंधन पूर्व के गठबंधनों से अलग था। पूर्व की गठबंधन सरकारों की लाचारी एवं विवशता नहीं थी। सरकार स्थायी थी। सरकार में क्षेत्रीय दलों की भागीदारी थी, किन्तु वे सौदेबाजी एवं ब्लैकमेल की स्थिति में नहीं थे। 2019 के आम चुनाव में लगातार दूसरी बार नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में एन.डी.ए. की सरकार बनी। इस बार भाजपा 303 सीटों के साथ सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी। यहाँ भी घटक दलों की भागीदारी सुनिश्चित करते हुए मोदी ने सरकार का गठन किया।

2024 में गठित गठबंधन सरकार की प्रकृति 2014 तथा 2019 में गठित सरकारों से भिन्न रही। उल्लेखनीय है कि 2014 और 2019 में भले ही एन.डी.ए. की गठबंधन सरकारें बनीं, परन्तु इनकी प्रकृति एक दलीय सरकार की रही। वहीं 2024 में नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में गठित सरकारों में अन्य दलों का प्रतिनिधित्व रहा तथा तकनीकी दृष्टि से इन्हें एन.डी.ए. की गठबंधन सरकार कह सकते हैं।

इस लोकसभा चुनाव की तस्वीर ने कई भ्रम तोड़ दिए। एक तरफ भाजपा ने प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के सहारे 400 सीटें हासिल करने की जो उम्मीद की थी, वह ताश के पत्तों की तरह ढह गई। वहीं, कांग्रेस के जिस गठबंधन को कमतर आंकने की जो कोशिश की गई, वह भी गलत साबित हुई। यूपी में सपा, पश्चिम बंगाल में तृणमूल कांग्रेस, महाराष्ट्र में उद्धव की शिवसेना, बिहार में राष्ट्रीय जनता दल और जद(यू), शरद पवार की एनसीपी, आंध्रप्रदेश में तेदेपा, तमिलनाडु में द्रमुक का आगे रहना और केरल में यूडीएफ के प्रदर्शन ने यह साफ कर दिया कि नई सरकार में उनकी भूमिका काफी अहम होगी। 2024 के लोकसभा चुनाव में किसी दल या चुनाव पूर्व हुए गठबंधन को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला।<sup>14</sup>

### निष्कर्ष

इस प्रकार, भारत में केन्द्रीय स्तर पर 1977 से लेकर 2024 तक अनेक गठबंधन सरकारों का गठन हुआ। भारत पूरी तरह से गठबंधन युग में प्रवेश कर चुका है। गठबंधन दो दल— भाजपा एवं कांग्रेस के इर्द-गिर्द घूम रही है। वर्तमान एन.डी.ए. सरकार में स्थायित्व है जो विकास के लिए आवश्यक है। गठबंधन सरकारों

की लाचारी एवं विवशता नहीं है। उम्मीद की जाती है कि मोदी के नेतृत्व वाली एन. डी.ए. सरकार सहकारी संघवाद की भावना को कायम रखते हुए देश को तरक्की के मार्ग पर उत्तरोत्तर ले जाएगी तथा भारत हर क्षेत्र में विकास के नए आयाम स्थापित कर पाएगा। अंत में, हम कह सकते हैं कि भारतीय राजनीति गठबंधन की राजनीति के साथ उत्तरोत्तर अग्रसर है जो दो गठबंधनों के इर्द-गिर्द घूम रही है।

### संदर्भ

1. पॉल. आर. ब्रास कोएलिएशन पॉलिटिक्स इन नार्थ इंडिया, द पॉलिटिकल साइंस रिव्यू, वॉल्यूम 62, नं. 4, दिसम्बर 1968.
2. डी. डी. बसु, 'इन्ट्रोडक्शन टु द कॉन्स्टीट्यूशन ऑफ इंडिया', वाधवा पब्लिशर्स, न्यू दिल्ली, 2002.
3. रोनाल्ड ए. वाट्स फेडरलिज्म, फेडरल पॉलिटिकल सिस्टम एण्ड फेडरेशन, एनवल रिव्यू ऑफ पॉलिटिकल साइंस, वॉल्यूम-1, 1998.
4. विद्युत चक्रवर्ती, 'रूट्स ऑफ इंडियन नेशनलिज्म द कंटेपररी एजेंडा, इनकउन्टर', सितम्बर-अक्टूबर, 1998.
5. एम. पी. सिंह 'इलेक्शनस एण्ड पार्टी सिस्टम इन इंडिया फेडराइजेशन ऑफ द पॉलिटि', थिंक इंडिया, वॉल्यूम-15, नं. 1, जनवरी-मार्च, 2012.
6. पार्थ चटर्जी, स्टेट एण्ड पॉलिटिक्स इन इंडिया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1997.
7. बलबीर सिंह, स्टेट पॉलिटिक्स इन इंडिया, मैकमिलन पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1980.
8. एन. सी. साहनी, द थ्योरी ऑफ कोएलिशन, अकेडमिक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन, जालंधर, 1971.
9. राजहंस, 'इंडियन गवर्नमेंट एण्ड पॉलिटिक्स', कॉसमॉस पब्लिकेशनस, नई दिल्ली, 1992.
10. कमला प्रसाद, 'बीजेपी एण्ड द नेशनल गवर्नेंस', मेनस्ट्रीम, दिसम्बर-19, 1998.
11. पी. रमन, एज ऑफ कोएलिशनस, हिन्दुस्तान टाइम्स, अप्रैल 11, 1997.
12. के. के. कत्याल, मेकिंग कोएलिशनस वर्क, द हिन्दू, मार्च 26, 2001.
13. महेन्द्र प्रसाद सिंह, कोएलिशन पॉलिटिक्स इन इंडिया प्रोब्लम्स एण्ड प्रोस्पेक्ट्स, मनोहर पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2004.
14. <https://elections24.eci.gov.in>

Paper Received : 28 Dec., 2025

Paper Accepted : 12 Feb., 2026

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## रोजगार के क्षेत्रों में दृष्टिबाधित शिक्षकों की परेशानियाँ एवं चुनौतियाँ

डॉ. निभा कुमारी \*

### सारांश

आधुनिकीकरण और शहरीकरण के परिणामस्वरूप कई सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन हुए हैं। विकलांग व्यक्तियों के लिए विभिन्न रोजगार विकास, प्रवृत्तियों और नीतिगत दृष्टिकोणों के महत्वपूर्ण अवलोकन ने कुछ मुद्दों को सबसे आगे लाया है। नेशनल प्रोग्राम फॉर कंट्रोल ऑफ ब्लाइंडनेस की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि दुनिया भर में 39 मिलियन दृष्टिबाधित व्यक्तियों में से, भारत लगभग 15 मिलियन का घर है। नेशनल काउंसिल ऑफ एजुकेशन रिसर्च एंड ट्रेनिंग द्वारा किए गए सर्वेक्षण के अनुसार भारत में केवल 29.16% नेत्रहीन शिक्षा प्रणाली का हिस्सा है और उनमें से कुछ को अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद नौकरी मिलती है। 10 में से एक दृष्टिबाधित व्यक्ति को नौकरी मिलती है। इसके दो मुख्य कारण हैं— दृष्टिबाधित लोगों के लिए कम अवसर तथा नियोक्ताओं की कठोर मानसिकता। दृष्टिहीन से शिक्षक के सामने कई चुनौतियाँ होती हैं जो उनके शिक्षण प्रक्रिया को गंभीर रूप से प्रभावित करती है। शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्हें बहुत कम रोजगार अवसर प्रदान होते हैं। दृष्टिहीन होने के कारण उच्च प्रतिभाशाली होने के बावजूद उन्हें पठन-पाठन के कार्य में अपना योगदान देने में कठिनाइयों के कारण वे रोजगार में कहीं न कहीं पीछे रह जाते हैं, जिससे उनमें हीन भावना विकसित हो जाती है। भारत जैसे देश में विकलांगों की संख्या इतनी बड़ी है, उनकी समस्याएँ इतनी जटिल हैं, उपलब्ध संसाधन इतने दुर्लभ हैं और सामाजिक दृष्टिकोण इतने हानिकारक हैं, यह केवल कानून की सख्ती ही है जो अंततः एक समान तरीके से पर्याप्त परिवर्तन ला सकता है। विकलांग व्यक्तियों के मानवाधिकारों की बेहतर सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए विकलांग व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम 1995 प्रभाव में आया जिसमें अनुच्छेद-2,6,7,9 क्रमशः गैर भेदभाव अधिकार, काम करने का अधिकार, काम की उचित और अनुकूल परिस्थितियों का अधिकार, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार आदि की बात कही गयी है; परन्तु अनेक कानून होने के बावजूद उनका समाधान नहीं मिल पाता है। यह शोध पत्र दृष्टिहीन शिक्षक के रोजगार में आने वाली चुनौतियों पर प्रकाश डालती है जो हमारे समाज की एक गंभीर समस्या है और इसके सुधार के लिए अधिक केंद्रित और लगातार पहल की आवश्यकता है।

**मुख्य शब्द :** रोजगार, चुनौतियों, संसाधन कानून, गैर भेदभाव

---

\* सोनपुर, सारण-844101, बिहार

## परिचय

विकलांगता एक व्यापक शब्द है जो किसी व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक विकास में किसी प्रकार की कमी का विवरण करता है। यह किसी भी स्थिति का अनुभव है जो किसी व्यक्ति के लिए कुछ गतिविधियों को करना या किसी दिए गए समाज में समान पहुंच प्राप्त करना अधिक कठिन बना देता है। नेशनल काउंसिल ऑफ एजुकेशन रिसर्च एंड ट्रेनिंग द्वारा किए गए सर्वेक्षण के अनुसार भारत में केवल 29.16% नेत्रहीन शिक्षा प्रणाली का हिस्सा है और उनमें से कुछ को अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद नौकरी मिलती है। 10 में से एक दृष्टिबाधित व्यक्ति को नौकरी मिलती है। इसके दो मुख्य कारण हैं— दृष्टिबाधित लोगों के लिए कम अवसर तथा नियोक्ताओं की कठोर मानसिकता। दृष्टिहीन से शिक्षक के सामने कई चुनौतियां होती हैं जो उनके शिक्षण प्रक्रिया को गंभीर रूप से प्रभावित करती है। शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्हें बहुत कम रोजगार अवसर प्रदान होते हैं। दृष्टिहीन होने के कारण उच्च प्रतिभाशाली होने के बावजूद उन्हें पठन-पाठन के कार्य में अपना योगदान देने में कठिनाइयों के कारण वे रोजगार में कहीं न कहीं पीछे रह जाते हैं, जिससे उनमें हीन भावना विकसित हो जाती है।<sup>1</sup>

विकलांग व्यक्तियों के अधिकार (RPWD) अधिनियम, 2016 प्रभावी उपाय करने के लिए उपयुक्त सरकारों पर जिम्मेदारी डाली गयी है कि विकलांग व्यक्ति दूसरों के साथ समान रूप से अपने अधिकारों का आनंद ले, साथ ही अधिनियम विकलांग व्यक्तियों के खिलाफ किए गए अपराधों के लिए दण्ड का प्रावधान भी करता है तथा विकलांग व्यक्तियों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय और राज्य निधि का निर्माण आदि। अधिनियम के अनुसार 21 विकलांगों की सूची है : अंधापन, कम दृष्टि, कुष्ठ रोग, श्रवण दोष, लोकोमोटर विकलांगता, बौनापन, बौद्धिक अक्षमता, मानसिक बिमारी, ऑटिज्म स्पेक्ट्रम डिसऑर्डर, मस्तिष्क पक्षाघात, मांसपेशीय दुर्विकास, पुरानी स्नायविक स्थिति, विशिष्ट सीखने की अक्षमता, मल्टीपल स्क्लेरोसिस, भाषण और भाषा विकलांगता, थैलेसीमिया, हीमोफिलिया, सिकल सेल रोग, बधिर-दृष्टिहीनता सहित बहु-विकलांगता, एसिड अटैक पीड़िता, पार्किंसंस रोग।<sup>2</sup> अंधापन दृष्टि की हानि से जुड़ी ऐसी दिवक्त है, जिसको सामान्य चश्में, कॉन्टेक्ट लेंस, दवाओं और सर्जरी से भी ठीक नहीं किया जा सकता। यह स्थिति किसी व्यक्ति के रोजमर्रा के जीवन को कुप्रभावित करती है। इस अवस्था में व्यक्ति कुछ भी नहीं देख पाता, यहां तक की उसे उजाला तक भी नजर नहीं आता। नेत्र विकार वाले लगभग 15% लोगों में कुल अंधापन होता है। आमतौर पर इस्तेमाल किया जाने वाला एक अन्य शब्द एक दृश्य हानि है, जिसका वर्णन उन लोगों के लिए किया जाता है जिनकी घटी हुई दृश्य क्षमता दैनिक जीवन की अपनी गतिविधियों को करने की क्षमता में हस्तक्षेप करती है। एक व्यक्ति को कानूनी रूप से अंधा माना जाता है यदि उसके पास 20/200 की केंद्रीय दृश्य तीक्ष्णता है। दुनिया के 37 मिलियन अंधे

लोगों में से अनुमानित 90% विकासशील देशों में रहते हैं। उनमें से लगभग 15 मिलियन भारत में रहते हैं, यह संख्या 2007 के बाद से दोगुनी होकर किसी भी देश में सबसे अधिक संख्या है। ब्रेल साक्षरता दर केवल 1% है, जो नियमित साक्षरता दर 77.7% से बहुत कम है। यह एक महत्वपूर्ण समस्या प्रस्तुत करता है। ब्रेल शिक्षा के बिना, दृष्टिबाधित लोगों के जीवन की गुणवत्ता में काफी कमी आई है। ब्रेल साक्षरता के बिना नेत्रहीन लोग अक्सर लिखित संचार को समझने या उसका उपयोग करने में असमर्थ होते हैं। नतीजतन, उन्हें पढ़ने और लिखने के लिए एक दुभाषिया की आवश्यकता होती है, जो उनकी रोजगार क्षमता को सीमित कर सकता है। दृष्टिबाधित शिक्षक एक कठिन लड़ाई लड़ रहे हैं। वे विशेष बी.एड डिग्री श्रेणी के तहत योग्य हो सकते हैं, लेकिन नौकरियों के लिए विचार नहीं किया जाता है। जो दृष्टिहीन व्यक्ति हैं, जिन्होंने नेत्रहीन छात्रों को पढ़ाने के लिए विशेष प्रशिक्षण प्राप्त किया है उनका पाठ्यक्रम को या तो भारतीय पुनर्वास परिषद (आरसीआई) द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं है या उन्हें कई वर्षों से वेतन नहीं मिला है। राज्य सरकार ने हाल ही में 114 व्यक्तियों को नियुक्त किया है, जिनमें से 27 विकलांग व्यक्ति हैं। विशेष शिक्षा के प्रशिक्षित शिक्षकों की भारी कमी को दूर करने के लिए, IAEF भारत के शिक्षकों को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रशंसित पर्किन्स स्कूल फॉर द ब्लाइंड (1829 में बोस्टन में स्थापित हेलेन केलर को शिक्षित करने का श्रेय) में वार्षिक शैक्षिक प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए प्रायोजित करता है और अपनी नई शिक्षा को लागू करता है। IAEF चेन्नई स्थित एक गैर-लाभकारी संगठन, विद्या वृक्ष के माध्यम से पूरे भारत में दृष्टिबाधित बच्चों को यूनिवर्सल ब्रेल किट वितरित करता है। किट का निर्माण वर्थट्रस्ट, इंक. (चेन्नई) द्वारा किया जाता है। ब्रेल शिक्षा नेत्रहीन लोगों को अपनी साक्षरता, स्वतंत्रता और रोजगार क्षमता बढ़ाने की अनुमति देती है। दुभाषिए की आवश्यकता के बजाय, वे स्वयं पढ़ने और लिखने दोनों में सक्षम हैं। विशेष रूप से ग्रामीण भारत में, जहां टेक्स्ट-टू-स्पीच डिवाइस या स्क्रीन रीडर जैसी सहायक तकनीक इतनी सामान्य नहीं है। थिंकरबेल लैब्स दृष्टिबाधित लोगों के लिए एक ई-लर्निंग कंपनी है जो दुनिया भर में ब्रेल साक्षरता दर में सुधार करने में मदद करने के लिए काम करती है। इसने दुनिया का पहला ब्रेल साक्षरता उपकरण बनाया, जिसे एनी कहा जाता है। थिंकरबेल लैब्स ने नेत्रहीन बच्चों के लिए मौजूदा स्कूलों में भारत भर में 20 "एनी स्मार्ट क्लासेस" स्थापित की हैं। भारत में 15 मिलियन नेत्रहीन लोगों को ब्रेल शिक्षा प्रदान करने के लिए और अधिक प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। ये परियोजनाएं देश में कुल आवश्यकता के सापेक्ष छोटे पैमाने पर हैं, लेकिन वे हर दृष्टिबाधित व्यक्ति को ब्रेल शिक्षा देने के लक्ष्य की एक आशाजनक शुरुआत हैं, जिसकी उन्हें सफल होने के लिए आवश्यकता है।<sup>3</sup>

दृष्टिहीन शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण महाविद्यालय की स्थापना वर्ष 1981 में की गई थी और यह DED (VI) में डिग्री प्रदान करता है। इस कोर्स को भारतीय पुनर्वास परिषद द्वारा मान्यता प्राप्त है, और परीक्षाएं मणिपाल विश्वविद्यालय द्वारा

आयोजित की जाती हैं। इस विभाग का उद्देश्य दृष्टिबाधित के क्षेत्र में विशेष शिक्षकों को शिक्षित और प्रशिक्षित करना है, जिससे वे दृष्टिबाधित छात्रों को बेहतर और अधिक प्रभावी तरीके से पढ़ाने में सक्षम हो सकें। प्रशिक्षुओं को यहां सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों तरह की शिक्षा प्रदान की जाती है। प्रदान किए गए पाठ्यक्रम के विभिन्न घटक व्याख्यान, प्रदर्शन, परियोजना कार्य और विभिन्न सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में भागीदारी हैं। ब्रेल में प्रशिक्षण और गतिशीलता प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाता है। नेशनल एसोसिएशन फॉर द ब्लाइंड, इंडिया का इतिहास भी 1947 में शुरू हुआ था। द नेशनल एसोसिएशन फॉर द ब्लाइंड सभी आयु समूहों के दृष्टिबाधित लोगों के साथ काम करता है, और कई कार्यक्रम चलाता है जो दृष्टिबाधित बच्चों और वयस्कों को एकीकृत शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने से लेकर प्रमाणित पाठ्यक्रम डिजाइन करने और ऑडियो पुस्तकों की रिकॉर्डिंग तक है। एनएबी का उद्देश्य नेत्रहीन लोगों को नियमित जीवन में फिर से एकीकृत करना है, और हजारों लोगों के जीवन को छूना जारी रखा है। "नेशनल फेडरेशन ऑफ द ब्लाइंड", "द वॉयस ऑफ द ब्लाइंड" भारत में नेत्रहीनों का सबसे बड़ा स्वयं सहायता संगठन है। यह "अंधों को रहने दो, नेत्रहीनों का नेतृत्व करो" के दर्शन पर आधारित है।

पीएम नरेंद्र मोदी द्वारा शुरू Department of empowerment of persons with disabilities (Divyangjan) सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय में विकलांग व्यक्तियों के अधिकारिता विभाग विकलांग व्यक्तियों के सशक्तिकरण की सुविधा प्रदान करता है।

### दृष्टिहीन लोगों की चुनौतियां

दृष्टिहीन से शिक्षक के सामने कई चुनौतियां होती हैं जो उनके शिक्षण प्रक्रिया को गंभीर रूप से प्रभावित करती है। शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्हें बहुत कम रोजगार अवसर प्रदान होते हैं। अंधे लोग अपने काम करने के तरीके के साथ एक सामान्य जीवन जीते हैं। लेकिन, दुर्गम इंफ्रास्ट्रक्चर और सामाजिक चुनौतियों के कारण उन्हें परेशानी का सामना जरूर करना पड़ता है। दृष्टिहीन लोगों को सुलभ स्वरूपों में अच्छी पठन सामग्री खोजने में कठिन समय लगता है। भारत में लाखों लोग अंधे हैं, लेकिन हमारे पास ब्रेल में उचित पाठ्यपुस्तकें तक नहीं हैं, उपन्यास और अन्य मनोरंजक पठन सामग्री तो दूर की बात है। इंटरनेट, सूचना और पठन सामग्री का खजाना, भी ज्यादातर दृष्टिहीन लोगों के लिए दुर्गम है। भले ही एक दृष्टिहीन व्यक्ति स्क्रीन रीडिंग सॉफ्टवेयर का उपयोग कर सकता है, लेकिन यदि वेबसाइटों को उसके अनुसार डिजाइन नहीं किया गया है तो यह इंटरनेट सर्फिंग के अनुभव को बहुत आसान नहीं बनाता है। नेत्रहीन व्यक्ति चित्रों के माध्यम से जो कुछ भी दर्शाया गया है उसे समझने के लिए छवि विवरण पर निर्भर करता है। लेकिन ज्यादातर समय, वेबसाइटें स्पष्ट छवि विवरण प्रदान नहीं करती हैं। दृष्टिहीन

शिक्षकों की चुनौतियों को इस प्रकार समझा जा सकता है—

- देखने की समस्या,
- लोगों पर विश्वास करने की समस्या,
- अपने कार्य के लिए लोगों पर निर्भरता की समस्या,
- ब्रेल पाठ्यपुस्तक का आभाव,
- विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए प्रयाप्त शिक्षण और सीखने का आभाव,
- आधुनिक तरीकों से शिक्षित करने के लिए आधुनिक तकनीकों के बारे में विशेषज्ञ बनने की चुनौती,
- विद्यार्थियों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान न दे पाने की समस्या,
- पठन सामग्री खोजने व सुनने की समस्या,
- शारीरिक अक्षमता के कारण लोगों की मानसिकता से जूझने की समस्या,
- सामाजिक परेशानियां,
- ब्रेल कौशल का आभाव,
- नयी जगह जाने पर वहां के आधारभूत संरचना को समझने, भापने तथा उसके साथ संतुलन बनाने की समस्या आदि।

दृष्टिहीन शिक्षकों को रोजगार संबंधित अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है उसके बाबजूद हमारे समाज में ऐसे कई दृष्टिहीन शिक्षक हैं जो शिक्षा के क्षेत्र में मील का पत्थर साबित हो रहे हैं। अपनी अंतर्दृष्टि के माध्यम से वे बच्चों में शिक्षा का ज्ञान फैला रहे हैं।

### निष्कर्ष

यह अध्ययन शिक्षा के क्षेत्र में सेवारत दृष्टिहीन शिक्षकों द्वारा सामना किए जाने वाले विभिन्न मुद्दों, समस्याओं और चुनौतियों की पहचान करता है। यह कहा जा सकता है कि दृष्टिहीनता सबसे चुनौतीपूर्ण समस्याओं में से एक है जो बड़े पैमाने पर लोगों के करियर की प्रगति में बाधा डालती है। अध्यापन पेशा अध्यापन के लिए एक गंभीर समस्या है क्योंकि शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक और छात्रों के बीच कक्षा अक्षमता वाले लोग अक्सर सामान्य लोगों की तरह विभिन्न कार्यों को करने में असफल हो जाते हैं। हालाँकि, यह भी देखा गया है कि अंधे लोग अक्सर समाज की बाधाओं को हरा देते हैं और सभी कठिनाइयों और चुनौतियों के बाबजूद अपना रास्ता खोज लेते हैं। अध्यापन के पेशे में भी दृष्टिहीनता एक बहुत गंभीर समस्या है क्योंकि शिक्षण में शिक्षक और छात्र के बीच परस्पर क्रिया और कक्षा का संचालन और अन्य शैक्षिक गतिविधियाँ शामिल होती हैं जो शिक्षक के देखने में सक्षम न होने पर प्रभावित होती हैं। इसके आलावा, नेत्रहीन शिक्षक जानकारी के विश्वसनीय स्रोतों तक पहुँच प्राप्त करने में सक्षम नहीं हो सकते हैं, अगर

उनके पास कोई विश्वसनीय व्यक्ति नहीं हैं। शिक्षक की किसी अन्य व्यक्ति पर निर्भरता भी उनके शिक्षण अभ्यास में चुनौतियाँ है। फिर भी दृष्टिहीन लोगों को आमतौर पर अध्यापन अभ्यास में और बड़े उत्साह और भक्ति के साथ लगे दिखते हैं। अब तक नेत्रहीन शिक्षक को समाज की नींव को पोषण देने में बहुत रचनात्मक भूमिका निभाते हुए देखा गया है। ऐसे शिक्षक एक नियमित शिक्षक के समान मानक के साथ अपने कर्तव्यों का पालन कर रहे हैं। फिर भी कई चुनौतियाँ और समस्याएँ हैं जिनका सामना नेत्रहीन शिक्षकों को अपने काम के प्रदर्शन में करना पड़ता है। नेत्रहीन शिक्षकों के अधिकारों को लेकर लोगों को और जागरूक करने की जरूरत है। उन्हें दृष्टिहीन शिक्षकों की भावनाओं और अपेक्षाओं के प्रति संवेदनशील होने की जरूरत है। इसके अतिरिक्त सरकारी स्तर पर दृष्टिबाधित शिक्षकों को उनके काम को आगे बढ़ाने के लिए सुविधाएं बढ़ाने की आवश्यकता है। शिक्षकों के शिक्षण अनुभव को बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीक का उपयोग अनिवार्य है। सरकार को ऐसे शिक्षकों के लिए सहायक नियुक्त करने की आवश्यकता है ताकि उन्हें सहायता प्राप्त हो सकें। पुरे देश में ब्रेल की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाये जाने चाहिए और विभिन्न विषयों में शिक्षण कौशल को बढ़ाने के लिए आयोजित विभिन्न सेमिनारों और कार्यशालाओं में दृष्टिहीन शिक्षकों को शामिल किया जाना चाहिए। समाज को इस तरफ ध्यान देने की आवश्यकता है।

### संदर्भ

1. Kumar, A. (2012). *Trapped between Ableism and Neoliberalism: Critical Reflections on Disability and employment in India*. <https://dsq-sds.org>.
2. <https://megscpwd.gov.in>
3. <https://en.wikipedia.org>
4. Flanagan, P. J. (1996). *Automated training and braille reading*. *New Outlook for the Blind*, 60, 141-146.
5. Brothers, R. J. *Learning through listening: A review of the relevant factors*. *New Outlook for the Blind*, 65, 224-231, 1971.
6. Sujatha, R. *Blind teachers struggle without course recognition*, 2013. *THE HINDU Report*.
7. Parker, A. T., & Pogrund, R. L. (2009). *A Review of Research on the Literacy of Students with Visual Impairments and Additional Disabilities*. *Journal of Visual Impairment & Blindness*, 103 (10), 635-648.

**Paper Received : 31 Jan., 2026**

**Paper Accepted : 18 Feb., 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## गठबंधन सरकार में क्षेत्रीय दलों की भूमिका : भारतीय राजनीति का संरचनात्मक परिवर्तन

सुषमा कुमारी \*

डॉ० हरिशचंद्र प्रसाद यादव \*\*

### सारांश

यह शोध आलेख स्वतंत्रता के बाद भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में क्षेत्रीय दलों की बढ़ती भूमिका का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। प्रारंभिक वर्षों में भारतीय राजनीति में कांग्रेस के नेतृत्व में एकदलीय वर्चस्व रहा, लेकिन 1989 के बाद गठबंधन सरकारों का उदय हुआ, जिसने क्षेत्रीय दलों को राष्ट्रीय राजनीति के केंद्र में ला दिया। 2024 के लोकसभा चुनावों ने इस संरचनात्मक बदलाव की पुष्टि की, जब भाजपा पूर्ण बहुमत से कम सीटें जीत सकी और तेलुगु देशम पार्टी (TDP) एवं जनता दल (यूनाइटेड) (JDU) जैसे क्षेत्रीय दल किंगमेकर की स्थिति में आ गए। शोध यह दर्शाता है कि क्षेत्रीय दलों का उदय बहुलवादी लोकतंत्र में अपरिहार्य है। ये दल राज्यों के विशेष हितों और पहचानों को राष्ट्रीय नीति में शामिल करते हैं और सहकारी संघवाद को बढ़ावा देते हैं। हालांकि, उनके उदय से शासन की स्थिरता, नीतिगत निर्णय लेने की गति और वित्तीय अनुशासन पर चुनौती आती है। निष्कर्ष यह है कि गठबंधन का नया युग सहयोग, समन्वय और राष्ट्रीय हित की सर्वोच्चता के साथ क्षेत्रीय आकांक्षाओं का संतुलन मांगता है।

**मुख्य शब्द :** गठबंधन राजनीति, क्षेत्रीय दल, किंगमेकर, भारतीय संघवाद, नीति निर्माण, 2024 चुनाव

### प्रस्तावना

भारतीय राजनीतिक विमर्श में क्षेत्रीय दलों का पुनरुत्थान एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है। भारतीय लोकतंत्र अपनी विशाल सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषाई विविधता तथा गहरे बहुदलीय ढाँचे के कारण विश्व की सबसे जटिल राजनीतिक प्रणालियों में से एक है। यह विविधता न केवल समाज और संस्कृति के स्तर पर स्पष्ट होती है, बल्कि राजनीतिक प्रतिनिधित्व और निर्णय-निर्माण के क्षेत्र में भी दिखाई देती है।

\* शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार

\*\* शोध निर्देशक, राजनीति विज्ञान विभाग, डॉ. राममनोहर लोहिया स्मारक महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के शुरुआती दशकों में भारतीय राजनीति में एकदलीय वर्चस्व रहा, जिसमें कांग्रेस का प्रभुत्व स्पष्ट रूप से दिखाई देता था। हालांकि, 1989 के बाद से गठबंधन सरकारों की प्रवृत्ति ने राजनीति की दिशा बदल दी। गठबंधन सरकारें विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच सहमति, समन्वय और संतुलन पर आधारित होती हैं, और इनका मुख्य उद्देश्य लोकतांत्रिक मूल्यों तथा संघीय ढांचे को मजबूत करना होता है। हाल ही में संपन्न 18वीं लोकसभा के चुनावों ने भारतीय राजनीतिक परिदृश्य में निर्णायक बदलाव को प्रस्तुत किया है। एक दशक तक जारी एकदलीय प्रभुत्व के बाद, जहां केंद्र में किसी एक पार्टी को स्पष्ट जनादेश मिला करता था, वर्तमान जनादेश ने गठबंधन राजनीति को फिर से सक्रिय कर दिया है। भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के नेतृत्व वाला राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (NDA) सत्ता में लौट आया, लेकिन भाजपा को पूर्ण बहुमत के लिए आवश्यक सीटों में 32 की कमी रही। इस परिप्रेक्ष्य में क्षेत्रीय दल अब केवल सहयोगी नहीं हैं, बल्कि राष्ट्रीय राजनीति में "किंगमेकर" की भूमिका निभा रहे हैं।

यह अध्ययन केंद्र की राजनीति में क्षेत्रीय दलों की संरचनात्मक, नीतिगत और संघीय भूमिका का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसका केंद्रीय तर्क यह है कि क्षेत्रीय दलों का उदय भारतीय लोकतंत्र की बहुलवादी प्रकृति की एक अपरिहार्य संरचनात्मक आवश्यकता है। ये दल न केवल राज्यों के विशिष्ट हितों और पहचानों को राष्ट्रीय नीति में शामिल करते हैं, बल्कि सहकारी संघवाद को भी प्रबल करते हैं। इस प्रकार, क्षेत्रीय दलों का योगदान लोकतांत्रिक संतुलन और नीति निर्माण में महत्वपूर्ण और बढ़ता हुआ है।

#### गठबंधन सरकार : भारतीय संदर्भ में

गठबंधन सरकार उस स्थिति में बनती है जब चुनाव में किसी एक राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं होता। ऐसी स्थिति में, समान विचारधारा वाले या राजनीतिक सत्ता साझा करने के इच्छुक कई दल मिलकर सरकार बनाने के लिए एकजुट होते हैं। यह गठबंधन चुनाव से पहले (संयुक्त घोषणापत्र के आधार पर) या चुनाव के बाद (राजनीतिक सत्ता साझा करने के उद्देश्य से) बनाया जा सकता है।

भारत जैसे बहुआयामी लोकतंत्र में, जहाँ जातीय, भाषिक और सांस्कृतिक समूहों की विविधता प्रबल है, गठबंधन सरकारों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। ये सरकारें यह दर्शाती हैं कि लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में विविधताओं के प्रति सहिष्णुता मौजूद है, और हर जाति, धर्म या संस्कृति को अपनी मांगों और आकांक्षाओं को संविधान और कानून के दायरे में शामिल करने का अवसर मिलता है।

लोकतंत्र की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि राजनीतिक दल सहनशील, जिम्मेदार और कर्तव्यनिष्ठ हों, ताकि वे उच्च आदर्शों और जन आकांक्षाओं

को पूरा करते हुए राष्ट्रीय हित में मिलकर कार्य कर सकें। इसे समझना भी आवश्यक है कि गठबंधन सरकार केवल एक अस्थायी राजनीतिक समझौता नहीं है, बल्कि भारतीय राजनीतिक ढांचे की संरचनात्मक आवश्यकता है।

चूँकि भारतीय लोकतंत्र गहरे बहुलवाद पर आधारित है और क्षेत्रीय दल विभिन्न पहचान समूहों का प्रतिनिधित्व करते हैं, इसलिए केंद्र सरकार को चलाने के लिए इन पहचानों के बीच समन्वय और संतुलन बनाना अनिवार्य हो जाता है। 2014 से 2024 की अवधि, जिसमें एक एकल दल का स्पष्ट प्रभुत्व था, एक अपवाद मात्र थी। भारतीय राजनीति की मूलभूत प्रकृति बहुलवादी है, जो गठबंधन को शासन का मानक मॉडल बनाती है। इस वास्तविकता को राष्ट्रीय दलों द्वारा स्वीकार करना आवश्यक है, ताकि वे गठबंधन को केवल अस्थायी व्यवस्था न समझकर, बल्कि दीर्घकालिक शासन रणनीति मानकर अपने कामकाज और निर्णय प्रक्रिया में आवश्यक सुधार कर सकें।

**ऐतिहासिक विकास : गठबंधन युग और क्षेत्रीय शक्ति का उदय (1989 से वर्तमान तक)**

**गठबंधन राजनीति के प्रमुख चरण (1989-2014)**

1989 के लोकसभा चुनाव ने भारतीय राजनीति में गठबंधन युग का वास्तविक आरंभ किया। कांग्रेस के दीर्घकालिक वर्चस्व के क्षरण तथा मंडल और मंदिर आंदोलनों के उभार के साथ केंद्र की राजनीति में स्थिरता समाप्त होने लगी। इस काल में केंद्र सरकारें लगातार राजनीतिक दबाव और समर्थन की अनिश्चितता का सामना करती रहीं।

**संयुक्त मोर्चा और अल्पकालिक सरकारें (1996-1998)**

1996 के लोकसभा चुनावों के बाद न तो भारतीय जनता पार्टी और न ही कांग्रेस को स्पष्ट बहुमत प्राप्त हुआ। अटल बिहारी वाजपेयी केवल 13 दिनों तक प्रधानमंत्री रह सके। इसके पश्चात 13 राजनीतिक दलों ने मिलकर संयुक्त मोर्चा (United Front) का गठन किया। इस मोर्चे ने 1996 में पहली बार सरकार बनाई, जिसके प्रधानमंत्री एच.डी. देवेगौड़ा बने, किंतु यह सरकार दीर्घकाल तक टिक नहीं सकी। बाद में इंद्र कुमार गुजराल प्रधानमंत्री बने, परंतु उनकी सरकार भी कांग्रेस द्वारा समर्थन वापस लिए जाने के कारण गिर गई।

इस चरण का ऐतिहासिक महत्व यह रहा कि क्षेत्रीय दल पहली बार राष्ट्रीय सत्ता के केंद्र में आए। समर्थन देने और वापस लेने की उनकी क्षमता ने यह स्पष्ट कर दिया कि केंद्र सरकार की स्थिरता अब क्षेत्रीय दलों की भूमिका पर निर्भर हो चुकी है।

**दीर्घकालिक गठबंधन मॉडल : NDA और UPA युग (1998-2014)**

यह चरण गठबंधन राजनीति की परिपक्वता का प्रतीक माना जाता है। 15 मई 1998 को राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (NDA) का गठन हुआ। अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में यह गठबंधन 1998 से 2004 तक अपेक्षाकृत स्थिर और प्रभावी शासन मॉडल के रूप में उभरा।

इसके विपरीत, 2004 के लोकसभा चुनावों के बाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (UPA) का गठन हुआ, जिसका उद्देश्य भाजपा के नेतृत्व वाले NDA को सत्ता से बाहर रखना था। UPA ने 2009 के चुनावों में पुनः सफलता प्राप्त की और मनमोहन सिंह लगातार दूसरी बार प्रधानमंत्री बने। इस कालखंड में क्षेत्रीय दल केवल बाहरी समर्थनकर्ता नहीं रहे, बल्कि साझा न्यूनतम कार्यक्रम (CMP) के माध्यम से पूर्ण भागीदार बनकर महत्वपूर्ण मंत्रालयों और राष्ट्रीय नीतियों को प्रभावित करने लगे।

**2014-2024 : क्षेत्रीय दलों की सीमित भूमिका और राष्ट्रीय पार्टी का प्रभुत्व**

2014 के लोकसभा चुनावों में भारतीय जनता पार्टी को स्पष्ट जनादेश प्राप्त हुआ। यह जनादेश मतदाताओं की उस इच्छा को दर्शाता था, जिसमें वे गठबंधन राजनीति की अस्थिरता से मुक्त होकर एक मजबूत और निर्णायक शासन चाहते थे। इस एक दशक के दौरान राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक जनसमर्थन के कारण क्षेत्रीय दलों की भूमिका सीमित होती चली गई। केंद्र सरकार ने स्वतंत्र रूप से निर्णय लिए, जिससे गठबंधन सहयोगियों की सौदेबाजी शक्ति काफी हद तक कम हो गई। यह अवधि इस तथ्य को दर्शाती है कि एकदलीय प्रभुत्व की स्थिति में गठबंधन की संरचनात्मक आवश्यकता अस्थायी रूप से कमजोर पड़ सकती है।

**2024 का जनादेश : क्षेत्रीय दलों की 'किंगमेकर' भूमिका में वापसी**

18वीं लोकसभा के चुनाव परिणामों ने भारतीय राजनीतिक संरचना को पुनः परिवर्तित कर दिया। छव्। ने कुल 293 सीटें प्राप्त कीं, किंतु भाजपा को केवल 240 सीटें मिलीं, जो बहुमत के आंकड़े से 32 कम थीं। इस जनादेश ने राजनीतिक स्थिरता की आशाओं के बावजूद सत्ता के विकेंद्रीकरण को प्राथमिकता देने वाली भारतीय लोकतांत्रिक संरचना की पुष्टि की। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पहली बार गठबंधन सरकार का नेतृत्व किया।

इस पुनरुत्थान चरण में आंध्र प्रदेश की तेलुगु देशम पार्टी (TDP) के चंद्रबाबू नायडू और बिहार की जनता दल (यूनाइटेड) (JDU) के नीतीश कुमार प्रमुख सहयोगी बनकर उभरे, जिन्हें "किंगमेकर" की संज्ञा दी गई। साथ ही संसद में अन्य क्षेत्रीय दलों/कृषेसे उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी और पश्चिम बंगाल में ऑल इंडिया तृणमूल कांग्रेसकृकी उपस्थिति भी सशक्त हुई।

वर्तमान परिदृश्य में क्षेत्रीय दलों की शक्ति अभूतपूर्व रूप से बढ़ी है। जहाँ 1996 में संयुक्त मोर्चा की सरकारें समर्थन वापस लेने से गिर गई थीं, वहीं 2024 में TDP और JDU का समर्थन केंद्र सरकार के अस्तित्व के लिए अनिवार्य हो गया है। यह निर्भरता उन्हें केवल सरकार गठन में ही नहीं, बल्कि पूरे कार्यकाल के दौरान नीतिगत वीटो शक्ति भी प्रदान करती है। यह स्थिति 1998 के अपेक्षाकृत स्थिर NDA मॉडल से भिन्न है, क्योंकि अब कोई भी राष्ट्रीय दल अपनी इच्छाशक्ति एकतरफा रूप से लागू नहीं कर सकता। परिणामस्वरूप शासन व्यवस्था अधिक संवेदनशील और निरंतर संवाद तथा समझौते पर आधारित हो गई है।

गठबंधन काल	अवधि (लगभग)	केंद्रीय प्रवृत्ति	क्षेत्रीय दलों की भूमिका का स्तर	शासन की प्रकृति
अस्थिरता का चरण	1989-1996	केंद्र में स्पष्ट बहुमत का अभाव, शीघ्र पतन	उच्च (सरकार बनाने/गिराने में निर्णायक वीटो)	अल्पकालिक, अनिश्चित
परिपक्व गठबंधन (NDA/UPA)	1998-2014	दीर्घकालिक गठबंधन, साझा न्यूनतम कार्यक्रम (CMP)	मध्यम से उच्च (नीति निर्माण और महत्वपूर्ण मंत्रालय में भागीदारी)	स्थिर, सहमति-आधारित
एकल दल का प्रभुत्व	2014-2024	एक राष्ट्रीय दल का स्पष्ट वर्चस्व (भाजपा)	निम्न (केंद्र स्तर पर औपचारिक सहयोगी, लेकिन कम सौदेबाजी शक्ति)	केंद्रीकृत, निर्णायक
पुनरुत्थान काल	2024-वर्तमान	केंद्र में राष्ट्रीय दल की निर्भरता, किंगमेकर (TDP/JDU) का उदय	अति उच्च (सरकार के अस्तित्व के लिए अपरिहार्य नियंत्रण)	संवेदनशील, सौदेबाजी-चालित

### सरकार गठन में निर्णायक भूमिका और शक्ति-संतुलन का तंत्र

समकालीन राजनीतिक परिदृश्य, विशेषकर 2024 के आम चुनावों के बाद, यह स्पष्ट करता है कि क्षेत्रीय दलों की भूमिका सरकार गठन में निर्णायक शक्ति के रूप में स्थापित हो चुकी है। जब कोई भी राष्ट्रीय दल स्पष्ट बहुमत प्राप्त करने में असफल रहता है, तब क्षेत्रीय दल "किंगमेकर" की स्थिति में आ जाते हैं। ऐसी स्थिति में उनका समर्थन मात्र संख्यात्मक सहयोग नहीं होता, बल्कि वह शर्तों, मांगों और नीतिगत आश्वासनों से जुड़ा होता है।

क्षेत्रीय दल अपने संसदीय समर्थन को सौदेबाजी के एक सशक्त उपकरण के रूप में प्रयोग करते हैं। मंत्रालयों में भागीदारी, विशेष राज्य परियोजनाओं की स्वीकृति, वित्तीय संसाधनों का आवंटन, अथवा राज्य-विशेष से जुड़े संवेदनशील मुद्दों पर नीतिगत रुखकृये सभी क्षेत्रीय दलों की बातचीत के प्रमुख आयाम होते हैं। इस प्रक्रिया में राष्ट्रीय दलों को अपने एजेंडे में लचीलापन लाना पड़ता है, जिससे केंद्रीकृत राजनीतिक प्रभुत्व को चुनौती मिलती है।

### नीति निर्माण और एजेंडा-सेटिंग पर क्षेत्रीय दलों का प्रभाव

गठबंधन सरकारों में क्षेत्रीय दलों की भूमिका केवल सरकार के अस्तित्व को बनाए रखने तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वे राष्ट्रीय नीति-निर्माण की दिशा और प्राथमिकताओं को भी गहराई से प्रभावित करते हैं। क्षेत्रीय दलों का मूल राजनीतिक उद्देश्य स्थानीय, क्षेत्रीय और राज्य-विशिष्ट हितों को राष्ट्रीय नीति के ढाँचे में सम्मिलित कराना होता है। इस प्रक्रिया के माध्यम से वे यह सुनिश्चित करने का प्रयास करते हैं कि केंद्र द्वारा निर्मित नीतियाँ केवल एकरूप राष्ट्रीय दृष्टिकोण को ही नहीं, बल्कि विभिन्न राज्यों की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विशिष्टताओं को भी प्रतिबिंबित करें। व्यावहारिक राजनीति में, क्षेत्रीय दल अपने संसदीय समर्थन को नीतिगत सौदेबाजी के साधन के रूप में उपयोग करते हैं। उदाहरणस्वरूप, कोई प्रभावशाली क्षेत्रीय दल अपने राज्य के लिए विशेष वित्तीय पैकेज, सिंचाई परियोजनाओं, अवसंरचना विकास या विशेष प्रशासनिक दर्जे की माँग को सरकार को समर्थन देने की शर्त बना सकता है। ऐसी परिस्थितियों में केंद्र सरकार के लिए समान रूप से लागू होने वाली कठोर राष्ट्रीय नीतियों को लागू करना कठिन हो जाता है। यह प्रक्रिया भारतीय संघवाद को केवल एक प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं रखती, बल्कि राज्यों की शिकायतों, अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को राष्ट्रीय राजनीतिक विमर्श के केंद्र में ले आती है। परिणामस्वरूप, भारतीय संघवाद अधिक संवादात्मक, सहकारी और राजनीतिक रूप से सक्रिय स्वरूप ग्रहण करता है।

### साझा न्यूनतम कार्यक्रम (CMP) : नीति समन्वय का औपचारिक तंत्र

गठबंधन सरकारों का वैचारिक और नीतिगत आधार साझा न्यूनतम कार्यक्रम (Common Minimum Programme – CMP) होता है। CMP एक ऐसा औपचारिक दस्तावेज है, जिसके माध्यम से गठबंधन में शामिल विभिन्न दलकृ विशेषकर क्षेत्रीय दलकृ अपनी नीतिगत प्राथमिकताओं को राष्ट्रीय शासन-एजेंडा में स्थान दिलाते हैं। CMP का उद्देश्य गठबंधन के भीतर न्यूनतम सहमति के बिंदुओं को परिभाषित करना होता है, ताकि शासन की दिशा स्पष्ट रहे और आंतरिक टकराव को नियंत्रित किया जा सके। क्षेत्रीय दल इस मंच का उपयोग स्थानीय विकास, संघीय समन्वय, भ्रष्टाचार नियंत्रण, क्षेत्रीय आर्थिक प्रोत्साहन तथा सामाजिक न्याय से जुड़े मुद्दों को राष्ट्रीय नीति में सम्मिलित कराने के लिए करते हैं। हालाँकि CMP की अपनी सीमाएँ भी हैं। यह सभी घटक दलों की सभी आकांक्षाओं को पूरी तरह संतुष्ट नहीं कर सकता, जिससे गठबंधन के भीतर तनाव और असहमति की संभावना बनी रहती है।

### महत्वपूर्ण मंत्रालयों का आवंटन और राजनीतिक सौदेबाजी

गठबंधन सरकारों में सत्ता-साझेदारी का एक प्रमुख आयाम मंत्रालयों का आवंटन होता है। क्षेत्रीय दल सामान्यतः उन मंत्रालयों की माँग करते हैं जो संसाधन-समृद्ध और नीतिगत दृष्टि से प्रभावशाली होते हैं। जैसे रेलवे, सड़क परिवहन, ग्रामीण विकास, वित्त अथवा ऊर्जा। इन मंत्रालयों पर नियंत्रण उन्हें अपने राज्यों के लिए नीतिगत प्राथमिकताएँ तय करने और संसाधनों के प्रवाह को प्रभावित करने की शक्ति देता है।

समर्थन बनाए रखने के लिए राजनीतिक सौदेबाजी एक निरंतर प्रक्रिया बन जाती है। यह प्रक्रिया शासन को लचीला बनाती है, किंतु साथ ही निर्णय-प्रक्रिया को जटिल भी कर देती है। राष्ट्रीय दल को अक्सर वैचारिक शुद्धता के स्थान पर व्यावहारिक सहिष्णुता अपनानी पड़ती है, जिससे शासन चल सके।

### केंद्र-राज्य संबंधों में परिवर्तन : राजकोषीय संघवाद पर दबाव

गठबंधन राजनीति का सबसे गहरा प्रभाव केंद्र-राज्य संबंधों पर दिखाई देता है। क्षेत्रीय दल राजकोषीय संघवाद से जुड़े मुद्दों — जैसे कर-राजस्व के बँटवारे, केंद्रीय योजनाओं में लचीलापन और राज्यों की वित्तीय स्वायत्तता—को राजनीतिक एजेंडा का हिस्सा बनाते हैं। वर्तमान व्यवस्था में केंद्र सरकार के पास व्यापक कराधान शक्तियाँ हैं, जबकि राज्यों को अपेक्षाकृत सीमित संसाधन उपलब्ध होते हैं। क्षेत्रीय दल इस असंतुलन को चुनौती देते हुए अधिक समतुल्य वित्तीय व्यवस्था की माँग करते हैं। यह दबाव भारतीय संघवाद को अधिक सहकारी बनाने की दिशा में कार्य करता है, हालाँकि इससे केंद्र सरकार के लिए राजकोषीय अनुशासन बनाए रखना एक चुनौती बन जाता है।

### भारतीय संघवाद और शासन पर क्षेत्रीय दलों का समग्र प्रभाव

गठबंधन शासन में क्षेत्रीय दलों की भूमिका द्विपक्षीय प्रभाव उत्पन्न करती है—एक ओर लोकतंत्र को अधिक समावेशी बनाती है, वहीं दूसरी ओर शासन-प्रक्रिया को जटिल भी करती है।

### सकारात्मक योगदान : समावेशन और लोकतांत्रिक सुदृढ़ीकरण

क्षेत्रीय दल भारतीय लोकतंत्र के समावेशी चरित्र को सशक्त करते हैं। वे विविध जातीय, भाषिक और सांस्कृतिक समूहों की आकांक्षाओं को संवैधानिक ढाँचे के भीतर राजनीतिक अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। वंचित या कम प्रतिनिधित्व वाले समुदायों की आवाज को राष्ट्रीय राजनीति तक पहुँचाने में क्षेत्रीय दलों की भूमिका निर्णायक रही है।

### सहकारी संघवाद को प्रोत्साहन

क्षेत्रीय दलों के दबाव के कारण केंद्र सरकार को राज्यों के प्रति अधिक संवेदनशील होना पड़ता है। इससे सहकारी संघवाद को बढ़ावा मिलता है और केंद्र-राज्य संबंध अधिक संवादपरक बनते हैं।

### विरोधाभासी स्थिरीकरण का सिद्धांत

क्षेत्रीय दल कभी-कभी केंद्रीय स्तर पर अस्थिरता उत्पन्न करते हैं, किंतु राज्य स्तर पर वे सशक्त और स्थिर सरकारें प्रदान करते हैं। यह अस्थिरता भारत की विविध सामाजिक संरचना के राजनीतिक समावेशन की एक अनिवार्य कीमत के रूप में देखी जा सकती है, जिससे अलगाववादी प्रवृत्तियों की संभावना कम होती है।

### नकारात्मक पक्ष और शासन की चुनौतियाँ

गठबंधन राजनीति में सरकार के गिरने का निरंतर खतरा बना रहता है। इससे निर्णय-प्रक्रिया धीमी होती है और कई बार 'नीतिगत पक्षाघात' की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसके अतिरिक्त, अत्यधिक क्षेत्रीय माँगें राजकोषीय अनुशासन पर दबाव डालती हैं और उत्तरदायित्व का स्पष्ट निर्धारण कठिन हो जाता है। गठबंधन शासन में किसी नीति की विफलता के लिए किसी एक दल को जिम्मेदार ठहराना जटिल हो जाता है, जो सुशासन की दृष्टि से एक गंभीर चुनौती है।

### निष्कर्ष

भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों की भूमिका का उदय और केंद्र में गठबंधन की अनिवार्यता अब एक स्थापित वास्तविकता है। 2024 का जनादेश इस वास्तविकता की पुष्टि करता है। यह दर्शाता है कि भारतीय लोकतंत्र अब परिपक्व चरण में प्रवेश कर चुका है, जहाँ देश की गहरी सामाजिक और राजनीतिक विविधता के कारण कोई भी एकल दल पूरे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने का दावा नहीं कर सकता। क्षेत्रीय दल अब केवल स्थानीय चुनावों तक सीमित खिलाड़ी नहीं रहेय वे राष्ट्रीय नीतिगत वार्ताकार (National Policy Negotiators) बन चुके हैं। उनकी भूमिका अब केवल अपने क्षेत्र के विकास तक सीमित नहीं रही, बल्कि राष्ट्रीय विमर्श को आकार देने तक विस्तृत हो गई है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि गठबंधन का युग एक राजनीतिक मजबूरी से अधिक, भारतीय लोकतंत्र की मूलभूत बहुलवादी प्रकृति का प्रतिबिंब है। इस व्यवस्था की सफलता राजनीतिक दलों की सहनशीलता, कर्तव्यपरायणता और राष्ट्रीय उद्देश्यों के प्रति उनके समर्पण पर निर्भर करती है। 2024 का जनादेश भारत की राजनीतिक यात्रा में उस चरण की शुरुआत का प्रतीक है जहाँ सहयोग और समन्वय ही शासन का केंद्रीय सूत्र होगा।

## संदर्भ

- रामचंद्र गुहा, भारत : आजादी के बाद, पेंगुइन इंडिया, नई दिल्ली, 2017, पृ. 612-620।
- राजनी कोठारी, भारत में राजनीति, ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली, 2015, पृ. 248-260।
- योगेन्द्र यादव एवं सुहास पलशीकर, भारतीय चुनाव और लोकतंत्र, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2014, पृ. 301-315।
- ग्रानविल ऑस्टिन, भारतीय संविधानरू एक राष्ट्र का निर्माण, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2012, पृ. 428-440।
- “Coalition Politics and the 2024 Verdict”, *The Hindu*, Editorial Section, 2024.
- “Regional Parties as National Policy Negotiators”, *Economic & Political Weekly*, Vol. 59, Issue 18, 2024.
- “Coalition Era and Institutional Resilience in India”, *Observer Research Foundation (ORF), Commentary Series*, 2023.

**Paper Received : 25 Dec., 2025**

**Paper Accepted : 02 Feb., 2026**

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>

## राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मातृभाषा में शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में

यादव शशिकला कैलाश \*

### सारांश

भारत न केवल जनसंख्या की दृष्टि से बल्कि भाषाई विविधता को संजोने वाला विशाल देश है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पहला राष्ट्रीय प्रयास है। जिसमें भारतीय भाषाओं के बारे में समग्रता के साथ चिंतन किया गया है। यह नीति एक तरफ भारतीय भाषाओं के अध्ययन अध्यापन और अनुसंधान का स्वभाविक मार्ग बताने की कार्ययोजना प्रस्तुत करती है तो वहीं दूसरी तरफ मातृभाषा को शिक्षण अधिगम का माध्यम बनाने का साहसिक निर्णय लेती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति यह मानती है कि 2 से 8 वर्ष के बच्चे किसी भाषा को अच्छे से सीख और समझ सकते हैं। इसलिए यह नीति मातृभाषा में शिक्षा को बढ़ावा देने की बात करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 त्रिभाषा सूत्र को लचीले रूप में लागू करने की अनुशंसा करती है। त्रिभाषा सूत्र हमारे भारत देश की भाषा स्थिति की चुनौतियों और अवसरों को संबंधित करने का एक प्रयास है। क्योंकि यह भाषा शिक्षण से सम्बन्धित ऐसी नीति है जिसका प्राथमिक उद्देश्य भाषा शिक्षण के तहत बच्चों में बहुभाषा को बढ़ावा देना है। इस नीति का उद्देश्य बच्चों की सांस्कृतिक जड़ों की गहरी समझ को विकसित करना तथा उनके शैक्षणिक, संज्ञानात्मक और भावनात्मक विकास को बढ़ावा देना है। नई शिक्षा नीति 2020 का लक्ष्य भारतीय शिक्षा को कौशल आधारित लचीला और भविष्य के लिए तैयार बनाना है। मातृभाषा में शिक्षा बच्चों को आत्मविश्वास प्रदान करती है और उन्हें खुलकर अपनी बात कहने की स्वतंत्रता प्रदान करती है। बच्चे किसी भी अध्याय को अपनी मातृभाषा में आसानी से समझ बाते हैं। जिसके कारण उनकी सीखने में रुची बढ़ती है और शिक्षा की नींव मजबूत होती है। मातृभाषा में शिक्षा लुप्त होती भाषाओं को नया जीवन देती है। और देश की भाषाई विविधता को बनाए रखती है। मातृभाषा बच्चे की शुरुआती पढ़ाई में सीखने को और अधिक बेहतर बनाती है। तथा विद्यालयों में विद्यार्थियों की भागीदारी को भी बढ़ाती है। जिसके कारण विद्यालय से पलायन/छोड़ने वाले विद्यार्थियों की संख्या में कमी आती है।

**मूल शब्द :** मातृभाषा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, प्रशिक्षण, अस्मिता परियोजना

### प्रस्तावना

बच्चे के जन्म से ही माता और बच्चे के मध्य संवाद का संचार मातृभाषा के किसी न किसी रूप में होता रहता है। माँ चाहे संकेतो से या बोलकर बच्चे को चुप

---

\* शोध छात्रा, गृह विज्ञान विभाग, ए.एन.डी.एन.एन.एम. महाविद्यालय, सी.एस.जे.एम. विश्वविद्यालय, कानपुर

करा देती है और शांत बच्चे को कुछ न कुछ बोलने पर विवश कर देती है। इसीलिए बच्चे को कुछ भी सिखाने में जिन संकेतों और भाषाओं का प्रयोग किया जाता है उसे मातृभाषा कहा जाता है। मातृभाषा का महत्व बच्चों से संवाद स्थापित करने उनको अनुशासित करने, उनकी जरूरतों को समझने तथा उन्हें एक अच्छा नागरिक बनाने में काफी सहायक रहा है। बच्चा भी माँ के द्वारा सीखे गए मूल्यों को आदर्श मानकर आत्मसात कर लेता है और माँ को ही अपने जीवन का आदर्श बताता है। इसलिए मातृभाषा का योगदान बच्चे को आदर्श नागरिक बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देता है जो उसके घर परिवार संस्कृति और सामाजिक पहचान का आधार बनती है।

एन.ई.पी. 2020 भारत की भाषाई विविधता को ध्यान में रखते हुए एक बहुभाषिकता और द्विभाषी शिक्षा के महत्व और भारतीय भाषाओं में क्षमता निर्माण की आवश्यकता को मानती है। मातृभाषा बच्चे की शिक्षा का आधार होती है तथा बच्चे की शिक्षा में मातृभाषा का विशेष महत्व होता है। बच्चे के सर्वांगीण विकास में मातृभाषा का प्रयोग करके बच्चे को पाठ की अवधारणाओं को बेहतर ढंग से समझने तथा अपनी कक्षा में अधिक सहज महसूस करने एवं अपनी शैक्षणिक समस्याओं को आसानी से हल करने का अवसर मिलता है।

मातृभाषा बच्चों की शिक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह अधिगम को सुगम बनाने का एक मूलभूत साधन है। भाषा का सही विकास होने पर ही विद्यालय अलग-अलग समुदाय से आए हुए बच्चे अपने विचारों का आदान प्रदान करके नई चीजों को सीखते तथा समझते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता वाली समिति की सिफारिशों पर आधारित है जिसे भारत सरकार के केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने 29 जुलाई 2020 को मंजूरी दी थी और प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने इसकी घोषणा की थी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 27 अध्याय और 4 भागों में विभक्त है। इसका उद्देश्य 21वीं शदी की जरूरतों के अनुसार भारतीय शिक्षा प्रणाली में बदलाव लाना है तथा वर्ष 2030 तक सकल नामांकन अनुपात को 100 फीसदी लाने का लक्ष्य रखा गया है। इस नीति के द्वारा कम से कम कक्षा 5 तक मातृभाषा/स्थानीय भाषा को ही शिक्षा का माध्यम रखने पर विशेष जोर दिया गया है। इसमें रट्टा विद्या को खत्म करने की भी कोशिश की गई है। जिसे वर्तमान व्यवस्था की सबसे बड़ी खामी माना जाता है।

भारतीय संविधान के चौथे भाग में उल्लेखित नीति निदेशक तत्वों में कहा गया है कि प्राथमिक स्तर तक के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाए तथा 86वें संविधान संशोधन द्वारा शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाया गया है। जिसके अनुसार सरकार का यह कर्तव्य बनता है कि वह सभी बच्चों को उनकी पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना शिक्षा प्रदान करे। सरकार द्वारा उच्चतर शिक्षा में भी भारतीय भाषाओं को बढ़ावा देने के लिए अस्मिता परियोजना (2024) का शुभारम्भ किया गया है। यह योजना राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुरूप है जो कि भारत के वर्तमान शिक्षा

प्रणाली में भारतीय भाषाओं को बढ़ावा देने के लिए सरकार द्वारा की गई एक पहल है। जिसे भारत के केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा शुरु किया गया है। अस्मिता परियोजना का लक्ष्य पाँच वर्षों के भीतर 22 भारतीय भाषाओं में एक-एक हजार पुस्तकें तैयार करना है। जिसके परिणामस्वरूप कुल 22000 पुस्तकें भारतीय भाषाओं में तैयार होंगी।

भारतीय भाषाओं पर बल एन.ई.पी की प्रमुख विशेषता है। 108 पृष्ठों वाले राष्ट्रीय शिक्षा नीति के परिचय में ही जिन आधार सिद्धान्तों का उल्लेख है उनमें बहुभाषिकता और अध्ययन अध्यापन के कार्य में भाषा की शक्ति को प्रोत्साहन देना भी शामिल है। इस प्रावधान को देखते हुए स्कूली शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक में भारतीय भाषाओं के अध्यापन के साथ-साथ भारतीय भाषाओं में अध्यापन पर बल दिया गया है। आज इंग्लैण्ड, अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस, इटली, जापान, कोरिया से लेकर चीन जैसे विकसित देशों में स्कूली शिक्षा मातृभाषास्थानीय भाषा में होती है। यहाँ तक कि मातृभाषा में शिक्षा की उपयोगिता को देखते हुए उच्चतर शिक्षा का माध्यम भी इन देशों में आमतौर पर उस देश की अपनी भाषा होती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति भी भारतीय भाषाओं में उच्चतर शिक्षा की वकालत करता है। इसलिए इसमें अधिक से अधिक डिग्री पाठ्यक्रमों को भारतीय भाषाओं अथवा द्विभाषी रूप में पढ़ाये जाने की सिफारिश किया गया है। इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान करना तथा आजीवन सीखने के अवसरों को बढ़ावा देना है।

### साहित्य का पुनरावलोकन

1. डॉ. दास, रतन कुमार (2025) : ए स्टडी ऑफ मदर टंग इन एजुकेशन ऐज पर एन ई पी 2020 ने अपने शोध पत्र में उल्लेखित किया है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी हमेशा देश को आत्मनिर्भर बनाने और 50 लाख करोड़ अर्थव्यवस्था तक पहुँचने पर जोर देते हैं। इसके लिए मिलकर कोशिश करने और भविष्य की चुनौतियों का डटकर सामना करने के लिए तैयार युवा कार्य बल की जरूरत है ताकि सतत विकाश हो सके। मातृभाषा का उपयोग उन तरीकों में से एक है जो हर विद्यार्थी के लिए अच्छी शिक्षा और जिंदगी भर सीखने पर ध्यान देता है ताकि वह एक अच्छा नागरिक बनकर अपने समुदाय में योगदान देने के लिए आवश्यक कौशल, ज्ञान और मूल्य हासिल कर सके। इससे पिछड़े और जरूरतमंद लोगों, अल्पसंख्यकों और ग्रामीण आबादी को ज्यादा अवसर प्राप्त होंगे।
2. बगवान, सुनिल कुमार (2025) : इम्पावरिंग लिटरेसी धरू लैंग्वेज एण्ड कल्चर, द रोल ऑफ टीचर डेवलेपमेन्ट इन मल्टी-लिंगुअल क्लासरूम ऑफ छत्तीसगढ़ ने अपने शोध पत्र में घरेलू भाषा को शिक्षा का प्राथमिक माध्यम बनाने पर जोर दिया है। इनका मानना है कि बच्चों की मातृभाषा या स्थानीय भाषा को औपचारिक रूप से पढ़ाई का माध्यम बनाया जाना चाहिए जहाँ पर हिंदी दूसरी

भाषा के रूप में उपयोग की जा रही है। राज्य स्तरीय शिक्षक प्रशिक्षण में मातृभाषा आधारित बहुभाषी शिक्षण को अनिवार्य विषय के रूप बनाया जाना चाहिए जिससे शिक्षक अपनी कक्षा में बच्चों की घरेलू भाषा का इस्तेमाल कर सकें तथा बच्चों की भाषा को और अधिक विकसित कर सकें।

3. वी. सुषमा, डॉ. के. चार्ले गोडविन (2022) : मल्टी डिसीप्लीनरी एप्रोच एण्ड द रोल ऑफ नेशनल एजुकेशन पॉलिसी (एन ई पी) एण्ड इट्स इम्पेसिस ऑन बाइलिंगुअल टीचिंग एण्ड लर्निंग ने अपने शोध पत्र में बताया है कि भाषा का इस्तेमाल हमेशा समाज के हर हिस्से में ताकत के एक साधन के तौर पर किया जाता है, चाहे वह शिक्षा हो, धर्म हो या मीडिया हो। अमीर और ताकतवर लोगों की भाषा को अक्सर बाकी सभी तरह की भाषाओं से उच्च स्तरीय बना दिया जाता है। ठीक वैसे ही जैसे बच्चों पर विद्यालय परिधान को एक तरह का बना दिया जाता है जिससे वे सभी एक जैसे दिखें।
4. डॉ. मीना, महेन्द्र सिंह (2015) : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भारतीय भाषाएँ ने अपने शोध पत्र में उल्लेखित किया है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस बात को रेखांकित करती है कि भाषा संरक्षण को लेकर पूर्व में कोई ठोस उपाय नहीं किये गये दुर्भाग्य से भारतीय भाषाओं को समुचित ध्यान और देखभाल नहीं मिल पाया जिसके कारण देश ने विगत 50 वर्षों में 220 भाषाओं को खो दिया। युनेस्को ने 197 भारतीय भाषाओं को लुप्तप्राय घोषित कर दिया है। बहुत-सी भाषाएँ विलुप्त होने के कगार पर हैं विशेषतः वे भाषाएँ जिनकी लिपि नहीं है। जब किसी समुदाय या जनजाति के उस भाषा के बोलने वाले वरिष्ठ व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तब अक्सर वह भाषा भी उस व्यक्ति के साथ समाप्त हो जाती है।
5. डॉ. मनडावकर, पवन : 'रोल ऑफ लैंग्वेज इन नेशनल एजुकेशन सिस्टम ऑफ इण्डिया' ने अपने लेख में उल्लेखित किया है कि माता पिता अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम विद्यालयों में भेजते हैं चाहे वे किसी भी स्तर की पढ़ाई दें क्योंकि उन्हें लगता है कि अंग्रेजी भाषा पर अच्छी पकड़ होने से उनके बच्चों को जीवन में सफल होने में मदद मिलेगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में पढ़ाई का माध्यम बदलने कि योजना के बारे में विस्तृत नहीं बताया गया है। बहुभाषा शिक्षा को सफल बनाने के लिए पढ़ाई लिखाई में बदलाव और प्रशिक्षित शिक्षक होने चाहिए जो कक्षा में कई भाषाओं को समझ सकें और मातृभाषा में पढ़ा सकें। एन ई पी के अनुसार क्षेत्रीय भाषाओं का इस्तेमाल करने का मकसद सिर्फ बच्चे के सीखने के नतीजों को बेहतर बनाना नहीं है बल्कि भारत के बारे में जानकारी देना भी है। इसे 'राष्ट्रीय गौरव, आत्मविश्वास, आत्म ज्ञान, सहयोग और एकीकरण' के लिए जरूरी माना जाता है।

### शोध अभिकल्प

प्रस्तुत शोध के अध्ययन हेतु शोध विधि के रूप में गुणात्मक विधि का प्रयोग किया गया है तथा अपने शोध को और अधिक व्यापक करने हेतु द्वितीयक आंकड़ों के रूप में प्रकाशित पत्रिकाओं, लेख, गुगल स्कॉलर तथा इण्टरनेट पर उपलब्ध सामग्रीयों से भी सहायता ली गई है।

### उद्देश्य

1. बच्चों का स्थानीय भाषा/मातृभाषा में पढ़ाई के प्रभाव का अध्ययन।
2. मातृभाषा में निपुण शिक्षकों की उपलब्धता का अध्ययन।
3. बच्चों द्वारा अपनी मातृभाषा में सीखने में ज्यादा सहजता का अध्ययन।

### निष्कर्ष

भारत में कई कदम उठाए जाने के बावजूद कुशल भाषा शिक्षकों की बहुत कमी है। जिसके लिए भाषा सिखाने के तरीके को और भी बेहतर बनाने की आवश्यकता है लेकिन उसके लिए नई किताबों, भाषा में निपुण शिक्षकों की नियुक्ति, नई शिक्षक प्रशिक्षण विधियाँ और ज्यादा वित्तीय पोषक या अनुदान की आवश्यकता है। बच्चों को मातृभाषा में शिक्षा न केवल पढ़ने और लिखने का हुनर बढ़ाता है। बल्कि उनके आत्मविश्वास और समझ को भी बढ़ाता है। जब विद्यालय शिक्षक मातृभाषा में लोक कथाएँ, कविताएँ और कहानियाँ पढ़ाते हैं। तब कक्षा और भी ज्यादा समावेशी तथा असरदार बनती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रावधानों के अनुसार प्राथमिक शिक्षा में स्थानीय भाषा का समावेश सही दिशा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम है। जिसमें आनेवाली चुनौतियों से निपटने के लिए सभी हितधारकों को विद्यालय, अभिभावक तथा समाज और सरकार को शामिल करते हुए इसे समग्र रूप से लागू किया जा सकता है।

### संदर्भ

- डॉ. दास, रतन कुमार (2025) : ए स्टडी ऑफ मदर टंग इन एजुकेशन ऐज पर एन ई पी 2020 [ISSN : 2584-1890]
- बगवान, सुनिल कुमार (2025) : इम्पारिंग लिटरेसी : लैंग्वेज एण्ड कल्चर द रोल ऑफ टीचर डेवलेपमेन्ट इन मल्टीलिंगुअल क्लासरूम ऑफ छत्तीसगढ़ [E-ISSN : 2348 -1269, P-ISSN : 2349 - 5138]
- प्रोजेक्ट अस्मिता (2024) : दृष्टि आई.ए.एस

- एन सी ई आर टी (2022) : नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फॉर फाउण्डेशन स्टेज, नई दिल्ली
- वी. सुषमा, डॉ. के. चार्ले गोडविन (2022) : मल्टी डिस्सीप्लीनरी एप्रोच एण्ड द रोल ऑफ नेशनल एजुकेशन पॉलिसी (एन ई पी) एण्ड इट्स इम्पेसिस ऑन बाइलिंगुअल टीचिंग एण्ड लर्निंग [ISSN:2321-3809]
- डॉ. वाडेकर, भारती, डॉ. फुलारी, शरद, एम. आर विश्वकर्मा, भानुप्रताप (2022) : "एन ई पी टु विल्ड अप इण्डियन लैंग्वेजेस, आर्ट्स एण्ड कल्चर" [ISSN:2581-9429]
- प्रो. कुमार, निरंजन (2021) : एन ई पी 2020 के भाषायी प्रावधान और राष्ट्रहित पुनर्विचार की आवश्यकता" हिंदी विभाग, कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय
- डॉ. शर्मा, जयंत कार (2021) : नेशनल एजुकेशन पॉलिसी 2020 लैंग्वेज पर्सपेक्टिव [ISSN:2394-6407 (Print), ISSN:2394-6415 (Online)]
- एन ई पी (2020) : नेशनल एजुकेशन पॉलिसी 2020 मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन
- डॉ. मीणा महेन्द्र सिंह (2015) : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भारतीय भाषाएँ [ISSN:2455-5967]
- डॉ. मनडावकर, पवन : रोल ऑफ लैंग्वेज इन नेशनल एजुकेशन सिस्टम ऑफ इण्डिया
- हसीब, मसोदा, डॉ. मलिक, नविता : लैंग्वेज एक्जुजीशन इन ई.सी.सी.ई एण्ड एन ई पी 2020

*Paper Received : 31 Jan., 2026*

*Paper Accepted : 10 Feb., 2026*

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19369752>





**Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences**  
**Subscription Order Form**  
website: [www.manglamallahabad.com](http://www.manglamallahabad.com)

1. Name : .....
2. Address : .....
- Mobile No. .... e-mail : .....
3. Life Membership of Manglam Sewa Samiti - Yes/No (If yes then I.D. No. ....)
4. Type of Subscription : Individual/Institution
5. Period of Subscription : Annual/Three year's/Life time\*
6. Number of Copies Subscription : .....

Dear Editor,

Kindly acknowledge the receipt of my Subscription and state sending the issue(s) of Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences (ISSN 0976-8149) at following address.

.....  
.....  
.....

The Subscription rates are as follows : w.e.f. 31.08.21\2012

India (Rs.)	Members of Manglam Sewa Samiti	Individuals	Institutions
Single Copy	Rs. 300/-	Rs. 600/-	Rs. 750/-
Annual Copy	Rs. 500/-	Rs. 1100/-	Rs. 1500/-
Three Copy	Rs. 1500/-	Rs. 8000/-	Rs. 4500/-
Life time*	Rs. 500/-	Rs. 1100/-	Rs. 10,000/-
Other Country Members of Sewa Samiti		Individuals	Institutions
Single Copy	\$ 65	\$ 80	\$ 120
Annual Copy	\$ 120	\$ 15	\$ 240
Three Copy	\$ 360	\$ 430	\$ 720
Life time*	\$ 3000	\$ 5000	\$ 10,000

(\*For Ten Year's)

New you may deposit the Membership fee directly in Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences (ISSN : 0976-8149) Account as per Following details :-

Name of Bank : State Bank of India, Prayagraj Branch : Civil Lines, Prayagraj  
Account Holder : Manglam Sewa Samiti, Prayagraj A/c No. : 65024854963

IFSC Code : SBIN0018245

MICR Code : 211007003

Please return this form to

**Dr. Ritesh Tripathi**

**Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences**

463/359G-2 Shivam Apartment, New Mumfordganj, Prayagraj (U.P.). India 211002

website : [www.manglamallahabad.com](http://www.manglamallahabad.com)

e-mail : [tripathiritesh82@gmail.com](mailto:tripathiritesh82@gmail.com)

## Instruction for Research Paper's

- Reserach Papers are Invited Only in Hindi, Sanskrit and English with a Declaration of being Original and unpublished work.
- The Paper Must be Neaty Typed in 14 Point Size of KrutiDav-010/Times New Roman on A4 Size Paper having 1.25 inch margin of evey side with full Residential & Offical Address Mobile No. and email.
- The Research Paper Should have the Maximum Limit of 2000 Words. It can be returned if no Summary (Maximum in 150 Words) and referenace are attached.
- Research Paper will be Published after the approval of Editorial board.
- Author Should give the References in this manner  
for Articles- Dr. Gopal Prasad, Economic Development and Panchayatiraj, Manglam Journal, Allahabad. ISSN-097-8149 Year 02 No-01 February 2011 P.17-18.  
for book- Yogendra Yadav, Electroal Politics in the time of Change: India's third Electoral Sytem 1989-99" Economic & Political Weekly Vol.34 No.34 21-28Aug.1999. P-2330-2399.
- All Right of Published Papers will be Preserved under the Nante of Editor.
- Authors may sent two copies of their Books (Under one year of its Publication) for Review in the Journal.
- The Journal will be Sent to all Personal and Institutional Members. Through general post, if some one required post be will have to pay Additional Charge for it.
- Please sent your Research Paper, C.D. and Subscription form/Membership Form at the address given below.

**Dr. RITESH TRIPATHI**



**Manglam -Half Yearly Journal**

463/359G-2 Shivam Apartment,  
New Mumfordganj, Allahabad (U.P.) India  
Mobile-+91-7398180008, +91-9044666672  
Email-tripathiritesh82@gmail.com



**Manglam- Half Yearly Journal**

1249/1A, Civil Lines-2  
(Behind-Raj Hotel) Sultanpur, (U.P.)  
Mobile-+91-9532006658